ॐ

तारादेवी पवैया ग्रथमाला का सत्ताईसवां पुष्प

श्री पंचास्तिकाय विधान

रचयिता

राजमल पवैया

मपादक

श्री डॉ. देवेन्द्र कुमार शास्त्री, नीमच

अध्यक्ष

अ भा दि. जैन विद्वत् परिषद

प्रकाशक

भरत कुमार पवैया, एम. कॉम. एल. एल बी.

सयोजक

तारादेवी पवैया ग्रथ माला, ४४ इब्राहिमपुरा, भोपाल

दि. जैन मुमुक्षु मडल, चौक भोपाल- ४६२ ००१

वीर नि. सवत - २५२१

विक्रम स. २०५१

प्रथमबार २२००

२६-१-१९९५

भारतीय गणतत्र दिवस

न्योछावर १६ रूपये

ॐ

तारादेवी प्रकाशन की गौरवशाली परम्परा में
पवैया जी की निस्पृह तूलिका से उद्भूत, बहु चर्चित
श्री तत्त्वर्थ सूत्र विधान, श्री अष्टपाहुड विधान,
श्री प्रवचनसार विधान, श्री नियमसार विधान के पश्चात्
आपके करकमलों में

श्री पंचास्तिकाय विधान

प्रस्तुत है
तत्पश्चात महिमामयी ग्रन्थराज समयसार परमागम पर

*** श्री समयसार विधान** (मुद्रणयत्र पर)

उत्सुकता से प्रतीक्षा करें
गरिमामयी पच परमागमों द्वारा अपने आत्म वैभव की पावन पवित्र झिलमिलाती झलक प्राप्त करें। स्वाध्याय के लिये अवश्य मगायें
कमनियत प्रकाशन

*** श्रीरत्नकरंड श्रावकाचार विधान**

एवं

*** परमात्म प्रकाश विधान**

धैर्य पूर्वक इंतजार करें

भावी योजना श्री षटखंडागम सत्प्ररूपणा विधान

निकट भविष्य में आपके कर कमलों की शोभा बढ़ायेगा।

ॐ

प्रकाशकीय

माननीय महोदय,

वर्तमान पचम काल के आद्य आचार्य श्री कुन्कुन्द की सर्वप्रथम रचना पत्रास्तिकाय मग्रह पर आधारित यह पचास्तिकाय संग्रह विधान आपके कर कमलों में प्रस्तुत करते हुए महान प्रसन्नता है। इसके प्रकाशन की प्रेरणा सर्वाधिक श्री वीतराग विज्ञान मदिर अजमेर के सस्थापक श्री पूनम चन्द्र जी लुहाड़िया, बबंई से मिली। श्री चौधरी फूलचद जी बबई के प्रेरणात्मक पत्र मिलते रहे। फतेहपुर गुजरात के श्री अमृतभाई, श्री उमेदमल जी बडजात्या, बबई एव पीसागन (अजमेर) के श्री नेमीचद जी, दिल्ली के अहिसा मदिर के श्री प्रेमचद जी आदि महानुभाव उत्साह वर्धन करते रहे। श्री मुकुन्द भाई खारा बबई की बहुत प्रेरण रही। भोपाल के श्री उमेश चद जी, श्री विनोद चिन्मय, ब्र हेम चद जी, श्री सुरेन्द्र सौगानी का सहयोग प्रशमनीय है।

मुद्रण के लिए अयोध्या ग्राफिक के श्री नीरज भार्गव का सुलभ महयोग बहुत काम आया। सुन्दर कम्पोजिग के लि शुभ श्री आफसेट की स्वामिनी कु मजूषा जैन एव उनके अनुज श्री नीरज जैन के भी आभारी हैं। स्टेट बैक आफ इन्डिया के अधिकारी श्री पी मी जैन का अनवरत परिश्रम पर्याप्त लाभदायक रहा है। ग्रथमाला के स्थायी कोष के दाताओं को तो धन्यवाद है ही। विधानों का प्रकाशन तो उन्हीं की कृपा का फल है। सपादन के लिए अ भा दि. जैन विद्वत परिषद के अध्यक्ष श्री डॉ. देवेन्द्र कुमार ने जितना श्रम किया है वह स्तुत्य है। कोई जरा सी भी भूल न रह जाए इस का वे बड़ा ध्यान रखते है। अत. हम उनके ह्रदय से आभारी हैं। प्राक्कथन के लिए वाणीभूषण जैनरत्न श्री ज्ञानचद जी को धन्यवाद है।

हमारा आगामी प्रकाशन महिमामयी श्री ममयसार विधान शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है।

भारतीय गणतत्र दिवस
२६-१-९५

दूरभाष ५३१३०९

विनीत:-
भरत पवैया
सयोजक - ग्रन्थ माला

ॐ

श्री पंचास्तिकाय विधान

पूज्य कानजी स्वामी की अनन्य भक्त तत्त्वभावना से

ओत. प्रोत स्वर्गीय पूज्य शान्ता बेन, सोनगढ

आपकी प्ररणा मे बहुत कुछ पाया है। अत यह पचास्तिकाय विधान आपकी पुण्य स्मृति में सादर ममर्पित है

अपनी बात

श्रुत केवली आचार्य श्री भद्रबाहु के गमक शिष्य प्रथम पट्टधर आचार्य कुन्दकुन्द का सर्व प्रथम ग्रथ पचास्तिकाय सग्रह है। इसके बिना पढ़े जिनागम का ज्ञान सभव नही है। इस महान परमागम पर आधारित पचास्तिकाय सग्रह विधान आप के सामने है विधान कैसा है यह आप निर्णय करें।

मुझे तो पूरा सतोष है। इससे स्वाध्याय प्रेमी लाभ उठाएगे ही। परमागमों पर विधान लिखने का भाव उन्हें सरल भाषा में जन जन तक पहुँचाने का है। जहाँ तक मै समझता हू भव सार्थक हुआ है। श्री समयसार विधान भी तैयार है शीघ्र ही प्रकाशित होकर आपके करकमलों की शोभा बढ़ाएगा। अत में सभी प्रत्यक्ष परोक्ष बधुओं को धन्यवाद देना अपना कर्त्तव्य समझता हू। और क्या कहू।

भारत के राष्ट्रपति परम आदणीय महामहिम डा शकरदयाल शर्मा से गत ७/११/९४ को जो भेंट हुई उसमें आदणीय डा साहब ने इन विधनों के प्रकाशन पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए बहुत प्रेरणा दी। मै उनका हृदय से कृतज्ञ हू।

भारत की प्रथम महिला सौ श्रीमति विमला शर्मा धर्मपत्नी आदरणीय डा. शकर दयाल शर्मा ने भी प्रवचन सार आदि विधान देखकर बहुत प्रसन्नता व्यक्ति की और आगे लिखने की प्रेरणा दी अत उन का भी मै हृदय से आभारी हू।

वयोवद्ध विद्वान श्री प जगमोहनलाल जी शास्त्री प्रतिषठाचार्य प नाथूलाल जी शास्त्री इन्दौर प्रतिष्ठाचार्य प मोती लाल जी पाती प्रतिष्ठाचार्य प सरपन लाल जी दिवाकर हस्तिनपुर प्रतिष्ठाचार्य प पदम चद जी शास्त्री वीर सेवा मंदिर दिल्ली आदि अनेकों विद्वान ने प्रेरणा देकर प्रसन्नात व्यक्ति करते हुए उत्साह बढ़ाया। मै सभी का कृतज्ञ हूँ। डा. देवेन्द्र कुमार शास्त्री एव प. त्यागी भूषण ज्ञानचद जी का उपकार कभी नहीं भूल सकता हूँ।

भारतीय गणतत्र दिवस
२६/१/९५

विनीत,
- राजमल पवैया

प्राक्कथन

अमूर्त मुक्ति व आनन्द से ओतप्रोत वीतरागी सर्वज्ञ जिनेश्वर के मंगलमय गुणानुवाद को पूजा, भक्ति, विधान के माध्यम से गाने का शुभ भाव प्रत्येक मुक्ति पथिक का सहज आता है। वह वीतरागता के मधुर गीतों को गाकर स्वयं वीतरागता के आनंद दायक पथ पर चलकर स्वयं वीतरागी बनने का सम्यक पुरुषार्थ करता है और एक समय आता है जब वह स्वयं वीतराग विज्ञानी बनकर त्रैलोक्य पूज्य बन जाता है। निश्चित ही यही पूजा, भक्ति और विधान करने का सम्यक फल है एक भक्ति भगवान बन जाये और एक पुजारी स्वयं पूज्य बन जाये यही पूजा भक्ति का सर्वोत्कृष्ठ फल हैऔर यही जैन दर्शन की अलौकिक अपूर्व विशेषता भी है।

पूजा विधान के माध्यम से जैन दर्शन के मूलभूत सिद्धान्तो को समझकर सम्यग्दर्शन पूर्वक मुक्ति के पथ के पथिक बन सके इस पवित्र भावना व फल स्वरूप अध्यात्मिक कविवर राजमल पवैया ने जो साहसिक उपयोगी अपूर्व कदम उठाकर पूजा विधान के क्षेत्र मे जो आध्यात्मिक क्रान्ति की है, वह जैन जगत मे एक नया इतिहास बनायगी।

" वे जीव विरले ही होते है जो लीक से हटकर चले और मार्ग न भटके।" कविवर पवैया जी भी इन्ही विरल विभूतियो मे से एक है जिन्होने पूजा विधान के क्षेत्र में एक नूतन अध्याय का सफल अवतरण किया और उस पर निरन्तर अग्रसर होते जा रहे है। " सैतालीस शक्ति विधान से आरम्भ होकर श्री तत्त्वार्थसूत्र विधान, अष्टपाहुड विधान, प्रवचनसार विधान, नियमसार विधान, की सुन्दर सुमधुर रचना करते हुए अब आचार्य कुन्दकुन्द के अपूर्व ग्रन्थ पर आधारित पचास्तिकाय विधान का अवतरण कर रहे है।श्रमण संस्कृति के समर्थ आचार्य कुन्दकुन्द के पचपरमागम में पचास्तिकाय ग्रन्थ का अत्याधिक महत्वपूर्ण स्थान है।यह महान ग्रन्थ जिन सिद्धात और जिन अध्यातम का प्रवेश द्वार है। इसमे जिनागम में प्रतिष्ठित द्रव्य व्यवस्था व पदार्थ का सक्षेप में प्राथमिक परिचय दिया गया है। जिनागम में प्रतिपादित द्रव्य एव पदार्थ व्यवस्था की सम्यक् जानकारी बिना जिन सिद्धान्त और जिन अध्यातम में प्रवेश पाना सभव नही है। अत

यह पञ्चास्तिकाय सग्रह नामक ग्रन्थ सर्वप्रथम स्वाध्याय करने योग्य है।
इस ग्रन्थ के स्पष्ट रूप मे दो खण्ड है। प्रथम खण्ड (श्रुति स्कध) म षड्द्रव्य - पञ्चास्तिकाय का वर्णन है। और द्वितीय खण्ड (श्रुत स्कन्ध) में नव पादर्थ पूर्वक मोक्षमार्ग का निरूपण है। दूसरे खण्ड के अन्त में चूलिका के रूप मे तत्व के परिज्ञान पूर्वक (पञ्चास्तिकाय, षड्द्रव्य एव नव पदार्थो के यर्थाय ज्ञान पूर्वक) त्रयात्मक मार्ग मे (सम्यग्दर्शन ज्ञान व चारित्र की एकता से) कल्याण स्वरूप उत्तम मेक्ष प्राप्ति कही है। ''

इस महान ग्रन्थ में आचार्य कुन्दकुन्द रचित कुल १७३ गाथाये है और आचार्य अमृतचन्द्र एव आचार्य जयसेन द्वारा अपूर्व टीकायें की गई है।

अस महान ग्रन्थ के सार रूप में अन्त में आचार्य देव उपदेश देते है, आदेश देते है सलाह देते है, प्रेरणा देते हुए कहते है -

'' तम्हा णिव्वुदिकामो राग सव्वत्थ कुणदु मा किंचि।
सो तेण वीद रागो भविओ भवसायर तरदि ॥१७२॥

अत हे मोक्षार्थी जीवो ! कही भी किंचित भी राग मत करो, क्योंकि ऐसा करने स ही वीतराग होकर भवसागर मे पार हुआ जाता है।''

इस प्रकार ऐसे महान ग्नेथों के महान सिद्धातो को विधान के माध्यम से अत्यन्त सरल सुमधुर बनाने वाले कविवर पवैया जी जीवन में इस अन्तिम पडाव में भी अस्वस्थ्य हुए भी अत्यत लगन उत्साह उमग पर्वक मा जिनवाणी की सेवा में सलग्न है यह कोई अजूबा ही लगता है।

सभी भव्य जीव आध्यात्मिक पूजा भक्ति विधानों के माध्यम से आत्म कल्याण कर मनुष्य भव सार्थक करें और आदरणीय पवैया जी इसी प्रकार खुले दिल से स्व-पर कल्याण की पवित्र भावना से जैन साहित्य सस्कृति के भण्डार को सुसमृद्ध बनाते हुए परम कल्याण को प्राप्त हो इसी पवित्र भावना के साथ ।

२९ जनवरी १९९५
(आद्य तीर्थंकर आदिनाथ प्रभु का
निर्वाणोत्सव)

प ज्ञान चन्द्र जैन
ज्ञानानन्द निवास
किला अन्दर, विदिशा (म प्र)

संपादकीय

श्रुतधर-परम्परा केसुमेरु, द्वितीय श्रुतस्कन्ध केप्रवर्तक तथा परमागम केसंवाहक कुन्द कुन्द एसे समर्थ सारस्वत आचार्य हुए है जिन मे चारो अनुयोग स्पष्ट रूप से समाहित लक्षित होते है। ''पचास्तिकाय'' उनकी प्रथम मौलिक रचना कही जा सकती है। इस ग्रन्थ की विशेषता यह है कि इसके आधार पर ''तत्त्वार्थ सूत्र'' की रचन ा हुई। इतना ही नही सम्पूर्ण परमागमो के मूल सूत्र इस ''पचास्तिकाय सग्रह'' मे उपलब्ध होते है। इसके सूत्रो का विस्तार जैसे पूर्व परमागमो का विवचन कर वस्तुवादी आधार शिला पर जैनदर्शन की वस्तु प्ररूपणा प्रतिष्ठित की है। ''पचास्तिकाय'' मे सभी गाथाएं आचार्य कुन्दकुन्द रचित नही है इसलिये उन्होंने इसका पचास्तिकाय सग्रह नाम से उल्लेख किया है। इससे प्रतीत होता है कि आचार्य कुन्दकुन्द के पूर्ववर्ती आचार्यो की भी कतिपय गाथाएं इसमे सम्मिलित है। अत यह कहने में कोई सकोच नही है कि जिनागम मे यह ग्रन्थ प्रथम तथा द्वितीय श्रुतस्कन्ध दोनो की प्ररूपणा करने वाला शास्त्र है यथार्थ मे दोनों मे ही पाच अस्तिकाय, छह द्रव्य तथा सात तत्वो का निरूपण किया गया है। दोनो मे अन्तर यही जान पड़ता है कि प्रथम मे जहा निमित्त की मुख्यता से शुद्धाशुद्ध पदार्थो का विवेचन किया गया है वही द्वितीय श्रुतस्कन्ध मे उपादान की मुख्यता से त्रिकाली शुद्ध द्रव्यो का वर्णन किया गया है।

''पचास्तिकाय'' की मूल प्ररूपणा है सत् स्वभाव का कभी भी किसी भी स्थिति या परिस्थिति में नाश नही होता तथा असत् या अभाव की उत्पत्ति नही होती। वस्तुत बिना भाव का कोई द्रव्य नही होता और जो भी द्रव्य है वह बिना परिणाम का नही है। परिणाम से ही द्रव्य के अस्तित्व का बोध होता है।

''जीव'' को दश प्राणों वाला प्राणी कहना- यह प्रथम श्रुतस्कन्ध की प्ररूपणा है। इसी प्रकार उसे मूर्त, सोपाधिक, रूपी, अनित्य कहना उसकी एक विवक्षा है। वस्तुत. यह जीव का स्वरूप नही है। द्वितीय श्रुतस्कन्ध में द्रव्य का वर्णन उसके स्वरूप से किया गया है। यह दोनों मे महान अन्तर है। ''पचास्तिकाय'' मे इन दोनो का यथा योग्य वर्णन किया गया है। (द गा २९,३०)

वास्तव में जिसमें गुण बसते है उसे वस्तु कहते है। आचार्य कुन्दकुन्द को ज्ञानस्वभावी वस्तु का विवेचन करना इष्ट है, किन्तु वे प्राणीधारी जीव का वर्णन न करें तो चरणानुयोग का समर्थन नही हो सकेगा। अत उसे ध्यान में रख कर दोनों का वर्णन किया गया। इसी प्रकार से लोक की सघटना, वस्तु-व्यवस्था तथा वस्तु-व्यवस्था को सिद्ध करने वाली द्रव्य की सहज परिणति, वर्तना और सहज स्वाभाविक शक्ति कारण-कार्य भाव की नियामक कही गई है।

यद्यपि छहों द्रव्य एक क्षेत्र में रहते है, तथापि कोई भी द्रव्य अपनी सत्ता को कभी नही छोड़ता। यही कारण है कि विभिन्न द्रव्य परस्पर मिल कर एक दिखाई पड़ने पर भी अपने स्वभाव से स्वतन्त्र, पृथक तथा अविनाशी रहते है। लोक - व्यव्हार में जीव और उनके कर्म में एकता देखी जाती है, लेकिन वास्तव में जीव और पुद्गल अपने स्वरूप को नहीं छोड़ते है। अस्तित्व रूप सत्ता एक ही है जो सभी पदार्थों में स्थित है और जो अनन्त परिणाम लिए हुए है। जो अस्तित्व है वही सत्ता है और जो सत्ता लिए हुए है वही वस्तु है।

आचार्य कुन्द कुन्द देव ने चैतन्य स्वरूप चेतना के तीन भेदों का वर्णन किया है कर्म चेतना, कर्मफल चेतना और ज्ञानचेतना अधिकतर जीव सकल्प -विकल्पों में उलझे रहने के कारण निरन्तर विकल्पों का ताना बाना बुना करते है। जो तीव्र मोह से मलिन है और जिनकी शक्ति ज्ञानावरण से मुंद गई है वे मुख्य रूप से सुख दु.ख रूप कर्मफल का ही वेदन करते है। सभी प्रकार के स्थावर सुख दु खानुभव रूप शुभाशुभ कर्मफल को चेतते है। उसी कर्मफल को त्रस जीव इच्छा पूर्वक इष्टानिष्ट विकल्प रूप कार्य सहित चेतते है। परन्तु ज्ञानी जीव ज्ञान को ही चेतते है।

यद्यपि शुद्ध निश्चयनय से अपने ज्ञान- दर्शनादि शुद्ध भाव रूप स्वभाव का कर्ता आत्मा है, पुद्गल कर्मो का कर्ता नही है, किन्तु कर्म भी अपने स्वभाव से अपने को करता है। इस लिये अशुद्ध निश्चय से राग, द्वेष, मोह मयी स्वभाव कहे जाते है और उनका कर्ता आत्मा कहा जाता है। निमित्त नैमितिक सम्बन्ध होने के कारण जीव के कर्मोदय भाव होने में कर्मों का निमित्त है और कर्म के उत्पन्नहोने में जीव का भाव निमित्त है। स्वतन्त्र रूप से द्रव्य

कर्म का करने वाला होने से पुद्गल स्वय ही द्रव्य कर्म का कर्ता है। जीव स्वतन्त्ररूप से रागादि भाव करने से भाव कर्म का कर्ता है। जो जिस भाव का करन वाला है वह उस भाव को भोगने वाला है।

सभी द्रव्य शाश्वत अपने अपने प्रदेशा में स्थित है। वास्तव में जो अपने स्वरूप से कभी च्युत नहीं होता है वह शाश्वत नित्य है. द्रव्य स्वय असहाय है अर्थात उसे किसी भी सहायता की अपेक्षा नही है। लोक में धर्मादि द्रव्य उदासीन सहायक मात्र है। यथार्थ में सभी गतिस्थिति मान पदार्थ अपन परिणामों से निश्चय से गति स्थिति करते है। जो सम्पूर्ण द्रव्यों को ठहर ने के लिए स्थान देता है वह आकाश है। वह लोक के भीतर और लोक के बाहर भी है आकाश मात्र अवकाश का हेतु है। एक पुद्गल मूर्त है, शेष पाचों द्रव्य अमूर्त है।एक जीव ही चतन है, शेष सभी अचेतन द्रव्य है। जीव अखण्ड, एक प्रतिभासमय है। काल के दो विभाग कहे गए है नित्य और क्षणिक। समय नाम की जो क्रमिक पर्याय (इकाई) है वह व्यवहार काल है। उसका आधारभूत जो द्रव्य है वह निश्चयकाल है। निश्चय काल द्रव्य रूप होने से नित्य है और व्यवहार काल पर्याय रूप होने से क्षणिक है। सभी द्रव्य अपन अस्तित्व से सत्तावान है और बहुप्रदेशी है, किन्तु काल द्रव्य की स्वतन्त्र सत्ता तो है, लेकिन एक प्रदेशी है। वस्तुत सभी द्रव्य अखण्ड अपने - अपने स्वभाव को लिए हुए है। सक्षेप मेंपाच आस्तिकाय छह द्रव्य नौ पदार्थ प्रयोजन भूत कहे गए है। इन को समझकर जीव अपने स्वरूप को समझ सकता है।आचार्य कुन्द कुन्द देव कहते हैसम्यक्दर्शन, सम्यग्ज्ञान से युक्त सम्यक चारित्र ही मोक्ष मार्ग है जो कि राग द्वेष से रहित लब्धबुद्धि भव्य जीवों को क्षीण कषाय होते ही मोक्ष का मार्ग सहज होता है। (गा १०६)

जन सामान्य के मन में यह प्रश्न उत्पन्न होना स्वाभाविक है कि पाच अस्तिकाय छह द्रव्यों के विषय में पूजा विधान की रचना कैसे सम्भव है। यही प्रश्न 'पचास्तिकाय' के समालोचनात्मक अध्ययन करते समय " मोक्ष मार्ग चूलका" के उपन्यास के सम्बन्ध मे मेरे मन में उद्‌बुद्ध हुआ था। वास्तविकता यह है कि अनादि काल से यह जीव अपने आप के स्वरूप से अनभिज्ञ है। जब तक तात्त्विक दृष्टि से निज ज्ञान स्वरूपी वस्तु का वस्तुत: स्वरूप नही समझेगा तब तक आत्मा परमात्मा को नही समझ पाएगा। यही कारण है कि कविवर

जी ने तात्विक दृष्टि मे वस्तु स्वरूप के विवेचन को भक्तिधारा मे संयोजित कर धारा को सम्यक दिशा मे प्रवाहित किया है। कवि के शब्दो मे .-

सम्यक दर्शन के सन्मुख हो सिन्दूरी संध्या पाता।
ज्ञान चद्रिका के प्रकाश मे रत्नत्रय की निधि लाता।।

या

गुण रत्नों की रत्नावलिया दीपावली सम।
दमक दमक कर मुक्ति प्राप्ति का करती उद्यम।।

अथवा

ज्ञान सूर्य का तेज ही जग में विषद अपार।
ज्ञान चद्र की ज्योति से हो जाना भव पार।।

या

गांधार ऋषभ स्वर गूजे धैवत निषाद इतराये।
मेरी स्वभाव परिणति भी शिव प्रागण में इठलाये।।

या

सदगुरू सिरहाने बैठे मृदु आज रहे ज्ञानाजन।
खुल गये पटल ज्ञानी के काटेगा भव बधन।।

या

सयम की बेला का स्वागत करो।
अविरति के दोष सकल पल में हरो।।

अथवा

प्रतिक्रमण तथा प्रायश्चित की रही न अब आवश्यकता।
मै मुक्तिमार्ग पर धीरे चुपचाप चरण निज धरता।।

अथवा

मेघ मल्हार कौन गाता है जैसे आया हो सावन।
रागेश्री बजाता कोई निज परिणति की मन भावन।।

या

पचम सुर में कोकिल कूकी निष्कटक पथ आज मिला।
केवलज्ञान दूज को पाकर जद ह्रदय का कमल खिला।।

प्रस्तुत विधान की रचना वास्तव में साधुवाद के योग्य व प्रशसनीय है। क्योंकि क्लिष्ट विषय तथ प्राचीन भाषा की बर्तमान रचना तथा सरसता पूर्ण गगरी में ढाल कर जन-जन तक संप्रेषण योग्य बनाना कुशल कवित्व का ही कार्य है। अधिक क्या कहें। निम्न लिखित पक्तियाँ काव्य को स्वत मुखरित करती है।

सुरपुष्प वृष्टि हो नभ से धरती का आगन नाचे।
नभ मडल दिव्य प्रभासे भामडल जैसा राचे।।
इत्यादि. .

आशा है कि भक्ति काव्य जगत में यह रचना श्लाघनीय तथा यश काय सवर्द्धनीय सि होगी।

२६-१-१९९५
गणतत्र दिवस

डॉ. देवेन्द्र कुमार शास्त्री,
अध्यक्ष, अखिल भारतवर्षीय दि. जैन विद्वत्परिष
२४३, शिक्षक कॉलोनी, नीमच (म प्र.)

ध्रुव कोष में सहायता राशि

१०१/- भारत की प्रथम महिला माननीय सौ. श्रीमती विमला शर्मा
धर्मपत्नी परम आदरणीय महामहिम राष्ट्रपति
श्रीमान डा शकरदयाल जी शर्मा, राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली

१,०००/- श्री दि. जैन मुमुक्षु मडल, भोपाल से प्राप्त सम्मान राशि

०,०००/- श्री दि. जैन मुमुक्षु मडल, झबेरी बाजार, बबई

,०००/- श्री पूज्य कानजी स्वामी स्मारक ट्रस्ट, देवलाली

५००/- स्व बालचन्दजी, अशोक नगर द्वारा चौधरी फूलचन्दजी, बबई।

६००/- श्री इन्द्रध्वज मण्डल विधान एव आध्यात्मिक शिक्षण शिविर, तलोद

१००/- श्रीमती बसन्ती देवी धर्मपत्नी स्व डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन, भिण्ड

१००/- कु, लिटिल (पल्लवी) सुपुत्री पूर्णिमा धर्मपत्नी शैलेन्द्र कुमार जैन, भिण्ड

१००/- श्रीमती सुहागबाई धर्मपत्नी बदामीलाल जैन, भोपाल

१००/- श्री मोहनलाल जैन म. प्र ट्रासपोर्ट, भोपाल

१००/- श्री हुकुमचन्द सुमतप्रकाश जैन, भोपाल

१००/- श्रीमती सुशील शास्त्री धर्मपत्नी श्री के शास्त्री, नई दिल्ली

१००/- सौ. सुशीलादेवी धर्मपत्नी ताराचन्द जैन, इटावा

१००/- श्री जैन युवा फेडरेशन मुरार से प्राप्त सम्मान राशि

१००/- सौ. शशिप्रभा धर्मपत्नी महेशचन्द जैन, फिरोजाबाद

१००/- सौ. प्यारीबाई धर्मपत्नी बाबूलाल जी विनोद, भोपाल

००/- स्व परमेश्वरी देवी धर्मपत्नी सत्यप्रकाशजी गुप्ता, भोपाल

००/- सौ. स्नेहलता धर्मपत्नी चन्द्रप्रकाश सोनी, इन्दौर

००/- सौ रानी देवी धर्मपत्नी सुरेशचन्द पाड्या, इन्दौर

००/- श्री दि. जैन महिला मडल, भोपाल से प्राप्त सम्मान राशि

००/- श्री दि. जैन स्वाध्याय मदिर, राजकोट

०/- देवलाली कवि सम्मेलन से प्राप्त सम्मान राशि

००/- सौ. निर्मला धर्मपत्नी भरत पवैया, भोपाल

१०००/- श्री भरत पवैया, भोपाल
१०००/- श्री उपेन्द्र कुमार नगेन्द्र कुमार पवैया, भोपाल
१०००/- श्री चौधरी फूलचन्दजी, बबई
१०००/- श्री कुन्दकुन्द कहान स्मृति सभागृह, आगरा
१०००/- श्री उम्मेदमल कमलकुमारजी बड़जात्या, बबई
१०००/- श्री हुकुमचन्दजी सुमेरचन्दजी, अशोकनगर
१०००/ सौ राजबाई धर्मपत्नी राजमल जी लीडर, भोपाल
१०००/- सौ सुधा धर्मपत्नी महेन्द्रकुमार जी अलकार लाज, भोपाल
१०००/- सौ मधु धर्मपत्नी जितेन्द्र कुमार जी सराफ, भोपाल
११०१/- सौ कमलादेवी धर्मपत्नी खेमचन्द जैन सराफ, भिण्ड
११०१/- सौ मधु धर्मपत्नी डा सत्यप्रकाश जैन, नई दिल्ली
५५५५/- श्री परमागम दि जैन मंदिर ट्रस्ट, सोनागिर
११००/- सौ जिनेन्द्रमाला धर्मपत्नी हमचन्दजी जैन, सहारनपुर
११००/- सौ श्री कान्तादेवी ध प शान्तिप्रसाद जैन, दिल्ली (राजवैद्य एंड सन्स
११००/- सौ रतनबाई धर्मपत्नी श्री सोहनलालजी जयपुर प्रिन्टर्स, जयपुर
११००/- सौ वैजयती देवी धर्मपत्नी बाबूलालजी पाड्या लाला परिवार, इन्दौर
११००/- पूज्य कानजी स्वामी स्मारक ट्रस्ट, देवलाली
२५०१/- सौ लाभुबन ध प श्री अनिल कामदार, दादर (४७ शक्तिविधान के उपलक्ष में)
१०००१/- पू कानजी स्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली ४७ शक्ति विधान के उपलक्ष में
११०१/- सौ माणिकबाई धर्मपत्नी फूलचदजी झाझरी, उज्जैन
११०१/- सौ सुनीता ध प. विनय कुमार जी जैन ज्वेलर्स, देहरादून
११००/- सौ अनीता ध प मोहित कुमार जी मेरठ
११००/- सौ गजराबाई ध. प चौधरी फूलचद्रजी, बबई
११००/- सौ स्व तुलसाबाई ध प स्व बालचद्रजी अशोक नगर
११०१/- सौ प्रेमबाई ध. प शान्तिलाल जी खिमलासा
११०१/- सौ स्नेहलता ध प. देवेन्द्रकुमार जी बड़कुल अरविन्द कटपीस, भोपाल
११०१/- सौ शान्तिबाई ध. प. श्री श्रीकमलजी एडवोकेट, भोपाल

११०१/- सौ रेशमबाई ध. प श्रीछगनलाल जी मदन मेडिको, भोपाल
११०१/- श्रीमती जैनमती ध प स्व मदनलालजी भोपाल
११०१/- सौ. रतनबाई ध. प. श्री माणिकचद जी पाटोदी, लुहारदा
११०१/- सौ तेजकुवर बाई ध. प श्री उम्मेदमल जी बड़जात्या दादर, बबई
१००१/- श्री दि जैन मुमुक्षु मडल नवरग पुरा अहमदाबाद
११०१/- सौ कोकिला बेन ध प श्री हिम्मतलाल शाह कहान नगर दादर, बबई
११०१/- श्री सुरेशचदजी सुनीलकुमारजी, बेंगलोर
१०००/- श्री पूज्य कानजी स्वामी स्मारक ट्रस्ट, देवलाली
११०१/- सौ. सविता जैन एम ए. सुपुत्री प्रेफेसर महेशचद जैन, गोहद
११०१/- सौ. सुशीलादेवी ध प श्री चद्र जैन सुभाष कटपीस लखेरापुरा, भोपाल
१००१/- श्री सौ चद्रप्रभा, ध प डा प्रेमचदजी जैन ४ अरविन्द मार्ग, देहरादून
११०१/- श्री आचार्य कुन्दकुन्द साहित्य प्रकाशन समिति, गुना
११०१/- सौ शान्तिदेवी ध प श्री बाबूलालजी (बाबूलाल प्रकाश चद्र), गुना
११०१/- सौ उषादेवी ध प श्री राजकुमारजी (बाबूलाल प्रकाश चद्र), गुना
११०१/- सौ. अशरफीदेवी ध प ज्ञानचदजी धरनावादवाले, गुना
११०१/- सौ. पद्मादेवी ध. प. श्री डा. प्रेमचद जी जैन, गुना
११०१/- सौ धनकुमारजी विजयकुमारजी, गुना
११०१/- सौ आशादेवी ध. प. अरविन्द कुमारजी, फिरोजाबाद
११०१/- सौ श्री ज्ञानचदजी मनोज कटपीस, भोपाल
११०१/- सौ रजनीदेवी ध. प. श्री नरेन्द्र कुमारजी जियाजी सूटिंग, ग्वालियर
२००१/- सौ. मजुला बेन ध प. श्री मणिलालजी, दादर
११०१/- स्व. सुआबाई मातुश्री रिखवचद्र नेमीचद पहाड़िया, पीसागन (अजमेर)
११०१/- सौ तुलसाबाई ध प श्री नवलचदजी जैन, भोपाल
११०१/- सौ. रत्नाबाई ध प. श्री सरदारमलजी वर्फी हाउस, भोपाल
११०१/- श्री नवल कुमारी ध. प. स्व बाबूलालजी मोगानी, भोपाल
११०१/- श्रीमती कमलश्री बाई ध प. स्व डालचदजी जैन, भोपाल
११०१/- श्री परमागम मदिर ट्रस्ट, सोनागिर
११०१/- श्री दि. जैन मुमुक्षु मडल, हिम्मत नगर

११०१/-	सौ मजुला ध. प शान्तिलाल गाधी, मैनेजर, सेन्ट्रलबैक, जोरहाट
११०१/-	श्रीमती सुखवती बाई ध प स्व श्री बाबूलाल जी ठेकेदार, भोपाल
११०१/-	स्व श्रीमतीबाई ध प कालूरामजी, सत्यम टेक्सटाइल, भोपाल
११०१/-	सौ शकुन्तलादेवी ध प रतनलाल श्री सोगानी, भोपाल
२५००/-	सौ रमाबेन धर्मपत्नी सुमन भाई माणेकचद्र दोशी, राजकोट
११००/-	सौ मीनादेवी एडवोकेट धर्मपत्नी डा राजेन्द्र भारिल्ल, भोपाल
१०००/-	श्रीमती पुष्पा पाटोदी, मल्हारगज, इन्दौर
११००/-	श्री जेठाभाई एच दोशी सेबिन ब्रदर्स, सिकदराबाद
११००/-	सौ सुशीलाबाई धर्मपत्नी लक्ष्मीचद जैन विकास आटो, भोपाल
११००/-	सौ मीना जैन धर्मपत्नी राजकुमार जैन सेन्ट्रल इन्डिया बोर्ड एन्ड पेपर मिल, भोपाल
११००/-	सौ रजनी जैन धर्मपत्नी अरविन्द कुमार जैन अनुराग ट्रेडर्स, भोपाल
१०००/-	स्व गुलाब बाई धर्मपत्नी स्व पातीराम जी जैन, भोपाल
११००/-	सौ शान्तिदेवी धर्मपत्नी श्री नरन्द्र कुमार आदर्श स्टील, झासी
१०००/-	श्रीमती मातेश्वेरी चौधरी मनोज कुमार जैन माटुन्गा, बबई
११००/-	श्री कोकिलाबेन पकजकुमार पारिख दादर, बबई
११००/-	स्व श्री ककुबेन रिखवदास जी द्वारा शान्तिलालजी दादर
११००/-	श्री हीराभाई चिमनलाल शाह प्रदीप सेल्स पाय धुनी बबई
११००/-	श्रीमती दक्षाबेन विनयदक्ष चेरिटेबल ट्रस्ट दादर, बबई
१०००/-	सौ फैन्सीबाई धर्मपत्नी सेममलजी कात्रज, पूना
११००/-	स्व सौ मिश्रीबाई धर्मपत्नी राजमल जी फर्म एस रतनलाल, भोपाल
११००/-	सौ हीरामणी धर्मपत्नी श्री मागीलालजी जैन , भोपाल
११०१/-	सौ पूनम जैन धर्मपत्नी श्री देवेन्द्र कुमार जैन, सहारनपुर
२१०१/-	श्री पडित कैलाशचद जी बुलदशहर वाले कुन्द-कुन्द कहान स्वाध्याय मदिर देहरादून
११०१/-	सौ मनोरमादेवी धर्मपत्नी श्री जयकुमार जी बज कोहेफिजा, भोपाल
११०१/-	श्री भवुतमलजी भडारी, बेंगलोर
११०१/-	श्री फूलचदजी विमलचद जी झाझरी, उज्जैन

११११११/- स्व. श्री जयकुमार जी की स्मृति में मेसर्स मनीराम मुंशी लाल उद्योग समूह, फिरोजाबाद

११०१/- सौ. प्रेमबाई धर्मपत्नी शान्तिलाल जी, खिमलासा

११०१/- सौ अनीता धर्मपत्नी राजकुमार जी, भोपाल

११०१/- सौ मीनादेवी धर्मपत्नी चन्द्रप्रकाश जी, इटावा

११०१/- सौ. मोतीरानी धर्मपत्नी कैलाश चद्र जी , भिण्ड

११०१/- सौ ब्रजेश धर्मपत्नी अभिनदन प्रसाद जी, सहारनपुर

२१०१/- सौ रत्नप्रभा धर्मपत्नी मोतीचदजी लुहाड़िया, जोधपुर

५१११/- श्री केशरीचंद जी पूनमचद जी सेठी ट्रस्ट, नई दिल्ली

११०१/- सौ मीनादेवी धर्मपत्नी केशवदेव जी, कानपुर

११०१/- श्री श्यामलाल जी विजयवर्गीय पी बी. ज्वेलर्स, ग्वालियर

११०१/- सौ मधु धर्मपत्नी विनोद कुमार जी, ग्वालियर

११०१/- स्व कैलाशीबाई धर्मपत्नी स्व रतनचद जी, ग्वालियर

११०१/- स्व रत्नादेवी धर्मपत्नी स्व छुन्नामल जी , ग्वालियर

११०१/- सौ अरूणा धर्मपत्नी निर्मलचद जी, ग्वालियर

११०१/- स्व चमेलीदेवी धर्मपत्नी निर्मल कुमारजी एडवोकेट, ग्वालियर

११०१/- स्व रघुवरदयाल जी की स्मृति में खेमचद जी सत्यप्रकाश जी, भिण्ड

११०१/- चि अकुर पुत्र सौ सुधा सुनील कुमार जैन, भिण्ड

११०१/- सौ मायादेवी धर्मपत्नी सुभाष कुमार जी, भिण्ड

११०१/- सौ विमलादेवी धर्मपत्नी उत्तम चद जी बरोही वाले , भिण्ड

११०१/- स्व श्री मूलचद भाई जैचद भाई भू पूर्व मत्री तारगा जी

११०१/- श्री दोसी बसतलाल जी मूलचद जी , बबई

११०१/- श्री कनुभाई एम दोसी, बबई

११०१/- श्री लीलावती बेन छोटालाल मेहता, बबई

११०१/- सौ निर्मलादेवी धर्मपत्नी छोटेलालजी एन पाण्डे, बबई

११०१/- श्री शान्तिलाल जी रिखवदास जी दादर, बबई

११११११/- स्व. मातेश्वरी सुवाबाई धर्मपत्नी स्व रतनलालजी, पीसागन की स्मृति में श्री रिखवचदजी नेमीचदजी पहाड़िया परिवार द्वारा

२५०१/- श्री शान्तिनाथ दि जैन ट्रस्ट केकड़ी द्वारा श्री मोहनलाल कटारिया
११०१/- श्री दि जैन समाज, भीलवाड़ा
११०१/- श्री रामस्वरूपजी महावीर प्रसाद जी अग्रवाल, केकड़ी
११०१/- श्री लादूराम श्री ताराचंदजी अग्रवाल, केकड़ी
२१०१/- सौ चमेली देवी धर्मपत्नी शिखरचंद जी सर्राफ, विदिशा
११०१/- सौ सरोज धर्मपत्नी श्री डा आर के जैन, विदिशा
११०१/- सौ कृष्णादेवी धर्मपत्नी पदमचंद जी सर्राफ, आगरा
११०१/- श्री कुन्द कुन्द स्मृति भवन, आगरा
११०१/- श्रीमती बदामी बाई धर्मपत्नी स्व श्री बाबूलाल जी (५०१), भोपाल
११०१/- स्व शक्कर बाई धर्मपत्नी स्व बिहारीलाल जी, बैरसिया
११०१/- स्व. लक्ष्मीबाई धर्मपत्नी स्व बंशीलाल जी, भोपाल
११०१/- सौ रतनबाई ध प नन्नूमल जी भंडारी, भोपाल
११०१/- सुश्री बा ब. पुष्पा बेन झाझरी, उज्जैन
११११/- श्री डा गौरी शंकर जी शास्त्री, एम.ए , (ट्रिपिल) पी एच डी , सप्ततीर्थ अध्यक्ष, म प्र स्वतंत्रता संग्राम सैनिक संघ, भोपाल
११११/- सौ राजकुमारी देवी ध प डा गौरीशंकर जी शास्त्री, भोपाल
११०१/- श्रीमती ताराबाई झाझरी ध प स्व श्री रतनलालजी झाझरी, गौतमपुरा
५००१/- श्री दिगम्बर जैन मंदिर, लशकरी गोठ, गोराकुण्ड, इन्दौर
११०१/- सौ चंदन बाला ध.प श्री प्रकाशचंद जी भंडारी, भोपाल
११०१/- सौ राजकुमारी ध प श्री महावीर प्रसादजी सरावगी, कलकत्ता
११०१/- सौ. स्नेह प्रभा ध.प श्री सुगन चंद जी मानोरिया, अशोकनगर
२५०१/- श्री भरतभाई खेमचंद जेठालाल शेठ राजकोट
११०१/- ब्र सुशीला श्री, ब्र कंचनबेन, ब्र पुष्पा बेन, सोनगढ़
११०१/- सौ विमलादेवी ध प श्री बाबूलालजी, हाटपीपलावाले, भोपाल
११०१/- श्रीमती विमलादेवी ध प स्व श्री भगवानदासजी भंडारी, गंजबासोदा
११०१/- स्व कुमारी शिखा सुपुत्री श्री नीलकमल पवैया जी बागमलजी, भोपाल
११०१/- सौ स्नेहलता ध.प श्री जैनबहादुर जैन, कानपुर
११०१/- सौ कंचनबाई ध प. श्री सौभाग्यमलजी पाटनी, बंबई

२५०१/- श्री ताराबाई मातेश्वरी श्री मागीलालजी पदमचदजी पहाडिया, इन्दौर

११०१/- सौ शशिबाला ध.प. श्री सतीश कुमारजी सुपुत्र श्री पन्नालालजी, भोपाल

११०१/- श्री आनद कुमारजी देवेन्द्र कुमारजी पाटनी, इन्दौर

११०१/- सौ. प्रभादेवी ध.प श्री गुलाबचदजी जैन, बेगमगज

११०१/- श्री ममरतबेन ध.प श्री चुन्नीलाल रायचद मेहता, फतेपुर

११०१/- श्री ताराबेन ध प स्व धर्मरत्न बाबुभाई चुन्नीलाल मेहता, फतेपुर

११०१/- श्री आशादेवी पाड्या सुपुत्री स्व. श्री किशनलालजी पाड्या, इन्दौर

श्री प्रेमचन्द्र जी जैन अध्यक्ष श्री राज कृष्ण चेरीटेबिल ट्रस्ट निर्माता अहिसा मदिर दरियागज दिल्ली, जिन मदिर हरिद्वार, जिनमदिर कुरूक्षेत्र, जिनमदिर पिलानी द्वारा प्राप्त

११०१/- स्व श्री राजकृष्णजी जैन (श्री पमचद्र जैन के पिता) दिल्ली

११०१/- स्व श्रीमती कृष्णादेवी ध. प श्री स्व राजकृष्ण जी (श्री प्रेमचन्द्र जी की माताजी)

११०१/- स्व श्रीमती पदमावती ध. प श्री प्रेमचन्द्र जी जैन (दिल्ली)

११०१/- सौ श्रीमती चन्द्रा ध प श्री उमेश चन्द्र जी जैन द्वारा श्री सजीवकुमार राजीव कुमारजी, भोपाल

श्री पंचास्तिकाय विधान

विषय सूची

मंगलाष्टक

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिता सिद्धाश्च सिद्धीश्वरा.,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकरा. पूज्या उपाध्यायका:।
श्री सिद्धान्तसुपाठका. मुनिवारा· रत्नत्रयाराधका ,
पचैते परमेष्ठिन. प्रतिदिन कुर्वन्तु ते मगलम् ।।१।।

श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्र मुकुटप्रद्योत-रत्नप्रभा,
भास्वतपाद-नखेन्दव प्रवचनाम्भोधीन्दव. स्थायिन।।
ये सर्वे जिनसिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठका: साधव:,
स्तुत्या योगिजनैश्च पचगुरूव कुर्वन्तु ते मगलम।।२।।

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममल रत्नत्रय पावन,
मुक्तिश्री नगराधिनाथ-जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रद.
धर्म. सूक्तिसुधा च चैत्यालय श्रयालय,
प्रोक्त च त्रिविध चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मगलम् ।।३।।

सर्पो हारलता भवत्यसिलता मत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायन विषमपि प्रीति विधत्ते रिपु:।
देवा यान्ति वश प्रसन्नमनस: कि वा बहु ब्रूमहे,
धमदिव नभोऽपि वर्षति नगै. कुर्वन्तु ते मगलम् ।।४।।

ये सर्वोषधऋद्धय: सुतपसो वृद्धिगता पच ये
ये चाष्टाँग महानिमित्तकुशला येऽष्टाविधाश्चारणा:।
पचज्ञानधरास्त्रयोऽपिबलिनो ये बुद्धि-ऋद्धीश्वरा:,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृत: कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।५।।

कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पाया वसुपूज्य सज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणमपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनय प्रसिद्धविभवा. कुर्वन्तु ते मगलम्॥६॥

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे मेरो कुलाद्रौ तथा,
जम्बू-शाल्मलि-चैत्याशाखिषु तथा वक्षार-रौप्याद्रिषु।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहा कुर्वन्तु ते मगलम् ॥७॥

यो गर्भावतरोत्सवो भगवता जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जात परिनिष्क्रमेण विभवो य केवलज्ञानभाक।
य. कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा सभावित स्वर्गिभि
कल्याणानि च तानि पच सतत कुर्वन्तु ते मगलम् ॥८॥

इत्थ श्री जिनमगलाष्टकमिद सौभाग्यसपत्पद,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थकराणा मुखात्
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धमार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रियते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥९॥
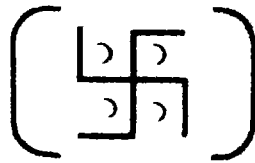
मंगल पंचक

गुण रत्नभूषा विगतदूषा. सौम्यभावनिशाकरा:
सद्बोध-भानुविभा-विभाषितदिक्चया विदषावरा.
नि.सीमसौख्यसमूहमण्डितयोगखडितरतिवरा.
कुर्वन्तु मगलमत्र ते श्री वीरनाथ जिनेश्वरा:॥१॥

सद्ध्यानतीक्ष्ण-कृपाणधारा निहतकर्मकदम्बका,
देवेन्द्रवृन्दनरेन्द्रवन्द्य. प्राप्त सुखनिकुरम्बका.
योगीन्द्रयोगनिरूपणीया. प्राप्तबोधकलापका.
कुर्वन्तु मगलमत्र ते सिद्धा. सदा सुखदायका ॥२॥

आचारपचकचरणचारणचुचव समताधरा·
नानातपोभरहैतिहापितकर्मका. सुखिताकरा
गुप्तित्रयीपरिशीलनादिविभूषिता बदतावरा
कुर्वन्तु मगलमत्र ते श्री सूरयोऽर्जितशभरा. ॥३॥

द्रव्यार्थ भेद विभिन्नश्रुतभरपूर्णतत्व निभालिनो
दुर्योगयोगनिरोधदक्षा सकलवरगुणशालिन.
कर्त्तव्य देशन तत्परा विज्ञान गौरव शालिन.
कुर्वन्तु मगलमत्र ते गुरुदेवदीधितिमालनि. ॥४॥

सयमसमित्यावश्यका-परिहाणिगुप्तिविभूषिता:
पचाक्षदान्तिसमुद्यता. समतासुधापरिभूषिता.
भूपृष्ठविष्टरसायिनो विविधर्द्धिवृन्द विभूषिता:
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते मुनय सदा शमभूषिता: ॥५॥

ॐ नम सिद्धेभ्य

अभिषेक पाठ

मैं परम पूज्य जिनेन्द्र प्रभु को भाव मे वन्दन करूँ।
मन वचन काय, त्रियोग पूर्वक शीष चरणों में धरूँ।।१।।
सर्वज्ञ केवलज्ञानधारी की सुछवि उर में धरूँ।
निग्रन्र्थ पावन वीतराग महान की जय उच्चरूँ।।२।।
उज्ञवल दिगम्बर वेश दर्शन कर हृदय आनन्द भरूँ।
अति विनय पूर्व नमन करके सफल यह नरभव करूँ।।३।।
मै शुद्ध जल के कलश प्रभु के पूज्य मस्तक पर करूँ।
जल धार देकर हर्ष मे अभिषेक प्रभु दी का करूँ।।४।।
मैं न्हवन प्रभु का भाव से कर मकल भव पातक हरू।
प्रभु चरणकमल पखारकर सम्यक्त्व की मम्पत्ति वरू।।५।।

जिनेन्द्र-अभिषेक-स्तुति

मैंने प्रभु के चरण पखारे।
जनम, जनम के सचित पातक तत्क्षण ही निरवारे।।१।।
प्रासुक जल के कलश श्री जिन प्रतिमा ऊपर ढारे।
वीतराग अरिहृत देव के गूजे, जय जयकारे।।२।।
चरणाम्बुज स्पर्श करत ही छाये हर्ष अपारे।
पावन तन, मन नयन भये सब दूर भये अधियारे।।३।।

करलो जिनवर की पूजन

करलो जिनवर की पूजन, आई पावन घड़ी।
आई पावन घड़ी मन भावन घड़ी।।१।।
दुर्लभ यह मानव तन पाकर, कर लो जिन गुणगान।
गुण अनन्त सिद्धो का सुमिरण, करके बनो महान।।करलो.।।२।।

ज्ञानावरण, दर्शनावरणी, मोहनीय अंतराय।

आयु नाम अरु गोत्र वेदनीय, आठों कर्म नशाय।।करलो.।।४।।

धन्य धन्य सिद्धों की महिमा, नाश किया संसार।

निज स्वभाव के शिवपद पाया, अनुपम अगम अपार।।करलो.।।५।।

रत्नत्रय की तरणी चढ़कर चलो मोक्ष के द्वार।

शुद्धातम का ध्यान लगाओ हो जाओ भवपार।।करलो ।।६।।

पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु

अरिहंतों को नमस्कार है, सिद्धों को सादर वंदन।

आचार्यो को नमस्कार है, उपाध्याय को है वन्दन।।१।।

और लोक के सर्वसाधुओं को है विनय सहित वन्दन।

पच परम परमेष्ठी प्रभु को बांर-बार मेरा वन्दन।।२।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि मूलमंत्रेभ्यो नमः पुष्पांजलिं क्षिपामि।

मगल चार, चार है उत्तम चार शरण में जाऊ मैं।

मन वच काय त्रियोग पूर्वक, शुद्ध भावना भाऊ मैं।।३।।

श्री अरिहत देव मंगल है, श्री सिद्ध प्रभु है मगल।

श्री साधु मुनि मगल है, है केवलि कथित धर्म मगल।।४।।

श्री अरिहत लोक में उत्तम, सिद्ध लोक में है उत्तम।

साधु लोक में उत्तम है, है केवलि कथित धर्म उत्तम।।५।।

श्री अरिहत शरण में जाऊ, सिद्ध शरण में मै जाऊ।

साधु शरण में जाऊं, केवलि कथित धर्मशरणा जाऊ।।६।।

ॐ ह्रीं नमो अर्हते स्वाहा पुष्पांजलि क्षिपामि।

मंगल विधान

णमोकार का मन्त्र शाश्वत इसकी महिमा अपरम्पार।
पाप ताप सताप क्लेश हर्ता भवभय नाशक सुखकार।।१।।
सर्व अमगल का हर्ता है सर्वश्रेष्ठ है मन्त्र पवित्र।
पाप पुण्य आस्रव का नाशक सवरमय निर्जरा विचित्र।।२।।
बन्ध विनाशक मोक्ष प्रकाशक वीतरागपद दाता मित्र।
श्री पचपरमेष्ठी प्रभु के झलक रहे हैं इसमें चित्र।।३।।
इसके उच्चारण मे होता विषय कषायों का परिहार।
इसके उच्चारण से होता अतर मन निर्मल अविकार।।४।।
इसके ध्यान मात्र मे होता अतर द्वन्दों का प्रतिकार।
इसके ध्यान मात्र मे होता बाह्यान्तर आनन्द अपार।।५।।
णमोकार है मन्त्र श्रेष्ठतम सर्व पाप नाशनहारी।
सर्व मगलो में पहला मगल पढ़ते ही सुखकारी।।६।।
यह पवित्र अपवित्र दशा सुस्थिति दुस्थिति में हितकारी।
निमिष मात्र में जपते ही होते विलीन पातक भारी।।७।।
सर्व विघ्न बाधा नाशक है सर्व सकटों का हर्ता।
अजर अमर अविकल अविकारी अविनाशी सुख का कर्ता।।८।।
कर्माष्टक का चक्र मिटाता, मोक्ष लक्ष्मी का दाता।
धर्मचक्र मे सिद्धचक पाता जो ओम् नम. ध्याता।।९।।
ओम् शब्द में गर्भित पाचों परमेष्ठी निज गुण धारी।
जो भी ध्याते बन जाते परमात्मा पूर्ण ज्ञान धारी।।१०।।
जय जय जयति पच परमेष्ठी जय जय णमोकार जिन मत्र।
भव बन्धन से छुटकारे का यही एक है मन्त्र स्वतत्र।।११।।

इसकी अनुपम महिमा का शब्दों मे कैसे हो वर्णन।
जो अनुभव करते है वे ही पा लेते है मुक्ति गगन॥१२॥

अर्घ्य

जल गधाक्षत पुष्प सुचरु ले दीप धूप फल अर्घ्य धरूँ।
जिन गृह में जिनराज पच कल्याणक पाचों नमन करूँ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पच कल्याणकेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गधाक्षत पुष्प सुचरु ले दीप धूप फल अर्घ्य धरूँ।
जिन गृह में पाचों परमेष्ठी के चरणों मैं नमन करूँ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अरहतादि पच परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गधाक्षत पुष्प सुचरु ले दीप धूप फल अर्घ्य धरूँ।
जिन गृह में जिन प्रतिमा सम्मुख सहस्त्रनाम को नमन करूँ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री जिनसहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वस्ति मंगल

मगलमय भगवान वीर प्रभु मगलमय गौतम गणधर।
मगलमय श्री कुन्द कुन्द मुनि मगल जैन धर्म सुखकर॥१॥
मगलमय श्री ऋषभदेव प्रभु मगलमय श्री अजित जिनेश।
मगलमय श्री सभव जिनवर मगल अभिनदन परमेश॥२॥
मगलमय श्री सुमति जिनोत्तम मगल पद्मनाथ सर्वेश।
मगलमय सुपार्श्व जिन स्वामी मगल चन्द्राप्रभु चन्द्रेश॥३॥
मगलमय श्री पुष्पदंत प्रभु, मगल शीतलनाथ सुरेश।
मगलमय श्रेयासनाथ जिन मगल वासुपूज्य पूज्येश॥४॥
मगलमय श्री विमलनाथ विभु, मगल अनन्तनाथ महेश।
मगलमय श्री धर्मनाथ जिन मगल शातिनाथ चक्रेश॥५॥

मगल कुन्थुनाथ जिन मगल मगल श्री अरनाथ गुणेश।
मगलमय श्री मल्लिनाथ प्रभु मगल मुनिसुव्रत सत्येश॥६॥
मगलमय नमिनाथ जिनेश्वर मगल नेमिनाथ योगेश।
मगलमय श्री पार्श्वनाथ प्रभु, मगल वर्धमान तीर्थेश॥७॥
मगलमय अरिहत महाप्रभु, मगल सर्व सिद्ध लोकेश।
मगलमय आचार्य श्री जय मगल उपाध्याय ज्ञानेश॥८॥
मगलमय श्री सर्वसाधुगण , मगल जिनवाणी उपदेश।
मगलमय सीमन्धर आदिक, विद्यमान जिन बीस परेश॥९॥
मगलमय त्रैलोक्य जिनालय, मगल जिन प्रतिमा भव्येश।
मगलमय त्रिकाल चौबीसी, मगल समवशरण सविशेष॥१०॥
मगल पचमेरु जिन मदिर, मगल नन्दीश्वर द्वीपेश।
मगल सोलह कारण दशलक्षण, रत्नत्रय व्रत भव्येश॥११॥
मगल सहस्त्र कूट चैत्यालय मगल मानस्तम्भ हमेश।
मगलमय केवलि श्रुतकेवलि मगल ऋद्धिधारि विद्येश॥१२॥
मगलमय पाचों कल्याणक, मगल जिन शासन उद्देश।
मगलमय निर्वाण भूमि, मगलमय अतिशय क्षेत्र विशेष॥१३॥
सर्व सिद्धि मगल के दाता हरो अमगल हे विश्वेश।
जब तक सिद्ध स्वपद ना पाऊ तब तक पूजूं हे ब्रह्मेश॥१४॥

पुष्पाजलि क्षिपामि:

ॐ
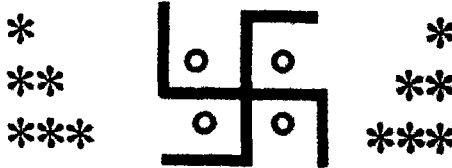
श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्र पूजन

अष्टापद कैलाश श्री सम्मेदाचल चम्पापुर धाम।
उर्ज्जयन गिरनार शिखर पावापुर सबको करूँ प्रणाम ।।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मुक्ति वधू के कत हुए।
पच तीर्थो से तीर्थकर परम सिद्ध भगवन्त हुए।।

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाणक्षेत्राणि अत्र अवतर अवतर सवोषट ।
ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाण क्षेत्राणि अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठः ।
ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाण क्षेत्राणि अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

जन्म मरण से व्यथित हुआ हूँ भव अनादि से दुखपाया।
परम पारिणामिक स्वभाव का निर्मल जल पाने आया।।
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर पावापुर गिरनार।
चौबीसो तीर्थकर की निर्वाण भूमि वन्दू सुखकार।।१।।

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाक्षेत्रेभ्योजन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जल नि ।

भव आतप मे दग्ध हुआ मैं प्रतिपल दुख अनन्त पाया।
परम परिणामिक स्वभाव का निज चदन पाने आया।।
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर पावापुर गिरनार।
चौबीसों तीर्थकर की निर्वाण भूमि वन्दू सुखकार।।२।।

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाणे त्रभ्यो ससार ताप विनाशनायचदन नि ।

भव समुद्र में चहुँ गति की भंवरो में डूबा उतराया।
परम पारिणामिक स्वभाव से अक्षय पद पाने आया ।।
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर पावापुर गिरनार।
चौबीसों तीर्थकर की निर्वाण भूमि वन्दू सुखकार।।३।।

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षत नि. ।

काम भोग बन्धन में पडकर शील स्वभाव नहीं भाया।
परम पारिणामिक स्वभाव के सहज पुष्प पाने आया ॥
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर पावापुर गिरनार।
चौबीसो तीर्थकर की निर्वाण भूमि वन्दू सुखकार॥४॥
ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो कामवाण विध्वसनाय पुष्प नि ॥

तृष्णा की ज्वाला मे जल जल तृप्त नहीं मैं हो पाया।
परम पाणिामिक स्वभाव के सहज पुष्प पाने आया॥
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर पावापुर गिरनार।
चौबीसो तीर्थकर की निर्वाण भूमि वन्दू सुखकार॥५॥
ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो कामवाण विध्वसनाय पुष्प नि ।

समयक्ज्ञान बिना प्रभु अब तक जिनस्वरूप ना लख पाया।
परम पारिणामिक स्वभाव की दीप ज्योति पाने आया ॥
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर पावापुर गिरनार।
चौबीसो तीर्थकर की निर्वाण भूमि वन्दू सुखकार॥६॥
ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विध्वसनाय दीप नि ।

अष्ट कर्म की कूर प्रकृतियो में ही निज को उलझाया।
परम पारिणामिक स्वभाव की सजल धूप पाने आया ॥
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर पावापुर गिरनार।
चौबीसों तीर्थकर की निर्वाण भूमि वन्दू सुखकार॥७॥
ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो अष्ट कर्म दहनाय धूप नि ।

मोक्ष प्राप्ति के बिना आज तक सुख का एक न कण पाया।
परम पारिणामिक स्वभाव के शिवमय फल पाने आया ॥
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर पावापुर गिरनार।
चौबीसों तीर्थकर की निर्वाण भूमि वन्दू सुखकार॥८॥
ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फल नि.।

शुद्ध त्रिकाली अपना ज्ञायक आत्म स्वभाव न दर्शाया ।
परम पारिणामिक स्वभाव से पद अनर्घ पाने आया ।।
अष्टापद सम्मेदशिखर, चम्पापुर पावापुर गिरनार।
चौबीसो तीर्थंकर की निर्वाण भूमि वन्दू सुखकार।।९।।
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्यं नि ।

दोहा

श्री चौबीस जिनेश को वन्दन करूँ त्रिकाल ।
तीर्थंकर निर्वाण भू हरे कर्म जजाल।।१।।

वीरछन्द

अष्टापद कैलाश आदि प्रभु ऋषभ देव पद करूँ प्रणाम।
चम्पापुर में वासुपूज्य जिनवर के पद वन्दूँ अभिराम।।२।।
उर्ज्जयन्त गिरनार शिखर पर नेमिनाथ पद मे वन्दन।
पावापुर मे वर्धमान प्रभु के चरणो को करूँ नमन।।३।।
बीस तीर्थंकर सम्मेदाचल के पर्वत पर वन्दू ।
बीस टोंक पर बीस जिनेश्वर सिद्ध भूमि को अभिनन्दूँ ।।४।।
कूटसिद्धवर अजितनाथ के चरण कमल का नमन करूँ।
धवलकूट पर सम्भवजिन पद पूजूं निज का मनन करूँ।।५।।
मैं आनन्दकूट पर अभिनन्दन स्वामी को करूँ नमन।
अविचलकूट सुमति जिनवर के पद कमलों में हैं वंदन।।६।।
मोहनकूट प्रद्म प्रभु के चरणो में सादर करूँ नमन।
कूट प्रभास सुपार्श्वनाथ प्रभु के मैं पूजूं भव्य चरण ।।७।।
ललितकूट पर चन्दा प्रभु को भाव सहित सादर वन्दूँ ।
सुप्रभकूट सुविधि जिनवर श्री पुष्पदन्त पद अभिनन्दूँ ।।८।।

त्रिद्युतकूट श्री शीतल जिनवर के चरण कमल पावन।
सकुल कूट चरण श्रेयासनाथ के पूजूं मन भावन॥९॥
श्री सुवीर कुल कूट भाव से विमलनाथ के पद वन्दूं।
चरण अनन्तनाथ स्वामी के कूट स्वयभू पर वन्दूं॥१०॥
कूट सुदत्त पूजता हूं मैं धर्मनाथ के चरण कमल।
नमूं कुन्दप्रभ कूट मनोहर शान्तिनाथ के चरण विमल॥११॥
कुन्थनाथ स्वामी को वन्दू कूट ज्ञानधर भव्य महान।
नाटक कूट श्री अरनाथ जिनेश्वर पद का ध्याऊँ ध्यान॥१२॥
सबल कूट मल्लि जिनवर के चरणो की महिमा गाऊँ।
निर्जरकूट श्री मुनिसुव्रत चरण पूजकर हर्षाऊँ॥१३॥
कूट मित्रधर श्री नमिनाथ तीर्थंकर पद करूँ प्रणाम।
स्वर्णभद्र श्री पार्श्वनाथ प्रभु को नित वन्दूं आठों याम॥१४॥
तीर्थंकर निर्वाण भूमियां तीर्थ क्षेत्र कहलाती हैं।
मुनियों की निर्वाण भूमियां सिद्धक्षेत्र कहलाती हैं॥१५॥
गर्भ जन्म तप ज्ञान भूमियां अतिशय क्षेत्र कहाती हैं।
इन सब तीर्थों की यात्रा से उर में पवित्रता आती है॥१६॥
अपना शुद्ध स्वभाव लक्ष्य में लेकर जो निज ध्यान धरूँ।
सादि अनन्त समाधि प्राप्त कर परम मोक्ष निर्वाण वरूँ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

सिद्ध भूमि जिनराज की महिमा अगम अपार।
निज स्वभाव जो साधते वे होते भव पार॥

इत्याशीर्वाद.

जाप्य मन्त्र - ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो नमः।

ॐ

श्री पंचास्तिकाय विधान

सतत वंदनीय श्री पंचपरमेष्ठी

णमो अरिहंताण णमो सिद्धाण

णमो आयरियाण णमो उवज्झायाणं

णमो लोए सव्वसाहूण

ॐ

श्री पंच परमेष्ठी पूजन

अरहत, सिद्ध, आचार्य नमन, हे उपाध्यय हे साधु नमन ।
जय पच परम परमेष्ठी जय, भव सागर तारणहार नमन ।।
मन वच काया पूर्वक करता हूँ, शुद्ध ह्रदय से आह्वानन ।
मम ह्रदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ सन्निकट होउ मेरे भगवन ।
निज आत्म तत्व की प्राप्ति हेतु ले अष्ट द्रव्य करता पूजन ।
तुव चरणों की पूजन से प्रभु निज सिद्ध रूप का हो दर्शन ।।

ॐ ह्रीं श्री अरहत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु पच परमेष्ठी अत्र अवतर अवतर सवौषट,

ॐ ह्रीं श्री अरहत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु पच परमेष्ठी अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ

ॐ ह्रीं श्री अरहत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु पच परमेष्ठी अत्रमम सन्निहितो भव भव वषट् ।

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ ।
तुमसम उज्जवलता पाने को उज्जवल जल भरकर लाया हूँ ।।
मैं जन्म जरा मृतु नाश करूँ ऐसी दो शक्ति ह्रदय स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी ।।१।।

ॐ ह्रीं श्री पच परमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जल नि ।

ससार ताप से जल-जल कर मैनें अगणित दुख पाये हैं ।
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया पर के ही गीत सुहाये हैं ।।
शीतल चन्दन हैं भेट तुम्हे ससार ताप नाशो स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी।।२।।

ॐ ह्रीं श्री पच परमेष्ठिभ्यो ससार ताप विनाशनाय चदन नि ।

दुखमय अथाह भव सागर में मेरी यह नौका भटक रही ।
शुभ अशुभ भाव की भवरों में चैतन्य शक्ति निज अटक रही ॥
तदुल हैं धवल तुम्हे अर्पित अक्षयपद प्राप्तकरूँ स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥३॥

ॐ ह्रीं श्री पच परमेष्ठिभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षत नि ।

मैं काम व्यथा से घायल हूँ सुख की न मिली किंचित् छाया ।
चरणो मे पुष्प चढाता हूँ तुमको पाकर मन हर्षाया ॥
मैं काम भावविध्वस करूँ ऐसा दो शील हृदय स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥४॥

ॐ ह्रीं श्री पच परमेष्ठिभ्यो कामबाण विध्वसनाय पुष्प नि ।

मैं क्षुध रोग से व्याकुल हू चारो गति मे भरमाया हूँ ।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी तृप्त नही हो पाया हूँ ॥
नैवेद्य समर्पित करता हूँ यह क्षुधारोग मेटो स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥५॥

ॐ ह्रीं श्री पच परमेष्ठिभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य नि ।

मोहान्ध महाअज्ञानी मैं निज को पर का कर्ता माना ।
मिथ्यातम के कारण मैने निज आतम स्वरूप न पहचाना ॥
मैं दीप समर्पण करता हूँ मोहान्धकार क्षय हो स्वामी ।
हे पचँ परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥६॥

ॐ ह्रीं श्री पच परमेष्ठिभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीप नि ।

कर्मों की ज्वाला धधक रही ससार बढ़ रहा है प्रतिपल ।
सवर से आश्रव को रोकू निर्जरा सुरभि महके पल-पल ॥
मैं धूप चढ़ाकर अब आठो कर्मों का हनन करूँ स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥७॥

ॐ ह्रीं श्री पच परमेष्ठिभ्यो अष्ट कर्म दहनाय धूप नि ।

निज आत्मतत्व का मनन करू चिंतवन करूँ निजचेतन का ।
दो श्रद्धा, ज्ञान, चरित्र श्रेष्ठ सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का ॥
उत्तमफल चरण चढ़ाता हूँ निर्वाण महाफल हो स्वामी । ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥८॥

ॐ ह्री श्री पच परमेष्ठिभ्यो मोक्षफल प्राप्ताय फल नि ।

जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प दीप, नैवेद्य, धूप फल लाया हूँ ।
अब तक के सचित कर्मो का मैं पुज जलाने आया हूँ ॥
यह अर्घ समर्पित करता हूँ अविचल अनर्घपद दो स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु भव दुख मेटो अन्तर्यामी॥९॥

ॐ ह्री श्री पच परमेष्ठिभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्य नि ।

जयमाला

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो निज ध्यान लीन गुणमय अपार ।
अष्टादश दोष रहित जिनवर अरहत देव को नमस्कार ॥१॥
अविचल अविकारी अविनाशी निज रूप निरजन निराकार ।
जय अजर अमर है मुक्तिकत भगवन्त सिद्धको नमस्कार ॥२॥
छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित निश्चय रत्नत्रय हृदय धार ।
हे मुक्ति वधू के अनुरागी आचार्य सुगुरु को नमस्कार ॥३॥
एकादश अग पूर्व चौदह के पाठी गुण पच्चीस धार ।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान श्री उपाध्याय को नमस्कार। ।४॥
व्रत समिति गुप्ति चारित्र धर्म वैराग्य भावना हृदय धार ।
हे द्रव्य भाव सयममय मुनिवर सर्वसाधु को नमस्कार ॥५॥
बहुपुण्य सयोग मिला नरतन जिनश्रुत जिनदेव चरणदर्शन ।
हो सम्यकदर्शन प्राप्त मुझे तो सफल बने मानव जीवन ॥६॥
निज पर का भेद जानकर मैं निज को ही निज मे लीन करूँ ।

अब भेदज्ञान के द्वारा मैं निज आत्म स्वय स्वाधीन करूँ ।।७।।
निज में रत्नत्रय धारण कर निज परिणति को ही पहचानूँ ।
पर परिणति से हो विमुख सदा निजज्ञान तत्व को हीजानूँ ।।८।।
जब ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प तज शुक्ल ध्यान मैं ध्याऊगा ।
तब चार घातिया क्षय करके अरहत महापद पाऊँगा ।।९।।
हैं निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा हे प्रभु कब इसको पाऊँगा ।
सम्यक् पूजा फल पाने को अब निजस्वभाव में आऊँगा ।।१०।।
अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु हे प्रभु मैने की हैं पूजन ।
तब तक चरणों में ध्यान रहे जबतक न प्राप्त हो मुक्तिसदन ।।११।।

ॐ ह्री श्री अर्हतादि पच परमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

हे मगल रूप अमगल हर मगलमय मगल गान करूँ ।
मगल में प्रथम श्रेष्ठ मगल नवकारमन्त्र का ध्यान धरूँ ।।१२।।

इत्याशीर्वाद

जाप्यमत्र - ॐ ह्री श्री अ सि आ उ सा नम ।

ॐ

श्री पंच बालयति जिन पूजन

जय प्रभु वासुपूज्य तीर्थंकर मल्लिनाथ प्रभु नेमि जिनेश ।
जय श्री पार्श्वनाथ परमेश्वर जय जय महावीर योगेश ।।
राग द्वेष हर मोह क्षोभहर मगलमय हे जिन तीर्थेश ।
पच बालयति परम पूज्य प्रभु बाल ब्रह्मचारी ब्रहेश ।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ महावीर पच बालयति जिनेन्द्र अत्र अवतर-अवतर सवौषट् आवाहन ।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य मल्लिनाथ, नेमिनाथ पार्श्वनाथ महावीर पच बालयति जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठ स्थापन ।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ महावीर पच बालयति जिनेन्द्र अत्र मससन्निहितो भव भव वषट् पुष्पांजलि क्षिपामि ।

इस जल में इतनी शक्ति नहीं जो अतरमल को धो डाले ।
शुद्धातम का जो अनुभवं ले वह पूर्ण शुद्धता को पा ले ।।
वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु पारस महावीर भगवान ।
पाप ताप सताप विनाशक पच बालयति पूज्य महान ।।१।।

ॐ ह्रीं श्री पच बालयति जिनेन्द्रभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जल नि ।

चन्दन में इतनी शक्ति नहीं जो अन्तर ज्वाला शान्त करे ।
शुद्धातम का जो अनुभव ले वह भव की पीड़ा ध्वान्त करे।।
वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु पारस महावीर भगवान ।
पाप ताप सताप विनाशक पच बालयति पूज्य महान ।।२।।

ॐ ह्रीं श्री पच बालयति जिनेन्द्रभ्यो भवताप विनाशनाय चन्दन नि. ।

तन्दुल में इतनी शक्ति नहीं जो निज अखण्ड पद प्रगटाये ।
शुद्धातम का जो अनुभव ले वह निश्चित अक्षय पद पाये।।

वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु पारस महावीर भगवान ।
पाप ताप सताप विनाशक पच बालयति पूज्य महान ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री पच बालयति जिनेन्द्रभ्यो अक्षय पद प्राप्ताय अक्षत नि ।

पुष्पों में इतनी शक्ति नहीं जो शील स्वभाव प्रकाश करे ।
शुद्धातम का जो अनुभव ले वह काम भाव का नाश करे ॥
वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु पारस महावीर भगवान ।
पाप ताप सताप विनाशक पच बालयति पूज्य महान ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री पच बालयति जिनेन्द्राभ्यो कामबाण विध्वन्सनाय पुष्प नि

ऐसा नैवेद्य नही जग मे जो तृष्णा व्याधि मिटा डाले ।
शुद्धातम का जो अनुभव ले तो क्षुधा अनादि हटा डाले ॥
वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु पारस महावीर भगवान ।
पाप ताप सताप विनाशक पच बालयति पूज्य महान ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री पच बालयति जिनेन्द्राभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य नि ।

ऐसा दीपक न कहीं जग में जो अन्तर के तम को हर ले ।
शुद्धातम का जो अनुभव ले वह अन्तर आलोकित कर ले ॥
वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु पारस महावीर भगवान ।
पाप ताप सताप विनाशक पच बालयति पूज्य महान ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री पच बालयति जिनेन्द्राभ्यो मोहान्धाकर विनाशनाय दीप नि ।

जड रूप धूप में शक्ति नहीं जो कर्म शक्ति का हरण करे ।
शुद्धातम का जो अनुभव ले वह निज स्वरूप का वरण करे॥
वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु पारस महावीर भगवान ।
पाप ताप संताप विनाशक पच बालयति पूज्य महान ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री पच बालयति जिनेन्द्राभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूप नि ।

तरु फल में ऐसी शक्ति नहीं जो अन्तर पूर्ण शान्ति छाये ।
शुद्धातम का जो अनुभव ले वह महा मोक्ष फल को पाये ॥

१

वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु पारस महावीर भगवान ।
पाप ताप सताप विनाशक पच बालयति पूज्य महान ।।८।।

ॐ ह्रीं श्री पच बालयति जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्ताय फल नि ।

यह अर्घ्य न ऐसा शक्तिवान जो सिद्ध लोक तक पहुँचाये ।
शुद्धतम का जो अनुभव ले वह निज अनर्घ पद को पाये ।।
वासुपूज्य श्री मल्लि नेमि प्रभु पारस महावीर भगवान ।
पाप ताप सताप विनाशक पच बालयति पूज्य महान ।।९।।

ॐ ह्रीं श्री पच बालयति जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घ्य नि ।

अर्घ्यावलि

श्री वासुपूज्य स्वामी

चम्पापुर के राजा वसुपूज्य सुमाता विजया के नन्दन ।
पन्द्रह मास रतन बरसाये सुरपति ने माँ के आँगन ।।१।।
दिक्कुमारियो ने सेवा कर माँ का किया मनोरजन।
सोलह स्वप्न लखे माता ने निद्रा में सोते इक दिन ।।२।।
जन्म लिया तुमने कुमार वय मे ही की दीक्षा धारण ।
चार घातिया कर्म नाश कर केवलज्ञान लिया पावन ।।३।।
भादव शुक्ला चतुर्दशी को चम्पापुर से मुक्त हुए ।
परम पूज्य प्रभु हर अघातिया, मुक्ति रमा से युक्त हुए ।।४।।
महिष चिन्ह चरणों में शोभित वासुपूज्य को करूँ नमन ।
शुद्ध आत्मा की प्रतीति कर मैं भी पाऊँ मुक्ति सदन ।।५।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञानमोक्ष कल्याण प्राप्ताय अर्घ्य नि ।

श्री मल्लिनाथ स्वामी

मिथिलापुरी नगर के अधिपति कुम्भराज गृह जन्म लिया ।
माता प्रभावती हर्षायीं देवो ने आनन्द किया ॥१॥
ऐरावत् गज पर ले जाकर गिरि सुमेरु अभिषेक किया ।
माता-पिता को सौंप इन्द्र ने हर्षित नाटक नृत्य किया ॥२॥
लघु वय में ही दीक्षा धारी पच मुष्ठि कच-लोच किया ।
छह दिन ही छद्मस्थ रहे फिर तुमने केलवज्ञान लिया ॥३॥
सवल कूट शिखर सम्मेदाचल पर जय जय गान हुआ ।
फागुन शुक्ल पचमी के दिन महा मोक्ष कल्याण हुआ ॥४॥
कलश चिन्ह चरणों में शोभित मल्लिनाथ को करूँ नमन ।
मन, वच, तन, प्रभु के गुण गाऊ मै भी पाऊ सिद्ध सदन ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञानमोक्ष पचकल्याण प्राप्ताय अर्घ्यं नि ।

श्री नेमिनाथ स्वामी

नृपति समुद्र विजय हर्षाये शिव देव उर धन्य किया ।
नेमिनाथ तीर्थंकर तुमने शौर्यपुरी मे जन्म लिया ॥१॥
नगर द्वारिका से विवाह हित जूनागढ को किया प्रयाण ।
पशुओं की करुणा पुकार सुन उर छाया वैराग्य महान ॥२॥
भव तन भोगों से विरक्त हो पच महाव्रत ग्रहण किया ।
शीघ्र अनन्त चतुष्टय प्रगटा, पर विभाव सब हरण किया ॥३॥
ले कैवल्य मोक्ष सुख पाया, पाया शिवपद अविकारी ।
शुभ आषाढ शुक्ल अष्टम को धन्य हो गई गिरनारी ॥४॥
शख चिन्ह चरणों में शोभित नेमिनाथ को करूँ नमन ।
निज स्वभाव के साधन द्वारा मैं भी पाऊँ मुक्ति सदन ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञानमोक्ष पच कल्याण प्राप्ताय अर्घ्यं नि ।

श्री पार्श्वनाथ स्वामी

वाराणसी नगर अति सुन्दर अश्वसेन नृप के नन्दन ।
माता वामादेवी के सुत पार्श्वनाथ प्रभु जग वन्दन ॥१॥
तुम कुमार वय में ही दीक्षित होकर निज में हुए मगन ।
कमठ शत्रु कर सका न कुछ भी यदपि किया उपसर्ग सघन ॥२॥
केवलज्ञान प्राप्त होते ही रचा इन्द्र ने समवरण ।
दे उपदेश भव्य जीवों को मुक्ति वधू का किया वरण ॥३॥
श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन अष्ट कर्म का किया हनन ।
कूट स्वर्णभद्र सम्मेद शिखर से पाया सिद्ध सदन ॥४॥
सर्प चिन्ह चरणों में शोभित पार्श्वनाथ को करूँ नमन ।
त्रैकालिक ज्ञायक स्वभाव से मैं भी पाऊँ मोक्ष भवन ॥५॥

ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञानमोक्ष पंच कल्याण प्राप्ताय अर्घ्यं नि ।

श्री महावीर स्वामी

कुण्डलपुर वैशाली नृप सिद्धार्थ पुत्र श्री वीर जिनेश ।
प्रिय कारिणी मात त्रिशला के उर से जन्मे महा महेश ॥१॥
अविवाहित रह राजपाट सब ठुकराया मुनिव्रत धारे ।
द्वादश वर्ष तपस्या करके कर्म शिथिल सब कर डारे ॥२॥
केवल लब्धि प्रगट कर स्वामी जगती को उपदेश दिया ।
तीस वर्ष तक कर विहार प्रभु मोक्ष मार्ग संदेश दिया ॥३॥
कार्तिक कृष्ण अमावस्या को अष्ट कर्म अवसान किया ।
पावापुर के महोद्यान से सिद्ध स्वपद निर्वाण लिया ॥४॥
सिंह चिन्ह चरणों में शोभित वर्धमान को करूँ नमन ।
ध्रुव चैतन्य स्वरूप लक्ष्य में ले मैं भी पाऊँ मुक्ति सदन ॥५॥

ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञानमोक्ष पंच कल्याण प्राप्ताय अर्घ्यं नि. ।

जयमाला

जय प्रभु वासुपूज्य जिन स्वामी मल्लिनाथ जयनेमि महान ।
जय श्री पार्श्वनाथ प्रभु जिनवर जय जय महावीर भगवान ॥१॥
पर परिणति तज निंज परिणति से चारों गति हर हुए महान ।
पाँचों तीर्थंकर प्रभु तुमने पाई पचम गति निर्वाण ॥२॥
अब वैराग्य जगे मन मेरे भव भोगों मे रमूं नही ।
भाव शुभाशुभ के प्रपच में और अधिक अब थमूं नहीं ॥३॥
भक्ति भाव से यही विनय है निज अटूट बल दो स्वामी ।
चितामणि रत्नत्रय पाकर बन जाऊँ शिव पथ गामी ॥४॥
मैं पाँचों समवय प्राप्त कर नित पाचो स्वाध्याय करूँ ।
पचम करण लब्धि को पाकर भेदज्ञान पुरुषार्थ करूँ ॥५॥
वर्ण पच रस पच गध दो, स्पर्श अष्ट मुझमे न कही ।
पाच वर्गणा पुद्गल की पर्यायों से सबध नही ॥६॥
पच भेद मिथ्यात्व त्यागकर समकित अगीकार करूँ ।
पच पाप तज एकदेश पाचों अणुव्रत स्वीकार करूँ ॥७॥
पचेन्द्रिय के पच विषय तज पच प्रमाद विनाश करूँ ।
पच महाव्रत पच समिति धर पचाचार प्रकाश करूँ ॥८॥
पच प्रकार भाव आश्रव का बध नहीं होने पाए ।
पचोत्तर के वैभव का भी लोभ नही उर मे आए ॥९॥
सयम पाँच प्रकार ग्रहण कर मैं पाँचों चारित्र धरूँ ।
पचम यथाख्यात चारित पा कर्मघातिया नाश करूँ ॥१०॥
पचम भाव पारिणामिक से पाऊँ स्वामी पचम ज्ञान ।
पच परावर्तन अभाव कर पाऊँ पंचम गति भगवान ॥११॥

पंच बलयलि तुव चरणों में यही विनय है बारम्बार ।
सादि अनत सिद्ध पद पाऊँ नित्य निरंजन शिवसुखकार ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य मल्लिनाथ, नेमिनाथ पार्श्वनाथ महावीर पच बालयति जिनेद्राय पूर्णार्घ्य नि ।

पंच बलयति प्रभु चरण भाव सहित उर धार ।
मन वच तन जो पूजते वे होते भव पार ॥

इत्याशीर्वाद .

जाप्यमत्र-ॐ ह्रीं श्री पच बलयति जिनेन्द्राय नम : ।

वीतराग मुनि को हम वदन करें । भावना पवित्र बना दर्शनकरें ॥
कोध मान माया या लोभ नहीं है , राग, द्वेष, काम मोह क्षोभ नही है ।
निर्ग्रन्थ साधु अभिनंदन करें । वीतराग मुनि को हम वदन करें ॥
लेशमात्र जिनको परिग्रह नहीं,कोई पै भी द्वेष या अनुग्रह नहीं।
इनके उपदेशों को हम श्रवण करें, वीतराग मुनि को हम वदन करें ॥
पर्याय बुद्धि नही द्रव्यदृष्टि है, अन्तर में अनुभव कीमरस वृष्टि है॥
शुद्धात्म देव का अर्चन करें, वीतराग मुनि को हम वदन करें ॥
जड के प्रतिआदरका भाव नही है, निश्चय है उर में विभाव नहीं है।
ऐसे विरागी भव बधन हरें, वीतराग मुनि को हम वदन करें ॥
महा मोक्ष पाऐंगे कुछ काल में, फिर न फसेंगे ये भाव जाल में ।
चरणों में भावों के हम सुमन धरें, वीतराग मुनि को हम वदन करें ॥
भावना भाएँ दिन रात यही हम, कब हो निर्ग्रन्थ साधु ध्यानमयी हम ।
अतर में समकित का चदन वरें, वीतराग मुनि को हम वदन करें ॥

ॐ

श्री जिनेन्द्र पंचकल्याणक पूजन

चौवीसो जिन के पाँचो कल्याणक शुभ मगलदायी ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष कल्याणक पूजूं सुखदायी ।।
ऋषभ अजित सभव अभिनदन सुमति पद्म सुपार्श्व भगवत ।
चद्र सुविधि शीतल श्रेयास जिन वासुपूज्यप्रभ विमल अनत ।।
धर्म शाति कुन्थु अरहजिन मल्लि मुनिसुव्रत नाम गुणवंत ।
नेमि पार्श्व प्रभु महावीर के पाँचों मगल जय जयवन्त ।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पंचकल्याणक समूह अत्र अवतर अवतर सवौट् अह्वानन
ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणक समह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन
ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणक समूह अत्र मम् सन्निहितो भवभव वषट् सन्निधकरण

शुभ्र नीर की तान धार दे जन्म जरा मृतु हरण करूँ।
सम्यक दर्शन की विभूति पा मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थकर के बतलाये रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाचों कल्याणक नमन करूँ।।१।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणकेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जल नि

मलयागिर चदन अर्पित कर भव का आतप हरण करूँ।
सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर मैं भी मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थकर के बतलाये रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाचों कल्याणक नमन करूँ।।२।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणकेभ्यो ससारताप विनाशनाय चदन नि

अक्षत से अक्षय पद पाऊँ भव सागर दुख हरण करूँ
सम्यक चारित्र के प्रभाव से मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।
जिन तीर्थकर के बतलाये रत्नत्रय को वरण करूँ
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाचों कल्याणक नमन करूँ।।३।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणकेभ्यो अक्षयपद प्राप्तनाय अक्षत नि

सुन्दर पुष्प सुगन्धित पाकर काम शत्रु मद हरण करूँ।
सम्यक् तप की महाशक्ति से मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थंकर के बतलाये रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पांचों कल्याणक नमन करूँ।।४।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणकेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्प नि.

शुभ नैवेद्य भेंटकर स्वामी क्षुधा व्याधि को हरण करूँ।
शुद्ध ध्यान निज के प्रताप से मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थंकर के बतलाये रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाचों कल्याणक नमन करूँ।।५।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणकेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यनि

तमक नाशक दीप जलाकर मोह तिमिर को हरण करूँ।
निज अतर आलोकित करके मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थकर के बतलाये रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाचों कल्याणक नमन करूँ।।६।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणकेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीप नि

ध्यान अग्नि मे धूप डालकर अष्टकर्म को हनन करूँ।
शुक्ल ध्यान की प्राप्ति हेतु मैं मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थकर के बतलाये रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाचों कल्याणक नमन करूँ।।७।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणकेभ्यो अष्टकर्मविध्वसनाय धूप नि.

शुद्ध भाव फल लेकर स्वामी पाप पुण्य को हरण करूँ।
परम मोक्षपद पाने को मैं मोक्षमार्ग को ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थकर के बतलाये रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाचों कल्याणक नमन करूँ।।८।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणकेभ्यो मोक्षफल प्राप्ताय फल नि

वसुविधि अर्घ चढाकर मैं अष्टम वसुधा को वरण करूँ।
निज अनर्घ पद प्राप्ति हेतु मैं मोक्षमार्ग के ग्रहण करूँ।।
जिन तीर्थकर के बतलाये रत्नत्रय को वरण करूँ।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाचों कल्याणक नमन करूँ।।९।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र पचकल्याणकेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घ्यं नि

श्री गर्भकल्याणक अर्घ्य

श्री जिन गर्भ कल्याण की महिमा अपरम्पार।
रत्नों की बौछार हो घर घर मगलचार।।

गर्भ पूर्व छह मास जन्म तक नित नूतन मगल होते।
नव बारह योजन नगरी रच इन्द्र महा हर्षित होते।।
गर्भ दिवस जिन माता को दिखते हैं सोलह स्वप्न महान।
बैल, सिंह माला, लक्ष्मी, गज, रवि, शशि, सिंहासन छविमान।।
मीन युगल, दो कलश, सरोवर, सुरविमान, नागेन्द्र विमान।
रत्नराशि, निर्धूमअग्नि , सागर लहराता अतुल महान।।
स्वप्न फलो को सुनकर हर्षित, होता है अनुपम आनन्द।
धन्य गर्भ कल्याण देवियाँ सेवा करती हैं सानन्द।।१।।

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकर गर्भकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं नि स्वाहा।

श्री जन्मकल्याणक अर्घ्य

श्री जिन जन्म कल्याण की महिमा अपरम्पार।
तीनों लोकों में हुआ प्रभु का जय-जयकार।।

जन्म समय तीनो लोको में होता है आनन्द अपार।
सभी जीव अन्तर्मुहूर्त को पाते अति साता सुखकार।।
इन्द्रशची ऐरावत पर चढ़ धूम मचाते आते हैं।
जिन प्रभु का अभिषेक मेरु पर्वत के शिखर रचाते हैं।।

क्षीरोदधि से एक सहस्त्र अरु अष्ट कलश सुर भरते हैं।
स्वर्ण कलश शुभ इन्द्रभाव से प्रभु मस्तक पर करते हैं।।
मात पिता को सौंप इन्द्र करता है नाटक नृत्य महान।
परम जन्म कल्याण महोत्सव पर होता है जय-जयगान।।२।।
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर जन्मकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं नि स्वाहा।

श्री तपकल्याणक अर्घ्य

श्री जिन तप कल्याण की महिमा अपरम्पार।
तप संयम की हो रही पावन जय-जयकार ।।
कुछ निमित्त पा जब प्रभु के मन में आता वैराग्य अपार।
भव्य भावना द्वादश भाते तजते राजपाट संसार।।
लौकान्तिक ब्रह्मर्षि एक भव अवतारी होते पुलकित।
प्रभु वैराग्य सुदृढ करने को कहते धन्य धन्य हर्षित।।
इन्द्रादिक प्रभु को शिविका पर ले जाते बाहर वन मे।
महाव्रती हो केश लोचकर लय होते निज चिंतन मे।।
इन केशो को इन्द्र प्रवाहित क्षीरोदधि मे करता है।
तप कल्याण महोत्सव तप की विमल भावना भरता है।।३।।
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर तपकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं नि स्वाहा।

श्री ज्ञानकल्याणक अर्घ्य

परम ज्ञान कल्याण की महिमा अपरम्पार।
स्वपर प्रकाशक आत्म में झलक रहा संसार।।
क्षपक श्रेणि चढ़ शुक्ल ध्यान से गुणस्थान बारहवाँ पा।
चार घातिया कर्म नाशकर गुणस्थान तेरहवाँ पा।।
केवलज्ञान प्रकट होते ही होती परमौदारिक देह।
अष्टादश दोषों से विरहित छयालीस गुण मंडित नेह।।

समवशरण की रचना होती होते अतिशय देवोंपम।
शत इन्द्रों के द्वरा वंदित प्रभु की छवि अति सुन्दरतम।।
दिव्य ध्वनि खिरती है सब जीवों का होता है कल्याण।
परम ज्ञान कल्याण महोत्सब पर जिन प्रभु का ही यशगान।।४।।
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर ज्ञानकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं नि स्वाहा।

श्री ज्ञानकल्याणक अर्घ्य

परम मोक्ष कल्याण की महिमा अपरम्पार।
अष्टकर्म के नाश कर नाथ हुए भवपार।।
गुणस्थान चौदहवाँ पाकर योगों का निरोध करते।
अन्तिम शुक्ल ध्यान के द्वारा कर्म अघातिया भी हरते।।
अ,इ,उ,ऋ,लृ उच्चारण में लगता है जितना काल।
तीन लोक के शीश विराजित हो जोता हैं प्रभु तत्काल ।।
तन कपूरवत उड़ जाता है नख अरु केश शेष रहते।
मायामयी शरीर देव रच अन्तिम क्रिया अग्नि दहते।।
मगल गीत नृत्य वाद्यों की ध्वनि से होता हर्ष अपार।
भव्य मोक्ष कल्याण मनाते सब जीवों को मगलकार।।५।।
ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर मोक्षकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं नि स्वाहा।

जयमाला

दोहा

जिनवर पच कल्याणक की महिमा अगम अपार।
गर्भ जन्म तप ज्ञान सह महामोक्ष शिवकार।।१।।

वीरछन्द

वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर के मगल कल्याण महान
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाचों कल्याणक महिमावान।।२

श्री पचकल्याणक पूजन करके निज वैभव पाऊँ।
सोलहकारण भव्य भावना मैं भी हे जिनवर भाऊँ।।३।।
जिनध्वनि सुनकर मेरे मन में रहा नहीं प्रभु भय का लेश।
पूर्ण शुद्ध ज्ञायक स्वरूप मय एक मात्र है उज्जवल वेश।।४।।
सयोगी भावो के कारण भटक रहा भव सागर में।
जिन प्रभु का उपदेश सुना पर झिला नहीं निज गागर में।।५।।
अवसर आज मिला है मुझको प्रभु चरणों की पूजन का।
सम्यक्दर्शन आज मिला है फल पाया नर जीवन का।६।।
हे प्रभु मुझे मार्ग दर्शन दो अब मैं आगे बढ़ जाऊँ।
अणुव्रत धार महाव्रतधारूँ गुणस्थान भी चढ़ जाऊँ।।७।।
परम पचकल्याण विभूषित जिन प्रभु की महिमा गाऊँ।
घाति अघाति कर्म सब क्षयकर शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।८।।

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर गर्भ, जन्म ,तप, ज्ञान मोक्ष कल्याणकेभ्यो पूर्णार्घ्य नि स्वाहा।

तीर्थंकर जिन देव के पूज्य पचकल्याण।
भाव सहित जो पूजते पाते शाति महान।।

इत्याशीर्वाद

जाप्य मन्त्र : ॐ ह्रीं श्री जिन पचकल्याणकेभ्यो नमः

ॐ

श्री पंच परमागम पूजन

स्थापना

छंद ताटंक

कुन्दकुन्द आचार्य रचित परमागम जिन श्रुत को वदन ।
भक्ति भाव से विनय पूर्वक कुन्दकुन्द का अभिनदन ।।
श्री पचास्तिकाय सग्रह मे अस्तिकाय का है वर्णन ।
प्रवचन सार महान ग्रथ मे जिनवर प्रवचन मनभावन ।।
समयसार ग्रथधिराज मे वस्तु स्वरूप कथन पावन ।
नियमसार मे नियम पूर्वक मुक्तिमार्ग का शुद्ध कथन ।।
श्री अष्टपाहुड मे ऋषिमुनि का आचरण परम पावन ।
यही पचपरमागम मोक्षार्थी जीवो के सम्यक धन ।।
इन पाचो परमागम की मैं करता भक्ति सहित पूजन ।
मेरा भव सकर टल जाये यही भावना हैं भगवन ।।

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागम अत्र अवतर अवतर सवौष्ट आहुवानन।

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागम अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन।

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागम अत्र मम हितो भव भव वषट् सन्निधिकरण पुष्पाजलि क्षिपामि।

अष्टक

छंद मानव

अनुभव रसमय सम्यक जल जन्मादि रोग का नाशक ।
परिपूर्ण सौख्यदाता है सिद्धत्व स्वरूप प्रकशक ।।

महिमाशाली जिनश्रुत में है कुन्दकुन्द परमागम ।
इनके आश्रय से होता चेतन शिवसुख में सक्षम ।।

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागमाय अत्र मृत्यु विनाशनाय जल निर्वपामिती स्वाहा ।

अनुभव रस चंदन पावन संसार ताप ज्वर हरता ।
सर्वोत्कृष्ट पददाता जियको आनदित करता ।।
महिमाशाली जिनश्रुत में है कुन्दकुन्द परमागम ।
इनके आश्रय से होता चेतन शिवसुख में सक्षम ।।

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागमाय अत्र ससार ताप विनाशनाय चदन नि ।

अनुभव रस पगे स्वअक्षत अक्षय पद के दायक हैं ।
ससार समुद्र विनाशक जिनवर त्रिभुवन नायक हैं ।
महिमाशाली जिनश्रुत मे है कुन्दकुन्द परमागम ।
इनके आत्रय से होता चेतन शिवसुख में सक्षम ।।

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागमाय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षत नि ।

अनुभव रस भरे कुसुम की है सुरभि महान निराली ।
कामाग्नि बुझा देती है है अनुपमेय गुणशाली ।।
महिमाशाली जिनश्रुत मे है कुन्दकुन्द परमागम ।
इनके आश्रय से होता चेतन शिवसुख मे सक्षम ।।

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार अष्टहपाहुड पचपरमागमाय कामबाण विध्वसनाय पुष्प नि ।

अनुभव रस के चरु पाकर मे क्षुधा रोग को नाशूं ।
उदराग्नि ज्वाल बुझ जाय निज आत्म स्वरूप प्रकाशूं ।।
महिमाशाली जिनश्रुत में है कुन्दकुन्द परमागम ।
इनके आश्रय से होता चेतन शिवसुख मे सक्षम ।।

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागम क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्य नि. ।

अनुभव रस दीप ज्योति ले मोहान्धकार क्षय कर लूं ।
मिथ्यात्व ज्वाल को क्षयकर अपने विभ्रम सब हर लूं ।
महिमाशाली जिनश्रुत मे है कुन्दकुन्द परमागम ।
इनके आश्रय से होता चेतन शिवसुख में सक्षम ॥

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागमाय मोहान्धकार विनाशनाय दीप नि ।

अनुभव रस सुरभि धूप ले आठो कर्म को नाशूं ।
शुद्धात्व त्रिकाली ध्रुव को अविलम्ब महान प्रकाशूं ॥
महिमाशाली जिनश्रुत में है कुन्दकुन्द परमागम ।
इनके आश्रय से होता चेतन शिवसुख मे सक्षम ॥

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागमाय अष्ट कर्म विध्वसनाय धूप नि ।

अनुभव रसमय फल लाऊं मैं महा मोक्ष फल पाऊं ।
अपने अनत गुण प्रगटा त्रैलोक्य शिखर पर जाऊं ॥
महिमाशाली जिनश्रुत मे है कुन्दकुन्द परमागम ।
इनके आश्रय से होता चेतन शिवसुख में सक्षम ॥

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागमाय मोक्षफल प्राप्ताय अर्घ्य नि ।

अनुभव रस अर्घ्य बनाऊं पदवी अनर्घ्य प्रगटाऊं ॥
शाश्वत अनत सुख पाने परमोत्कृष्ट पद पाऊं ॥
महिमाशाली जिनश्रुत मे है कुन्दकुन्द परमागम ।
इनके आश्रय से होता चेतन शिवसुख में सक्षम ॥

ॐ ह्रीं श्री पचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टहपाहुड पचपरमागमाय अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्य नि ।

अर्घ्यावलि

श्री पंचास्तिकाय संग्रह

छन्द मत्त सवैया

प्रथम द्वितीय श्रुतस्कध रूप पचास्तिकायसंग्रह महान।
है कुन्द कुन्द आचार्य रचित महिमामय परमागम प्रधान ॥
जीवास्तिकाय निज का प्रकृष्ट हो ज्ञान ह्रदय में अति महान ।
तो भेद ज्ञान की निधि मिलती सम्यक दर्शन होता प्रधान ॥
पुद्गल नभ धर्म अधर्म सभी हैं अस्तिकाय इनको पिछान ।
फिर काल द्रव्य को भी जानो जो है वर्तना हेतु मान ॥
इन सबके सम्यक परिचय मे होता है निर्मल अत्मा ज्ञान ।
महिमामय मोक्षमार्ग मिलता निर्वाण प्राप्त होता महान ॥

ॐ ह्रीं श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्य नि ।

श्री प्रवचन सार

जिन प्रवचन सार महान ग्रथ हैं कुन्द कुन्द द्वारा विरचित ।
जिनवर सदेश भरा इस में गणधर आचार्य महान रचित ॥
सम्यक मुमार्ग का दर्शक है जग जाता स्वपर विवेक ह्रदय ।
स्वात्मानुभूति होती उर में मिल जाता है निर्वाण निलय ॥
जीवादितत्त्व साना का होता ज्ञान महज निज अतरग ।
परमागम की महिमा न्यारी जो है अखड जो हैं अभग ॥
इसकी रचना को बीते हैं दो महस वर्ष अब तक विशाल ।
जो ह्रदयगम करता इसको वह जो जाता है निहाल ॥

ॐ ह्रीं श्री परमागमं प्रवचनसाराय अर्घ्य नि ।

श्री समयसार

है कुन्द कुन्द द्वारा विरचित यह समयसार ग्रथाधिराज ।
जिनआगम का है सार यही इसके बल से मिलता स्वराज ॥
यदि स्वर्णपत्र पर रत्नो से इसकी महिमा लिक्खी जाए ।
तो भी न मूल्य आंका जाये यह तो अमूल्य रस बरसाए ॥
नव तत्व कथन सम्यक प्रकार मिथ्यात्व मोह क्षय कर देते ।
जो अप्रतिबुद्ध जीव होते वे सम्यक दर्शन पा लेते ॥
अद्‌भुत इस परमागम की है महिमा महान शिव सुखकारी ।
जीवो का सच्चा रूप शुद्ध है दर्शन ज्ञानमयी भारी ॥
इसका चिन्तन अध्ययन मनन कर देता है भव भाव नाश ।
हो जाता है इसके द्वारा भ्रम मोहनाश सम्यक प्रकाश ॥

ॐ ह्रीं श्री परमागम समयसाराय अर्घ्यं नि ।

श्री नियमसार

निज नियमसार का सार यही जिनमार्ग शुद्ध उज्जवल महान ।
निश्चय से मोक्षमार्ग वर्णन इसमे है अति पावन प्रधान ॥
व्रत समिति गुप्ति निश्चयपूर्वक है अपराधो का प्रायश्चित ।
यदि अतिक्रमण कुछ होता है तो प्रतिक्रमण परम सुरभित ॥
प्रत्याख्यानों की विधि बतला प्रतिसरण सुविधि सिखलाता है ।
यह नियमसार परगमागम ही श्रमणों का जीवन दाता है ।
सयमित भावना मे जो भी इसके अनुसार चला करता ।
वह कुन्दकुन्द की कृपा प्राप्त करके रागादि भाव हरता ॥

ॐ ह्रीं श्री परमागम नियमसाराय अर्घ्यं नि ।

श्री अष्टपाहुड

परमागम ग्रंथ अष्टपाहुड पंचाचारी मुनि का जीवन ।
है पंचमहाव्रत का दर्शन है पञ्च समिति का ही वर्णन ।।
त्रयगुप्ति महामहिमामय हैं, है तेरह विध चारित्र शुद्ध ।
आचरण महामुनियों का तो हो सकता कभी नहीं अशुद्ध ।।
मुनि मूलगुणों की द्युति निर्मल निज अतरंग गुण का सागर ।
निज परिणति के संग होते ही भर जाती अनुभव रस गागर ।।
पर भाव न रहने पाता है निज भाव सहज मुसकाता है ।
यह कुन्दकुन्द की भाषा ह जो पढ़ लेता सुख पाता है ।

ॐ ह्रीं श्री परमागम अष्टपाहुडाय अर्घ्यं नि ।

महा अर्घ्य

निजज्ञान का सागर अदभुत है श्रद्धा के तल पर बहता है ।
चारित्र शुद्ध सबल हैं जो इसके भीतर ही रहता है ।।
चैतन्यतत्त्व की महिमा से है ओत प्रोत इसका कण कण ।
इसका जो आश्रय लेता है उसके कट जाते हैं बधन ।।
है मुक्तमार्ग का प्राण यही श्रमणों का है आधार यही ।
शक्तिया अनतो हैं इसमे अविनश्वर है अविकार यही ।।
जो परमागम रस पीता है वह कभी न फिर दुख सहता है ।
निज ज्ञान का सागर अदभुत है श्रद्धा के तल पर बहता है ।।

दोहा

परमागम रस प्राप्त कर करूं आत्म कल्याण ।
महा अर्घ्य अर्पित करूं पाऊ सम्यक ज्ञान ।।

ॐ ह्रीं श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रह प्रवचन सार समयसार नियमसार अष्टपाहुडाय महाअर्घ्यं नि ।

जयमाला

सिद्ध स्वपद पाने के पहिले चऊ अघातिया नाश चाहिये ।
घाति अघाति नाश करने को मुनि निग्रंथ स्वरूप चाहिये ।।
मुनि बनने के लिए आपको वीतराग चारित्र चाहिये ।
वीतराग चारित्र प्राप्ति हित तेरह विध चारित्र चाहिये ।।
भावलिग को वसुप्रवचन मातृका सर्वदा पूर्ण चाहिये ।
द्रव्यलिग को अट्ठाईस मूलगुण पालन सदा चाहिये ।।
द्रव्यलिग भी नहीं पल सके तो मुनि बनना नहीं चाहिये ।
महाव्रती बनने के पहिले देशव्रती अभ्यास चाहिये ।।
देशव्रती बनने के पहिले सम्यक दर्शन पास चाहिये ।
समकित पाने के पहिले मिथ्यादर्शन का नाश चाहिये ।।
मिथ्यादर्शन क्षय करने को तत्वो का अभ्यास चाहिये ।
तत्वों के अभ्यास हेतु तो जिनश्रुत का स्वाध्याय चाहिये ।।
स्वाध्याय के लिए आपको सदाचार आचरण चाहिये ।
अप्रतिबुद्ध दशा क्षय हित प्रतिबुद्ध अवस्था शीघ्र चाहिये ।।
कुन्दकुन्द आचार्य देव की बात मानना सदा चाहिये ।
जब तक श्रावक मुनि न हो सके तब तक दृढ श्रद्धान चाहिये ।।
पाचो परमागम का सार यही है जो उर मध्य चाहिये ।
इसके ही अनुसार चलें हम यह पुरुषार्थ महान चाहिये ।।

ॐ ह्रीं श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रह प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, अष्टपाहुडाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि ।

इत्यार्शीवाद

छंद-गीता

परमागम पाचों की महिमा हृदय भा गयी ।
ज्ञान भावना अतरग मे अब समागयी ।।
अब तो मैं पुरुषार्थ पूर्वक यत्न करूंगा ।
सकल कर्म मल भली भाँति सम्पूर्ण हरूंगा ।।

इत्याशीर्वाद

ॐ

श्री पंचास्तिकाय विधान

आचार्य श्री अमृत चंद्र सूरि देव

आज से एक सहस्र वर्ष पूर्व आचार्य कुन्दकुन्द रचित समयसार की
आत्म ख्याति टीका प्रवचनसार की तत्त्व प्रदीपिका टीका
श्री पचास्तिकाय सग्रह की समय व्याख्या टीका आदि अनेक ग्रथों
के समर्थ रचनाकार

अमृत चद सूरि देव को नमन करू मैं बारबार ।
टीका कर पचास्तिकाय की किया भव्यजन का उपकार।।

-राजमल पवैया

पंचास्तिकाय संग्रह विधान

मंगलाचरण

छन्द-अनुष्टुप

मंगलं सिद्ध परमेष्ठी मंगलं तीर्थकरम्।
मंगलं शुद्ध चैतन्यं आत्म धर्मोस्तु मंगलम्॥

छन्द-चामर

वीतराग श्री जिनेन्द्र ज्ञानरूप मगलम्।
गणधरादि सर्व साधु ध्यानरूप मंगलम्
आत्म धर्म वस्तु धर्म सार्व धर्म मंगलम्।
वस्तु का स्वभाव ही अनाद्यनंत मंगलम्

छन्द-निश्चल

सदानंद चैतन्य प्रकाश पाऊँ।
अनेकान्त का ही ध्वज मैं सजाऊँ॥
बनूं स्याद्वादी करूं आत्म चिन्तन।
विमल ज्ञान बल से हरूं कर्म बंधन॥

वीरछन्द

सहजानदी महिमामय चैतन्य प्रकाशमयी भगवान।
अनेकान्त में जो सुस्थित हैं वे परमात्मा परम महान॥
उनको नमस्कार करता हूं मन वचकाय त्रियोग संवार।
स्यात्कार सिद्धान्त सुपद्धति नमन करूँ मैं बारम्बार॥

छन्द-अनुष्टुप

सहजानंद चैतन्य प्रकाशाय महीयसे।
नमोऽनेकान्त विश्रान्त महिम्ने परमात्मने॥
पंचास्तिकाय षड्द्रव्य द्रव्य प्रकारेण प्ररूपणम्।
पूर्वमूलपदार्थानामिह सूत्रकृता कृतम्॥

पुष्पांजलि क्षिपामि

पीठिका

छन्द-गीतिका

पीठिका वर्णन करू पंचास्तिकाय महान की।
कुन्दकुन्दाचार्य विरचित श्रुतस्कध प्रधान की।।
पचास्तिकाय जु परमआगम ग्रंथ को वन्दन करू।
कुन्दकुन्दाचार्य श्रमणप्रधान पद अर्चन करू।।
अस्तिकाय प्रसिद्ध पुद्गल, जीव, धर्म, अधर्म, नभ।
येही पांचों इस त्रिलोकी विश्व में प्रतिपल सुलभ।।
काल भी है द्रव्य शाश्वत पर नहीं है अस्तिकाय।
द्रव्य षट् हैं जो सदा ही विश्व में पूरे समाय।।
नव पदार्थ स्वरूप समझू ज्ञान-वर्धन हेतु मैं।
आत्मतत्त्व पदार्थ जानू धर्म का बन केतु मैं।
जीव अजीव अरु आस्रव सवर तथा निर्जरा बध।
मोक्ष तत्त्व महान जानू जो सदा ही है अबध।।
मात्र जीवास्तिक त्रिकाली दृष्टि ध्रुव का विषय जान।
पुद्गलास्तिक तथा धर्मास्तिक-अधर्मास्तिक पिछान।।
जान आकाशास्तिक को फिर समझ लू काल द्रव्य।
पृथक् है अस्तित्व सबसे जीवतत्त्व परम सुभव्य।।
तृतीय प्राभृत में महा श्रुतस्कध द्वय कल्याणमय।
द्रव्य, तत्त्व पदार्थ का है प्ररूपक श्रुतज्ञान जय।।
स्वगुण रत्नावलि सुभूषित जुडी है निज हृदय से।
ज्ञान गगाजली द्वारा प्रवाहित निज निलय से।।

छद दिग्पाल

पचास्तिकाय सग्रह सम्पूर्ण जानिये।
शब्द, वाक्य, अर्थ, भाव सब पिछानिये।।

शब्दार्थ जानिये अरु भावार्थ जानिये।
इन सबको जान पूर्ण आचरण में आनिये॥
पंच अस्तिकाय की महिमा बड़ी महान।
जो इसको जान लेते पाते वही निर्वाण॥
पंचास्तिकाय वत है निज अस्तिकाय मेरा।
निज अस्तिकाय भी है मेरा स्वभाव चेरा॥
कर्मादि शत्रुओं ने मुझको सदैव घेरा।
नाशूंगा नाथ अब तो ससार का ये फेरा॥
कब तक रहेगा जग में हे नाथ मेरा डेरा।
मेरी स्वभाव परिणति ने मुझे आज हेरा॥

वीरछंद

सर्वलोकदर्शी चेतयिता है सर्वज्ञ स्वरूप अमूर्त्त।
अव्याबाधी सुख का स्वामी भी फिर भी पुद्गल सग है मूर्त्त॥
कर्म दोष से मुक्त आत्मा जब पा लेता है लोकान्त।
ध्रुव सर्वज्ञ सर्वदर्शी बन सौख्य अतीन्द्रिय प्राप्त नितान्त॥
उपोद्घात पचास्तिकाय से नव पदार्थ का होता ज्ञान।
नव पदार्थ में निज पदार्थ पा ज्ञाता पाता है निर्बाण॥
भाव प्राणधारी मुक्तात्मा है जीवत्व शक्ति सम्पन्न।
चार प्राणधारी जीवात्मा संसारी भव में उत्पन्न॥
निज स्वरूप अस्तित्व जान लूं ज्ञानभाव से हो भरपूर।
अपनी ज्ञान शक्ति के द्वारा कर्म प्रकृतिया कर दूँ चूर॥
अष्टकर्म कटक विनाश कर हो जाऊं अविकार प्रधान।
कुन्द कुन्द की महा कृपा से पाऊं शाश्वत पद निर्बाण॥
मैं निर्वाण प्राप्त कर स्वामी सिद्ध शिला वैभव पाऊं।
सिद्धपुरी की बस्ती में रह शाश्वत सुख अनत लाऊं॥

फिर न ध्यान हो अरु न ध्येय हो और न ध्याता हो भगवान।
ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प से रहित अवस्था मिले महान।।
शुद्ध त्रिकाली ध्रुव स्वलक्ष ले अष्ट कर्म कर दू अवसान।
महिमामय त्रैलोक्य जयी बन हो जाऊं अनत गुणवान।।
ज्ञान प्रवाद पूर्व की पावन दशम वस्तु है श्रेष्ठ प्रधान।
है तृतीय प्राभृत शिवदायी प्रथम द्वितिय श्रुतस्कंध महान।।

छन्द-राधिका

मैंने पाया है मोक्षमार्ग शिवसुख कर।
वेला पायी है समकित की भव दुखहर।।
है ज्ञान सूर्य छवि से शोभित निज अतर।
पौरुष है वज्र समान अटूट निजतर।।
मैं शुद्ध आतम चर्चा का लाभ उठाऊं।
सिद्धों की विरुदावलि के गीत गुजाऊँ।।
मैं मोह तोड़ कर बंधन तोड़ूं भव के।
सिद्धों के पथ पर चलू शान्ति अभिनव ले।।
दुर्दान्त मोह अन्तमुहूर्त्त में जीतू।
रागादि दोष से पूरा पूरा रीतू।।
मैं ज्ञानभावना से सम्मानित प्राणी।
मैं ज्ञानोदधि से उत्पन्नित हूँ ज्ञानी।।
मैंने तो आज सुनी जिनेन्द्र की वाणी।
पायी माता जिनवाणी जग कल्याणी।।
मैं बना बनाया हूँ भगवान निराला।
मैं हू अनन्त गुणमय अनंत सुख वाला।।
आमोद प्रमोद जगत के मैंने छोड़े।
परभावों से सम्बन्ध सभी ही तोड़े।।

मोहादिविकारी भाव समस्त मरोड़े।
अपने स्वभाव से नाते मैंने जोड़े।।
मेरी महिमा से शोभित है जिन आगम।
मेरे भीतर है कहीं न कर्मों का भ्रम।।
चैतन्य चद्र चिद्रूप शुद्ध चिन्मय हू।
चिच्चमत्कार चंद्रिका भरा शिवमय हूं।।
निज अस्तिकाय की महिमा अब प्रगटी है।
भव भ्रान्ति आज पूरी पूरी विघटी है।।
शिव पथ पर मैं आरूढ़ हुआ हू अब तो।
रत्नत्रय रथ पाया है मैंने अब तो।।
मैं मुक्ति पुरी सम्राट चक्रवर्ती हूँ।
आनन्दामृत अधिपति स्वभाववर्त्ती हूँ।।
मुझमें कोई भी दोष नहीं है अणु भर।
हू ज्ञान सुधामृत भूषित चिद्घन शिवकर।।
अविलम्ब आत्मा का ही ध्यान करूं मैं।
अविलम्ब कर्म बधन सम्पूर्ण हरूं मैं।।
गुणमणियों का व्यवसाय लाभदायक है।
अनुपम अभेद निजरूप सौख्य दायक है।।
सुरसरि पखारती है मेरे चरणों को।
शिवपुरि निहारती है मेरे वर्णों को।।
देदीप्यमान ज्योतिर्मय शुद्ध निराला।
मेरा स्वरूप है शक्ति अनंतों वाला।।
चिद्रूपी आभूषण हैं मेरे तन पर।
शिवरूपी ध्रुव भूषण हैं मेरे मन पर।।

प्रतिपल प्रतिक्षण तो है विकास मेरा हो।
जीवंत शक्ति ध्रुव हे निवास मेरा हो।।
ध्वज दड सत्य का तथा शान्ति का ध्वज है।
चरणों में नत युवराज्ञी मुक्ति सलज है।।
मैं कुन्दकुन्द भाषा प्राकृत अनुगामी।
उनके चरणों का सेवक हू निष्कामी।।
मैं अनुभव रस से भरा हुआ मोदक हूँ।
मैं विनययुक्त हू ज्ञान शौर्य द्योतक हूँ।।
मं उत्कंठित हू शीघ्र विजय पाने को।
ससारपार कर मुक्तिपुरी जाने को ।।

छद पचचामर

जान लू मैं पच अस्तिकाय का स्वरूप आज।
छहों द्रव्य जान कर प्राप्त करू ध्रुव स्वराज।।
ज्ञान दर्शनमयी शुद्ध आत्म द्रव्य हू।
सदेव से अनादि हू अनत हू सुलभ्य हूँ।।
कर्मचेतना का चक्र मेरा घोर शत्रु है।
ज्ञानचेतना का भाव मेरा बड़ा मित्र है।।
रूप रस गध पर्श शब्द से विहीन हू।
मं समर्थ शक्तिवान रच नहीं दीन हूँ।।
महावीर वाणी का अनुगामी हू सदैव।
मेरा है स्वभाव शुद्ध शिवगामी हू सदेव।।
राग कंटकों से मेरा मुक्ति पथ विहीन है।
मेरी शक्तियाँ निहार राग हुआ क्षीण है।।
मुक्ति प्रिया मेरे लिए गूंथ लायी वरमाल।
मेरे रूप को निहार हो गई स्वयं निहाल।।

अब तो उसी के संग ही सदैव रहूंगा।
ज्ञान के समुद्र में ही मैं सदैव बहूंगा।।
उल्लसित होके मुझे उसने झुकाया शीष।
क्योंकि मैं ही भगवान आत्मा हू जगदीश।।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध हू परम प्रबुद्ध हूं।
पूर्ण ज्ञानचेतना समुद्र परिशुद्ध हूँ।।

छंद-वसन्त तिलक

विज्ञान ज्ञान घन का परिपूर्ण सागर।
फिर भी रही सदा ही निज शुष्क गागर।।
आत्मोत्पन्न सुख का दर्शन नहीं है।
अब तक विभावपति है चैतन्य नागर।।
ज्ञानाब्धि की तरंगे अब उठ रही हैं।
उर मे अपूर्व सरिताएं बह रही है।।
उद्भव स्वरूप मेरा अब जग रहा है।
मोहादि भाव मिथ्या भी भग रहा है।।

छंद-शार्दूलविक्रीडित

माना मैंने ज्ञानभावमय हूं परिपूर्ण हूँ शान्त हूं।
सिद्धों सम सम्पूर्ण सौख्यशाली निर्वैर निर्भ्रान्त हूँ।।
शत इन्द्रों से हूं सदैव वन्दित लोकाग्र ही धाम है।
महिमारूप अनत गुणमयी आनन्द का प्रान्त हू।।
आनदामृत की बहार आयी जीवन सफल हो गया।
अब तक था अज्ञान भाव भीतर वह भी विरल हो गया।।
क्षण में ही क्षय हुई समल भाषा मिथ्यात्व भी खो गया।
जब से जाग्रत हुआ स्वय में ही परभाव ही सो गया।।

दोहा

आत्मतत्त्व से प्रीत कर करूं आत्म कल्याण।
बर्हितत्व से रीत कर करूं कर्म अवसान।।
सरल ग्रंथ पंचास्ति की महिमा अपरंपार।
पूजन कर होऊँ सुखी पाऊँ सुख अविकार।।

पुष्पाञ्जलि क्षिपामि

ॐ

श्री पंचास्तिकाय विधान

प्रातः स्मरणीय परम पूज्य आचार्य कुन्द कुन्द देव

दो सहस्र वर्ष पूर्व पच परमागम श्री पचास्तिकाय सग्रह,
श्री प्रवचन सार, श्री नियम सार, श्री समयसार, श्री अष्टपाहुड
आदि चौरासी पाहुडों के महान रचना कार

कुन्दकुन्द आचार्य देव को मेरा वदन बारबार।
पुन. पुन. चरणाम्बुज पूजू परमागम के रचनाकार ॥

-राजमल पवैया

लघु पीठिका

समुच्चय पूजन

(पन्चास्तिकाय संग्रह विधान)

छन्द ताटक

है पचास्तिकाय की उत्तम समय व्याख्या हितकारी।
स्यात् कार सिद्धांत सुपद्धत्ति से भूषित शिवसुखकारी।।
पाचों अस्तिकाय का वर्णन काल द्रव्य का सत्य कथन।
मुख्य गौण कथनी को समझो सारभूत को करो ग्रहण।।
अतस्तत्व कथन है सम्यक् बहिर्तत्व का कथन विशेष।
नव पदार्थ पूर्वक पचास्तिकाय की कथनी है सविशेष।।
सर्व प्रथम अधिकार प्रथम में षड् द्रव्यों का है वर्णन।
और द्वितीय अधिकार मध्य में नव पदार्थ पूर्वक सुकथन।।
इसमें ही है सम्यक्दर्शन ज्ञान चरित्र कथन अनुमप।
जिन भगवतों की यह कथनी यही प्रथम श्रुतस्कध परम।।
फिर है नव पदार्थ पूर्वक मोक्षमार्ग प्रपच कथनी।
यहीद्वितीय श्रुतस्कध जानिये मुक्तिमार्ग श्रम की कथनी।।
मोक्षपदार्थ व्याख्यान कर यह समाप्त हो जाता है।
मोक्षमार्ग प्रपच सूचिका चूलिका कथन सुहाता है।।
भलीभाति से आप समझलो निश्चय अरु व्यवहार चरित्र।
सम्यक् पर चारित्र जान लो सम्यक् ही जानो स्वचरित्र।।
यहा पर समय तथा स्वसमय की व्याख्या पूरी होती।
मोक्षमार्ग की जो दूरी है वह अत्यन्त निकट होती।।
शुद्ध परम नैष्कर्म्य रूप शिव कृतकृत्य अत्यंत विशुद्ध।
आत्म स्वरूप प्रकट हो जाता सिद्ध स्वपद मिल जाता शुद्ध।।

पुष्पाजलि क्षिपामि

पूजन क्रमांक-१

पंचास्तिकाय संग्रह विधान

समुच्चय पूजन

दोहा

प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध का करूं अल्प प्रभु ज्ञान।
नव पदार्थ पचास्ति युत षड्द्रव्यों का भान।।
जिन आगम की भूमिका मंगल सौख्य स्वरूप।
परमागम का सार है निर्मल आत्म स्वरूप।।

छंद-गीतिका

भाव पूजन द्रव्य पूजन का हृदय में भाव है।
ज्ञानमाला पास में है दर्श मोह अभाव है।।
पास में सम्यक्त्व है जो स्वपर ज्ञान स्वरूप है।
ज्ञान है सम्यक् सहज चारित्र शुद्ध अनूप है।।
अब नहीं भव में रहूंगा भव अभाव विचार है।
मुक्ति पथ मुझ को सरल है ज्ञान अपरंपार है।।
यही रत्नत्रय स्वनिधि शिवपुर मुझे ले जाएगी।
गुणस्थानातीत अवसर शीघ्र अब तो लाएगी।।
नहीं आह्वानन किया है नहीं सुस्थापन किया।
नहीं सन्निधिकरण सक्रिय भक्ति को ही सग लिया।।
जल फलादिक द्रव्य वसु का भी नहीं कुछ ज्ञान है।
अभी ज्ञानोदधि न पाया पास में अज्ञान है।।
नष्ट कर अज्ञान को मैं ज्ञान का पाऊं नगर।
कुन्दकुन्द परम कृपा से प्राप्त हो शिवसुख डगर।।

मोक्ष के पथ पर चलू मैं रत्नत्रय की भक्ति ले।
मुक्ति-लक्ष्मी से मिलू मैं नाथ उत्तम शक्ति ले।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रवाद पूर्वान्तर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृतान्तर्गत श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रह अत्र अवतर अवतर सवौषट आह्वानन।
ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रवाद पूर्वान्तर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृतान्तर्गत श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन नि ।
ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रवाद पूर्वान्तर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृतान्तर्गत श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रह अत्र मम सन्निहितो भव भ वषट् सन्निधिकरण।।

अष्टक

छद-मानव

समकित सागर का हे प्रभु, पावन जल चरण चढाऊँ।
दुख जन्म मृत्यु क्षय करने शिव पथ पर चरण बढाऊँ।।
पचास्तिकाय सग्रह की महिमा निजपुर में लाऊँ।
निज अस्तिकाय को जानू ससारोदधि तर जाऊ।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कध स्वरूप श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रह जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जल नि ।

समभावी चंदन लाऊ अपने सर्वांग लगाऊँ।
भव-ज्वर पूरा हो स्वामी पलभर में अभी भगाऊँ।।
पचास्तिकाय संग्रह की महिमा निजपुर में लाऊँ।
निज अस्तिकाय को जानू ससारोदधि तर जाऊ।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कध स्वरूप श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रहे ससारताप विनाशनाय चदन नि ।

उर साम्यभाव के अक्षत अति निर्मल शुचि मय लाउँ।
भव पीडा क्षण में काटूं परिपूर्ण सौख्य निधि पाऊँ।।
पचास्तिकाय सग्रह की महिमा निजपुर में लाऊँ।
निज अस्तिकाय को जानू संसारोदधि तर जाऊ।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कध स्वरूप श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रहे अक्षय पद प्राप्ताय अक्षत नि ।

शुद्धात्म ज्ञान दर्शन के चुन-चुन कर पुष्प सजाऊँ।
कामाग्नि दोष को जयकर निर्दोष अवस्था पाऊँ।।
पंचास्तिकाय संग्रह की महिमा निजपुर में लाऊँ।
निज अस्तिकाय को जानूं संसारोदधि तर जाऊं।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कंध स्वरूप श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं नि ।

परमात्म दशा के रसमय नैवेद्य चढ़ा सुख पाऊँ।
दुख क्षुधा वेदनी क्षयकर शिवरस समुद्र प्रगटाऊँ।।
पंचास्तिकाय संग्रह की महिमा निजपुर में लाऊँ।
निज अस्तिकाय को जानूं संसारोदधि तर जाऊं।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कंध स्वरूप श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य नि ।

सिद्धत्व शक्ति के दीपक की जगमग ज्योति जगाऊँ।
मोहादिभाव के तम को पल में सम्पूर्ण मिटाऊँ।।
पंचास्तिकाय संग्रह की महिमा निजपुर में लाऊँ।
निज अस्तिकाय को जानू संसारोदधि तर जाऊं।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कंध स्वरूप श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि ।

आत्मत्व भाव की पावन ध्रुव धूप ध्यान मय लाऊँ।
कर्माष्टक पूर्ण जलाऊं परिपूर्ण अवस्था पाऊं।।
पंचास्तिकाय संग्रह की महिमा निजपुर में लाऊँ।
निज अस्तिकाय को जानू संसारोदधि तर जाऊं।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कंध स्वरूप श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अष्टकर्म दहनाय धूपं नि ।

फल लाऊँ मोक्षपुरी के अनुभव रस भीने शिवमय।
नाशूं विभाव की उलझन पाऊं स्वभाव ध्रुव निजमय।।

पंचास्तिकाय संग्रह की महिमा निजपुर में लाऊँ।

निज अस्तिकाय को जानूं संसारोदधि तर जाऊं।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कध स्वरूप श्री परमागम पचास्तिकायसंग्रहे मोक्षफल प्राप्ताय फलं नि ।

अर्घ्यावलि चरण सजाऊँ भव भोग देह सुख तजकर।

पाऊँ अनर्घ्य पद अपना, अपने स्वभाव को भजकर।।

पचास्तिकाय संग्रह की महिमा निजपुर में लाऊँ।

निज अस्तिकाय को जानूं संसारोदधि तर जाऊं।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कध स्वरूप श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रहे अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्यं।।

महार्घ्य

छंद-समान सवैया

महारोग मिथ्यात्व दुष्ट ही सदा सदा दुख देता आया।

उसे नष्ट करने का अवसर अति कठिनाई से प्रभु पाया।।

परम रसायन भूत दिव्य औषधि सम्यक् दर्शन की पायी।

तो सर्वांग तरंगावलि शीतल उपजी निज हृदय समायी।।

मैं आनंद तरंगावलि से गर्भित महा समुद्र निराला।

अद्भुत निधि सम्पन्न शाश्वत चेतन रत्नाकर गुणवाला।।

अनुभव शक्ति विलक्षण मेरी अपने ही दर्शन कर लेती।

मोक्षोन्मुख होते ही तत्क्षण सकल कर्म क्षय भी कर देती।।

है अचिन्त्य बल मेरे भीतर जिसका कोई पार नहीं है।

मैं सर्वार्थ सिद्ध हूं ध्रुव हूं मुझमें अब संसार नहीं है।।

अनुभवगोचर चित् स्वभाव ही धर्म असाधारण है मेरा।

नय-पक्षों से रहित सर्वथा शुद्ध स्वरूप शाश्वत मेरा।।

जीव दृश्य है या अदृश्य है यह वह सोचे जो हो अंधा अंधा।

मैं त्रिकालगोचर हूं दृष्टा पर का कोई शेष न धंधा।।

दुर्धर आश्रव दुष्ट धनुर्धर अविजेता को मैं जीतूंगा।
जिनभावों से आश्रव होता उन भावों से मैं रीतूंगा।।
आश्रव को संवर कुमार निज पलभर में जयकर सकता है।
पलक झपते ही वह इसकी सारी द्युति को हर सकता है।।

वीरछंद

भाव ज्ञान करने का मेरा सतत प्रयत्न बने बलवान।
कर्म नष्ट करने का उद्यम मेरा सफल बने भगवान।।
कभी विभाव भाव से मेरा रंच नहीं हो प्रभु संबंध।
फल पंचास्तिकाय संग्रह का पाऊँ होऊं पूर्ण अबंध।।

दोहा

श्रुतस्कंध पंचास्ति को नमन करूं मैं आज।
महाअर्घ्य अर्पित करूं पाऊँ निज पद राज।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितिय श्रुतस्कंध स्वरूप श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रह महार्घ्यं नि।

जयमाला

छन्द गीतिका

भेद रत्नत्रय समझले शुद्धकर निज आत्मभाव।
उग्र हो पुरुषार्थ तो फिर प्रकट हो परमात्म भाव।।
द्रव्य श्रुत के संस्कारों से न होना तू अधीर।
भाव श्रुत का ज्ञान करले अभी हर संसार पीर।।
साध्य साधन भिन्न होते ही नहीं यह जान ले।
आत्मा ही साध्य साधन साधना है मान ले।।
कर्म कादवताल से बच शान्त हो निज में समा।
क्रियाकाण्ड विकार तज दे स्वयं को निज में रमा।।

छोड मंथर चाल अपनी तीव्रगति से चलाचल।
भेद दश प्रायश्चितों से शक्ति अपनी बढ़ा चल॥
आत्मा पर दृष्टि होतो जीव सम्यक् दृष्टि है।
दृष्टि है शुभ अशुभ पर तो जीव मिथ्या दृष्टि है॥
मदरूप कषाय का सेवन नहीं हितरूप है।
तीव्र रूप कषाय सेवन सर्वथा दुखरूप है॥
कर्मफल की चेतना में पाप की पूरी प्रवृत्ति।
चेतना यदि ज्ञान की है तो विभावों से निवृत्ति॥
चरण के परिणाम का ही अनुष्ठान महान है
जो कि सम्यक् रूप निश्चय भूत श्रेष्ठ प्रधान है॥
स्वानुभूति महान जिनके उदय होती अतरग।
कर्माव्याधि प्रचड को वे नष्ट करते पा स्वरग॥
निष्प्रमाद दशा हुए बिन सर्व है सन्यास व्यर्थ।
प्रमादी प्राणी कभी भी जानता है नहीं अर्थ॥
ज्ञान में विश्रान्ति का पुरुषार्थ पावन अभी कर।
शब्द ब्रह्म सुफल मिलेगा कर्म फल चेतना हर॥
समय की व्याख्या समझ कर बन महान स्वरूप गुप्त।
तू अमूर्तिक ज्ञान मात्र स्वरूप में हो अभी गुप्त॥
समझले प्रस्तावना जो मोक्ष का ह है उपोद्घात।
रत्नत्रय की शक्ति ही जीवत लाएगी प्रभात॥
कर्मकादव से पृथक् हो औदयिक परभाव मोड।
पारिणामिक भाव शाश्वत से अभी तू नेह जोड़॥
जीवका सद्भाव तो है पारिणामिक भाव ही।

सादि और अनंत है यह कर्म क्षय का हेतु ही॥
व्यवहार नय के कथन से एकत्व है यह जीव तन।
किन्तु निश्चय से सदा ही प्रथक है आनंदघन॥
मात्र इतना ज्ञान ही पर्याप्त है शिवमार्ग में।
स्पर ज्ञान विवेक अणुभर भी नहीं उन्मार्ग में॥

अर्घ कुन्डलिया

कुन्दकुन्द के वचन ही जगती में अनमोल।
जो भी हृदयंगम करे बनता सिद्ध अडोल॥
बनता सिद्ध अडोल अकंप अचल अविनाशी।
मुक्तिमार्ग में मोह जीतता बन प्रत्याशी॥
रूप गंध रस पर्श देह मे रत अज्ञानी।
शुद्ध स्वभावभाव रस में रत रहता ज्ञानी॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत ज्ञानप्रवादपूर्वान्तिर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृतान्तर्गत प्रथम -द्वितीय श्रुतस्कंध रूप श्रीपरमागमपंचास्तिकायसंग्रहे जयमाला पूर्णार्घ्यं नि ।

आशीर्वाद

अर्घ कुन्डलिया

अस्तिकाय निज जानकर करुं तत्व का ज्ञान।
स्वपर भेद विज्ञान पा करूं आत्म कल्याण॥
करु आत्म कल्याण सुनिधि समकित की पाऊँ।
सम्यक् ज्ञान पूर्वक उर चारित्र सजाऊँ।
यह रत्नत्रय धर्म प्रगट हो खिले स्व सरसिज।
पाया मैंने बिना परिश्रम अस्तिकाय निज॥

इत्याशीर्वाद

ॐ

लघु पीठिका

(षड् द्रव्य पंचास्तिकाय वर्णन पूजन)

छंद मत्त सवैया

षड् द्रव्य सहित पचास्तिकाय का वर्णन है इसमें पवित्र ।
अब इसे जान निज आस्तिकाय का ज्ञान करूँ पावन सच्चित्र॥
है जीव द्रव्य ही सर्वोत्तम पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल ।
इनसे शोभित हैं तीन लोक आकाश अलोकाकाश भाल ॥
जीवत्व स्वंय को पहचानो निरुपाधिस्वरूप अतीन्द्रिय ध्रुव।
ज्ञानादि अनत स्वगुण मडित जितने विभाव हैं सभी अध्रुव ॥
पुद्गल से नाता जोड स्वय अपनी भूलों से दुखी हुआ ।
अतएव आज तक कभी नहीं पलभर को भी यह सुखी हुआ॥
निज अस्तिकाय को कभी नहीं समझा इसने परवश होकर।
चारों गतियों में भ्रमा सदा अपनी उत्तम सुध बुध खोकर ॥
जब जब भी इसे मिला अवसर खोया विषयों के वशीभूत।
निज परिणति के स्वर सुन कर भी इसने समझा उसको अद्भृत।
नर सुर पशु नर्क दशा पायी फिर भी ये चेत नहीं पाया ॥
परिणाम हुआ यह फिर निगोद में गया जहाँ बहु दुख पाया ।
अष्टादश मरण किये इसने इतने ही जन्म किये प्रति क्षण ॥
श्वासोच्छ्वास इक में दुख पा पछताया कर बहु बार मरण ।
करके अकाम निर्जरा बहुत फिर पुण्योदय इसने पाया ॥
इस बार हो गया पुन मनुज दुख भूल निगोदों के आया ।
अब फिर अवसर अपूर्व आया जिन श्रुत जिन कुल सुबुद्धि पायी॥
पचास्तिकाय की महिमा भी इसके उर अन्तर में छायी ॥
अब देर नहीं है शिव सुख में भव सागर क्षय कर डालेगा ।
निज अस्तिकाय को जान शीघ्र शिवपुर की वस्ती पा लेगा॥

छद कुण्डलिया

है पचास्तिकाय की महिमा महा महान ।
कुन्दकुन्द की कृपा से निज अस्तित्व पिछान ॥
निज अस्तित्व पिछान स्वय के दर्शन कर लो।
दर्शन ज्ञान चरित्र धार भव बधन हर लो ।
इन पाचों से उत्तम छवि निज अस्तिकाय की ।
महिमा जानो जो भी हैं पचास्तिकाय की ॥

पुष्पाजलि

पूजन क्रमांक-२

षडद्रव्य पंचास्तिकाय वर्णन पूजन

स्थापना

दोहा

करूं ज्ञान षड् द्रव्य का सुन पंचास्तिकाय।
अस्तिकाय निज जानकर पाऊँ पद शिवदाय।।

छंद-मानव

षड द्रव्य जगत में अपने अपने स्वरूप में रहते।
जो इनको नहीं जानते वे भव सागर में बहते।।
है जीव और पुद्गल का सबध सदा से विकृत।
ज्ञानी को ज्ञान हुआ है दोनों ही भिन्न अबधित।।
धर्मास्तिकाय दोनों की गति में निमित्त होता है।
अरु द्रव्य अधर्म अगति में ही तो निमित्त होता है।।
यह वस्तु स्वरूप जगत का स्वाधीन स्वतत्र सदा से।
कोई न किसी का कर्त्ता परतत्र न कभी सदा से।।
पचास्तिकाय के पाँचों ही अस्तिकाय पहचानों।
सब की स्वतंत्र सत्ता है अब काल द्रव्य भी जानो।।
वर्त्तन में जो निमित्त है वह काल द्रव्य होता है।
कायत्व नहीं हैं इसमें द्रव्यत्व पूर्ण होता हैं ।
यह विश्व व्यवस्था अपने षडद्रव्यों सहित व्यस्थित।
इसमें परिवर्तन करने की तो खोटी मति है निश्चित।।
मैं यह सब सम्यक् समझू निज आत्म द्रव्य को जानूं।
आनद अतीन्द्रिय पाने को निज अस्तित्व पिछानूं।।

दोहा

प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध की महिमा अपरंपार।
वस्तुतत्त्व को जानकर पाऊँ ज्ञानागार।।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध षड्द्रव्य पंचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध षड्द्रव्य पंचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध षड्द्रव्य पंचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं पुष्पांजलिं क्षिपामि।

अष्टक

छंद दिग्पाल

मैं ज्ञान ज्योति जल से अभिषेक रचाऊँगा।
सम्यक्त्व भाव द्वारा श्रृंगार कराऊँगा।।
मैं कुन्दकुन्द मुनिवर की वन्दना करूंगा।
पंचास्तिकाय पढ़कर भव वेदना हरूंगा।।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध षड्द्रव्य पंचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

दर्शनमयी स्वचंदन का तिलक लगाऊँगा।
संसारताप पूरा पलभर में भगाऊँगा।।
मैं कुन्दकुन्द मुनिवर की वन्दना करूंगा।
पंचास्तिकाय पढ़कर भव वेदना हरूंगा।।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध षड्द्रव्य पंचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

मैं ज्ञानचेतना के अक्षत सदा चढ़ाऊं।
संसारपार करने को अब चरण बढ़ाऊँ।।
मैं कुन्दकुन्द मुनिवर की वन्दना करूंगा।
पंचास्तिकाय पढ़कर भव वेदना हरूंगा।।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध षड्द्रव्य पंचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतं नि.।

मैं कर्म चेतना के पर्वत को दुचल दूंगा।
चिर काम वासना को पुष्पों से कुचल दूंगा।।
मैं कुन्दकुन्द मुनिवर की वन्दना करूंगा।
पचास्तिकाय पढ़कर भव वेदना हरूंगा।।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध षड्द्रव्य पचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रहे कामवाण विध्वसनाय पुष्प नि ।

अनुभवमयी स्वरस के चरु पुंज आज लाऊँ।
इस कर्म वेदनी को पूरा अभी मिटाऊँ।।
मै कुन्दकुन्द मुनिवर की वन्दना करुंगा।
पचास्तिकाय पढ़कर भव वेदना हरूगा।।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध षड्द्रव्य पचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पचास्तिका सग्रहे क्षुदारोग विनाशनाय नैवेद्य नि ।

निज दीप रत्नत्रय के ज्योतिर्मयी जगाऊँ।
मोहान्धकार भव का पलमात्र मे हटाऊँ।।
मैं कुन्दकुन्द मुनिवर की वन्दना करुगा।
पचास्तिकाय पढ़कर भव वेदना हरूंगा।।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध षड्द्रव्य पचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पचास्तिक सग्रहे मोहान्धकार विनाशनाय दीप नि ।

मैं आर्तरौद्र नाशूं ध्रुव धर्म धूप द्वारा।
ले शुक्ल ध्यान मेटूं कर्मो की कष्ट कारा।।
मै कुन्दकुन्द मुनिवर की वन्दना करुगा।
पचास्तिकाय पढ़कर भव वेदना हरूंगा।।

ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध षड्द्रव्य पचास्तिकायवर्णनि श्री परमागम पचास्ति सग्रहे अष्टकर्म दहनाय धूप नि ।

कैवल्य ज्ञानफल पा मैं मुक्ति पुरी जाऊँ।
सिद्ध के समान ही साम्राज्य पूर्ण पाऊँ।।

मैं कुन्दकुन्द मुनिवर की वन्दना करुगा।
पंचास्तिकाय पढ़कर भव वेदना हरूंगा।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररुपित प्रथम श्रुतस्कंधे षड द्रव्य पचास्तिकाय वर्ण श्री परमागम पचास्तिकाय सगाहे मोक्षफल प्राप्ताय फल नि ।

शुद्धात्म भावना के ही अर्घ्य मैं बनाऊँ।
पदवी अनर्घ्य अपनी सम्पूर्ण नाथ पाऊँ।।
मैं कुन्दकुन्द मुनिवर की वन्दना करुंगा।
पचास्तिकाय पढ़कर भव वेदना हरूगा।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररुपित प्रथम श्रुतस्कंधे षड्द्रव्य पचास्तिकाय वर्ण श्री परमागम पचास्तिकाय सगाहे अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्य नि ।

ॐ

अर्घ्यावलि

षड द्रव्य पंचास्तिकाय वर्णन

(१)

यहाँ (इस गाथा में) ''जिनों को नमस्कार हो'' ऐसा कहकर शास्त्र के आदि में जिनको भावनमस्कार रूप असाधारण मगल कहा। ''जो अनादि प्रवाह से प्रवर्तते (-चले आ रहे) हुए, अनादि प्रवाह से ही प्रवर्तमान (-चले आ रहे) सौ सौ इन्द्रों से वंदित हैं।

इदसदवंदियाण तिहुवणहिदमधुर विसदवक्काण।
अंतातीदगुणाण णमो जिणाणं जिदभवाणं।।१।।

छंद-ताटंक

शत इन्द्रों से वन्दित त्रिभुवन हितकर विमल विशद वाणी।
गुण अनत पति भव विजयी जिनराज नमन त्रिकालज्ञानी।।
भवनालय चालीस इन्द्र व्यतर बत्तीस कल्प चौबीस।
द्वय ज्योतिषी मनुष्य एक तिर्यंच एक शतपति जगदीश।।
अकृतकृत्य जीवों के स्वामी शरणभूत हो महिमावत।
दिव्य ध्वनि पति ध्रुव चैतन्य विलासी कृतकृत्य भगवत।।
यह मगल आचरण विनयमय मगल का भी मगल हो।
सर्व विषमताएँ मिट जाए भव का दूर उदंगल हो।।
मैं पंचास्तिकाय सग्रह की महिमा पाऊँ हे जिनराज।।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध जानकर मैं अब पाऊँ निज पद राज।।
धन्य-धन्य हैं कुन्दकुन्द ऋषि धन्य-धन्य है परमागम।
मोक्षमार्ग के दर्शन पाए नष्ट हुआ मिथ्या-भ्रम-तम।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञप्ररूपित प्रथम श्रुतस्कधे श्रीपरमागमपंचास्तिकायसग्रहे अर्घ्यं नि ।

(२)

समय अर्थात् आगम; उसे प्रणाम करके स्वयं उसका कथन करेंगे ऐसी यहाँ (श्री मद्भगवत्कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने) प्रतिज्ञा की है। वह (समय) प्रणाम करने एवं कथन करने योग्य है, क्योंकि वह आप्त द्वारा उपदिष्ट होने से सफल है वहाँ, उसका आप्त द्वारा उपदिष्टपना इसलिये है कि जिससे वह "श्रमण के मुखसे निकला हुआ अर्थमय" है। 'श्रमण' अर्थात् महाश्रमण-सर्वज्ञवीतरागदेव; और 'अर्थ' अर्थात् अनेक शब्दों के सम्बन्ध से कहा जानेवाला, वस्तुरूप से एक ऐसा पदार्थ।

समणमुहुग्गदमट्ठं चदुग्गदिणिवारणं सणिव्वाणं।
एसो पणमिय सिरसा समयमिणं सुणह वोच्छामि।।२।।

छन्द ताटंक

जिन सर्वज्ञ महामुनि मुख से जिस पदार्थ का कथन हुआ।
उसी समयआगम को वन्दन करता जो जिनवचन हुआ।।
चहुगति हर्ता शिसुखकर्ता सर्व अर्थमय समयागम।
आप्त कथित शुद्धात्म तत्त्व की कथनी हरती भव विभ्रम।।
मैं पंचास्तिकाय संग्रह की महिमा पाऊँ हे जिनराज।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध जानकर मैं अब पाऊँ निज पद राज।।२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञप्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंधे श्रीपरमागमपञ्चास्तिकायसंग्रहे अर्घ्यं नि।

(३)

यहाँ (इस गाथा में) शब्द रूप से, ज्ञानरूप से और अर्थरूप से (शब्द समय, ज्ञानसमय और अर्थसमय)-ऐसे तीन प्रकार से "समय" शब्द का अर्थ कहा है तथा लोक-अलोकरूप विभाग कहा है।

समवाओ पंचण्हं समउ त्ति जिणुत्तमेहिं पण्णत्तं।
सो चेव हवदि लोओ तत्तो अमिओ अलोओ खं।।३।।

वीरछंद

पाँचों अस्तिकाय का सम्यक् शुद्ध बोध है समयप्रसिद्ध।
परतंत्रता निवृत्ति मात्र जिसका लक्षण है अति सुप्रसिद्ध।।
पांचों अस्तिकाय जिसमें रहते हैं वह है लोक अमाप।
मिथ्यादर्शन उदय नष्ट कर हरना है भवदुख संताप।।
मैं पंचास्तिकाय संग्रह की महिमा पाऊँ हे जिनराज।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध जानकर मैं अब पाऊँ निज पदराज।।३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञप्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंधे श्रीपरमागमपंचास्तिकायसंग्रह अर्घ्यं नि ।

(४)

यहां (इस गाथा में) पांच अस्तिकायों की विशेषसंज्ञा, सामान्य विशेष अस्तित्व तथा कायत्व कहा है।

जीवा पोग्गलकाया धम्माधम्मा तहेव आगासं।
अत्थित्तम्हि य णियदा अणण्णमइया अणुमहंता।।४।।

वीरछंद

जीव रु पुद्गल धर्माधर्माकाश नियत अस्तित्व स्वरूप।
अणु महान कायत्व स्वगुण से है उत्पाद, ध्रौव्य, व्यय रूप।।
कालाणु अस्तित्व सहित है किन्तु उसे कायत्व नहीं।
इसलिये वह द्रव्य कहाता अस्तिकाय वह कभी नहीं।।
मैं पंचास्तिकाय संग्रह की महिमा पाऊँ हे जिनराज।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध जानकर मैं अब पाऊँ निज पदराज।।४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञप्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंधे श्रीपरमागमपंचास्तिकायसंग्रह अर्घ्यं नि ।

(५)

यह पाच अस्तिकायों का अस्तित्व किसप्रकार है और कायत्व किस प्रकार है वह कहा है।

जेसिं अत्थि सहाओ गुणेहि सह पज्जएहिं विविहेहिं।
ते होंति अत्थिकाया णिप्पण्णं जेहिं तइल्लोक्कं।।५।।

वीरछंद

विविधगुणों अरु पर्यायों के साथ जिन्हों का है अपनत्व।
वे ही अस्तिकाय पाचों हैं युत अस्तित्व और कायत्व।।
ऊर्ध्व मध्य अरु अधोत्रयी से तीनों लोक हुए निष्पन्न।
मूल पदार्थ कथचित सदृश कथचित परिवर्तित उत्पन्न।।
मैं पचास्तिकाय सग्रह की महिमा पाऊँ हे जिनराज।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कध जानकर मैं अब पाऊँ निज पद राज।।५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि।

(६)

यहा पाच अस्तिकायों को तथा कालको द्रव्यपना कहा है।

ते चेव अत्थिकाया तेक्कालियभावपरिणदा णिच्चा।
गच्छंति दवियभावं परियट्टणलिंगसंजुत्ता।।६।।

वीरछंद

तीन काल के भावों रूप सदा परिणमते हैं ये नित्य।
अस्तिकाय परिवर्तन लिंगी सब द्रव्यों में है द्रव्यत्व।।
मैं पचास्तिकाय सग्रह की महिमा पाऊँ हे जिनराज।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कध जानकर मैं अब पाऊँ निज पद राज।।६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि।

(७)

यहा छह द्रव्यों को परस्पर अत्यन्त सकर होने पर भी वे प्रतिनियत (अपने-अपने निश्चित) स्वरूप मे च्युत नहीं होते ऐसा कहा है। इसीलिये (अपने-अपने स्वभाव से च्युत नहीं होते इसीलिये), परिणामवाले होने पर भी वे नित्य हैं– ऐसा पहले (छठवीं गाथा में) कहा था, और इसीलिय वे एकत्व को प्राप्त नहीं होते, और यद्यपि जीव तथा कर्म को व्यवहारनय के कथन मे एकत्व (कहा जाता) है तथापि वे (जीव तथा कर्म) एक-दूसर के स्वरूप को ग्रहण नहीं करते।।७।।

अण्णोण्णं पविसता दिता ओगासमण्णमण्णस्स।
मेलंता वि य णिच्च सगं सभाव ण विजहति।।७।।

वीरछंद

एक दूसरे में प्रवेश करते अन्योन्य देय अवकाश।
आपस में मिल जाते किन्तु स्वभाव छोड़ते नहीं विकास।।
मैं पचास्तिकाय सग्रह की महिमा पाऊँ हे जिनराज।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध जानकर मैं अब पाऊँ निज पद राज।।७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्क ध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(८)

यहा अस्तित्व का स्वरूप कहा है।

सत्ता सव्वपयत्था सविस्सरूवा अणंतपज्जाया।
भगुप्पादधुवत्ता सप्पडिवक्खा हवदि एक्का।।८।।

वीरछंद

सत्ता व्यय उत्पाद ध्रौव्ययुत सर्व पदार्थ स्थित है एक।
एक सविश्वरूप अनत पर्यायमयी सप्रतिपक्षी एक।।
मैं पचास्तिकाय सग्रह की महिमा पाऊँ है जिनराज।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध जानकर मैं अब पाऊँ निज पद राज।।८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(९)

यहा सत्ता को और द्रव्य को अर्थान्तरपना (भिन्नपदार्थपना, अनन्यपदार्थपना) होने का खडन किया है।

दवियदि गच्छदि ताइं ताइ सब्भावपज्जयाइं जं।
दवियं तं भण्णंते अणण्णभूदं तु सत्तादो।।९।।

छद तारक

उन सद्भावो पर्यायों को जो भी प्राप्त द्रवित होता।
वही द्रव्य है सत्ता से जो अनन्यभूत है प्रस्तोता।।
मैं पंचास्तिकाय सग्रह की महिमा पाऊं हे जिनराज।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कध जानकर मै अब पाऊं निज पद राज।।९।।

ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कन्ध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१०)

यहा तीन प्रकार से द्रव्य का लक्षण कहा है।

दव्व सल्लक्खणिय उप्पादव्वयधुवत्तसजुत्तं।
गुणपज्जयासय वा जत भण्णंति सव्वण्हू।।१०।।

छद-तारक

व्यय उत्पाद ध्रौव्य युत जो है वह सत् लक्षण कहलाता।
गुण पर्यायों का आश्रय है वह ही द्रव्य नाम पाता।।
मैं पचास्तिकाय सग्रह की महिमा पाऊं है जिनराज।
प्रथम द्वितीय श्रुतस्कध जानकर मैं अब पाऊं निज पद राज।।१०।।

ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कन्ध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सगहे अर्घ्यं नि ।

(११)

यहा दोनों नयों द्वारा द्रव्य का लक्षण विभक्त किया है (अर्थात् दो नयों की अपेक्षा मे द्रव्य के लक्षण के दो विभाग किये गये हैं।)

उत्पत्ती व विणासो दव्वस्स य णत्थि अत्थि सब्भावो।
विगमुप्पादधुवत्तं करेंति तस्सेद पज्जाया।।११।।

[illegible]

द्रव्यों का उत्पाद विनाश नहीं होता यह है सद्‌भाव।
पर्यायों का होता व्यय उत्पाद, ध्रौव्यता नित्य स्वभाव।।
मैं पचास्तिकाय सग्रह की महिमा पाऊँ है जिनराज।
प्रथम द्वितिय श्रुतस्कध जानकर मैं अब पाऊँ निज पद राज।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(१२)

यहा द्रव्य और पर्यायो का अभेद दर्शाया है।

पज्जयविजुद दव्व दव्वविजुत्ता य पज्जया णत्थि।
दोण्हं अणण्णभूद भाव समणा परूविंति।।१२।।

छंद गीतिका

पर्याय रहित न द्रव्य है ना द्रव्य बिन पर्याय है।
है अनन्यपना सदा ही श्रमण का यह भाव है।।
प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लू।
सदानदी ज्ञान शुद्ध महान ही उर धार लू।।१२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(१३)

यहाँ द्रव्य और गुणों का अभेद दर्शाया है।

दव्वेण विणा ण गुणा गुणेहिं दव्वं विणा ण संभवदि।
अव्वदिरित्तो भावो दव्वगुणाणं हवदि तम्हा॥१३॥

छंद गीतिका

द्रव्य बिन गुण नहीं होते गुण बिना होते न द्रव्य।
द्रव्य गुण का यह अभिन्नपना अभेद सुकथन भव्य॥
प्रथम श्रुतस्कंध की महिमा महान विचार लूं।
सदानदी ज्ञानशुद्ध महान हो उर धार लूं॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१४)

यहा द्रव्य के आदेश के वश सप्तभगी कही है।

सिय अत्थि णत्थि उहयं अव्वत्तव्वं पुणो य तत्तिदय।
दव्व खु सत्तभगं आदेसवसेण संभवदि॥१४॥

छंद-गीतिका

वास्तव में द्रव्य तो है स्याद अस्ति स्याद् नास्ति।
स्याद् अस्तिनास्ति है अरु स्याद् अवक्तव्य भाति॥
स्याद् अस्ति अवक्तव्य स्याद् नास्ति अवक्तव्य।
स्याद् अस्तिनास्ति अवक्तव्य ये हैं भग सप्त॥
सप्त भगी सर्वथापन की 'निषेधक जानिये।
अनेकान्त स्वरूप द्रव्य सभी कथचित मानिये॥
प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लूं।
सदानंदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लूं॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१५)

यहा उत्पाद में असत के प्रादुर्भाव का और व्यय में सत के विनाश का निषेध किया है (अर्थात् उत्पाद होने से कहीं असत् की उत्पत्ति नहीं होती और व्यय होने से कहीं सत् का विनाश नहीं होता - ऐसा इस गाथा में कहा है।)

भवस्स णत्थि णासो णत्थि अभावस्स चेव उप्पादो।
गुणपज्जएसु भावा उप्पादवए पकुव्वंति।।१५।।

छंद-गीतिका

द्रव्य स्वचतुष्टय अपेक्षा है यही है स्याद् अस्ति।
द्रव्य पर चतुष्टय अपेक्षा नहीं है यह स्याद् नास्ति।।
स्वचतुष्टय परचतुष्टय है नहीं ये अस्ति नास्ति।
इस तरह ये भग त्रय हैं चार भी जानो समस्त।।
द्रव्य युगपत स्वचतुष्टय परचतुष्टय है अवक्तव्य।।
द्रव्य द्वय युगपत चतुष्टय से नहीं अरू अवक्तव्य।
स्वपर युगपत चतुष्टय से है नहीं युग अवक्तव्य।।
भाव का ना नाश है न अभाव का उत्पाद है।
भाव गुण पर्याय में उत्पाद व्यय यह बात है।।
प्रथम श्रुतस्कंध की महिमा महान विचार लू।
सदानंदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लू।।१५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१६)

यहाँ भावों (द्रव्यों) गुणों और पर्यायें बतलाये हैं।

भावा जीवादीया जीवगुणा चेदणा य उवओगो।
सुरणरणारयतिरिया जीवस्स य पज्जया बहुगा।।१६।।

छंद गीतिका

जीवादि ये सब भाव जीव गुण चेतना उपयोग है।
जीव की पर्याय नर सुर त्रिर्यंच नारक योग है।।
प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लूं।
सदानदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लूं।।१६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(१७)

'भावका नाश नहीं होना और अभाव का उत्पाद नहीं होना' उसका यह उदाहरण है।

मणुसत्तणेण णट्ठो देही देवो हवेदि इदरो वा।
उभयत्थ जीवभावोण णस्सदि ण जायदे अण्णो।।१७।।

छंद-गीतिका

मनुज भव जब नष्ट हो तब देव हो या अन्य हो।
जीव भाव न नष्ट हो दूजा नहीं उत्पन्न हो।।
प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लूं।
सदानदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लूं।।१७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१८)

यहा, द्रव्य कथञ्चित् व्यय और उत्पादवाला होने पर भी उसका सदैव अविनष्टपना और अनुत्पन्नपना कहा है।

सो चेव जादि मरणं जादि ण णट्ठो ण चेवं उप्पण्णो।
उप्पण्णो य विणट्ठो देवो मणुसो त्ति पज्जाओ।।१८।।

छंद-गीतिका

जन्म हो या मृत्यु हो तो भी नहीं उत्पन्न हो।
नष्ट होता नहीं सुर या मनुज पर्ययवन्त हो।।

प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लू।
सदानदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लूं।।१८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(१९)

यहाँ सत् का अविनाश और असत् का अनुत्पाद ध्रुवता के पक्ष मे कहा है (अर्थात् ध्रुवता की अपेक्षा मे सत् का विनाश या असत का उत्पाद नहीं होता-ऐसा इस गाथा में कहा है।)

एवं सदो विणासो असदो जीवस्स णत्थि उप्पादो।
तावदिओ जीवाण देवो मणुसो त्ति गदिणामो।।१९।।

छद-गीतिका

जीव को सत् विलय का या असत् का उत्पाद ना।
सुर मनुज गति नाम कर्म सुकाल मर्यादित बना।।
प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लू।
सदानदी ज्ञानशुद्ध महान हीं उर धार लू।।१९।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(२०)

यहाँ सिद्ध को अत्यन्त असत-उत्पाद का निषेध किया है (अर्थात सिद्धत्व होने मे सर्वथा असत् का उत्पाद नहीं होता ऐसा कहा है)।

णाणावरणादीया भावा जीवेण सुट्ठु अणुबद्धा।
तेसिमभाव किच्चा अभूदपुव्वो हवदि सिद्धो।।२०।।

छद गीतिका

भाव ज्ञानावरण आदिक जीव सग अनुबद्ध है।
इनका अभाव किया तो फिर जीव अनुपम सिद्ध है।।
प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लू।
सदानदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लू।।२०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(२१)

यह, जीव को उत्पाद, व्यय, सत-विनाश और असत्-उत्पाद का कर्तृव्य होने की सिद्धि रूप उपसंहार है।

एवं भावमभावं भावाभावं अभावभावं च।
गुणपज्जयेहिं सहिदो संसरमाणो कुणदि जीवो।।

छंद-गीतिका

जीवगुण पर्यायियुत संसरण करता हुआ भाव।
अभाव भावाभाव करता तथा करता अभावभाव।।
जीव को उत्पाद व्यय सत् नाश असत् उत्पाद का।
कर्तृत्व है तो कहा जाता यह कर्तृत्व जीव का।।
भाव तो उत्पाद और विनाश तो ही है अभाव।
विद्य सब पर्याय सत् विनाश ही तो भावाभाव।।
असत् का उत्पाद कहलाता सदैव अभावभाव।
द्रव्य तो अविनष्ट है अरु अनुत्पन्न यही स्वभाव।।
निर्दोष है निर्विघ्न है निर्बाध है अविरुद्ध है।
जिसमें विरोध विरोध ना वह अनेकान्त प्रसिद्ध है।।
प्रथम श्रुतस्कंध की महिमा महान विचार लूं।
सदानंदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लूं।।२१।।

ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि।

इस प्रकार षड्द्रव्य की सामान्य प्ररूपणा समाप्त हुई।

(२२)

अब (इस गाथा में), सामान्यतः जिनका स्वरूप (पहले) कहा गया है ऐसे छह द्रव्यों में से पाँच को अस्तिकायपना स्थापित किया गया है।

जीवा पुग्गलकाया आयासं अत्थिकाइया सेसा।
अमया अत्थित्तमंया कारणभूदा हि लोगस्स।।२२।।

छन्द-गीतिका

जीव पुद्गल काय नभ अरु धर्म अधर्म हैं अस्तिकाय।
अकृत हैं ये अस्तिमय हैं लोककारण भूतकाय।।
प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लू।
सदानदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लू।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(२३)

काल अस्तिकाय रूप मे अनुक्त (कथन नहीं किया गया) होने पर भी उसे अर्थपना (पदार्थपना) सिद्ध होता है ऐसा यहाँ दर्शाया है ।

सब्भावसभावाणं जीवाण तह य पोग्गलाण च।
परियट्टणसभूदो कालो णियमेण पण्णत्तो।।२३।।

छद गीतिका

सत्ता स्वभावी जीव पुद्गल परिणमन से सिद्ध है।
काल है वह द्रव्य ही है यह नियम सर्वज्ञ है।।
प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लू।
सदानदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लू।।२३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(२४)

यहाँ निश्चयकाल स्वरूप कहा है।

ववगदपणवण्णरसो ववगददोगंधअट्ठफासो य।
अगुरुलहुगो अमुत्तो वट्टणलक्खो य कालो त्ति।।२४।।

छद-गीतिका

काल पाचों वर्ण से है रहित पांचों रस रहित।
गंध दो से रहित है स्पर्श आठों से रहित।।

अगुरुलघु है अमूर्त्तिक है वर्त्तना लक्षण सदा।
यही निश्चय काल है निज शक्ति से पूरित सदा।।
लोक के हर प्रदेशों पर एक इक कालाणु है।
जीव पुद्गल द्रव्य को निमित्त ये कालाणु है।।
प्रथम श्रुतस्कंध की महिमा महान विचार लूं।
सदानंदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लूं।।२४।।

ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(२५)

यहाँ व्यवहारकाल का कथंचित पराश्रितपना दर्शाया है।

समओ णिमिसो कट्ठा कला य णाली तदो दिवारत्ती।
मासोदुअयणसवच्छरो त्ति कालो परायत्तो।।२५।।

गाथा ।।

काल समय निमेष काष्ठा काल घडी अरु अहो रात्र।
मास ऋतु अरु अयन वर्ष पराश्रित है काल मात्र।।
यही है व्यवहार काल पराश्रित ह कथचित।
पर्याय निश्चय काल की परमाणु द्वारा है प्रगट।।
प्रथम श्रुतस्कध की महिमा महान विचार लू।
सदानदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लू।।२५।।

ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(२६)

यहा व्यवहारकाल के कथंचित पराश्रितपने के विषय में सत्य युक्ति कही गई है।

णत्थि चिरं वा खिप्प मत्तारहिदं तु सा वि खलु मत्ता।
पोग्गलदव्वेण विणा तम्हा कालो पडुच्चभवो।।२६।।

छंद-गीतिका

उपचार से यह काल परके आश्रय से उपजता।
काल माप बिना न होती दीर्घता या अल्पता।।
प्रथम श्रुतस्कंध की महिमा महान विचार लूं।
सदानंदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लूं।।२६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(२७)

यहाँ (इस गाथा में) संसारदशा वाले आत्मा का सोपाधि और निरुपाधिस्वरूप कहा है।

जीवो त्ति हवदि चेदा उवओगविसेसिदो पहू कत्ता।
भोत्ता य देहमेत्तो ण हि मुत्तो कम्मसंजुत्तो।।२७।।

छंद-गीतिका

संसार में थिर आत्मा है जीव चेतयिता सदा।
उपयोग लक्षित प्रभो कर्त्ता भोक्ता है सर्वदा।।
देह सम है अमूर्तिक सोपाधि कर्म संयुक्त है।
निरुपाधि है यह कथन दोनों नयों से ही युक्त है।।
प्रथम श्रुतस्कंध की महिमा महान विचार लूं।
सदानंदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लूं।।२७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(२८)

यहाँ मुक्तावस्थावाले आत्मा का निरुपाधिस्वरूप कहा है।

कम्ममलविप्पमुक्को उड्ढं लोगस्स अन्तमधिगता।
सो सव्वणाणदरिसी लहदि सुहमणिंदियमणंतं।।२८।।

छंद गीतिका

कर्म मल से मुक्त आत्मा ऊर्ध्व में लोकान्त प्राप्त।
मुक्त है निरुपाधिरूपी पूर्ण सुख से सदा व्याप्त।।

प्रथम श्रुतस्कंध की महिमा महान विचार लूं।
सदानंदी ज्ञानशुद्ध महान ही उर धार लूं।।

छंद दिगपाल

लोकान्त में विराजे मुक्तात्मा को मिलता।
सर्वज्ञ सर्वदर्शी आनंद अतीन्द्रिय सुख।।
चिद्रूप जिसका लक्षण है भाव प्राण धारी।
बालाग्र बराबर भी उसको न रंच भव दुख।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।२८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(२९)

यह, सिद्ध के निरुपाधि ज्ञान, दर्शन और सुख का समर्थन है।

जादो सयं स चेदा सव्वण्हू सव्वलोगदरिसी य।
पप्पोदि सुहमणंतं अव्वाबाधं सगममुत्तं।।२९।।

छंद-दिगपाल

सर्वज्ञ है चेतयिता है सर्व लोकदर्शी।
निरुपाधि ज्ञान दर्शन सुख से भरा हुआ है।।
स्वकीय अव्याबाधी सुखमय अनत अमूर्तिक।
है कर्म क्लेश विरहित गृह सिद्धपुर खरा है।।
पंचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।२९।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(३०)

यह जीवत्वगुण की व्याख्या है।

पाणेहिं चदुहिं जीवदि जीविस्सदि जो हु जीविदो पुव्वं।
सो जीवो पाणा पुण बलमिंदियमाउ उस्सासो।। ३०।।

छंद दिगपाल

जीता था चार प्राणो से और जी रहा है।
आगे भी यह जियेगा त्रिकाल जी रहा है।।
ये चार प्राण इन्द्रिय उच्छ्वास आयु बल हैं।
हैं भाव प्राण इसके जीवत्वगुण प्रबल हैं।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।। ३०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(३१)

यहाँ जीवों का स्वाभाविक प्रमाण तथा उनका मुक्त और अमुक्त ऐसा विभाग कहा है।

अगुरुलहुगा अणंता तेहिं अणंतेहिं परिणदा सव्वे।
देसेहिं असंखादा सिय लोगं सव्वमावण्णा।। ३१।।

छंद दिगपाल

जो गुण अनंत अगुरुलघु उन अगुरुलघु गुणों से।
परिणत हैं जीव वे ही हैं असंख्यात प्रदेशी।।
कुछ लोक व्यापी होते होते हैं सर्वदर्शी।
उनको नमन हमारा वे ही हैं ज्ञानदर्शी।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।। ३१।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(३२)

यहाँ जीवों का स्वाभाविक प्रमाण तथा उनका मुक्त और अमुक्त ऐसा विभाग कहा है।

केचित्तु अणावण्णा मिच्छादंसणकसायजोगजुदा।
विजुदा य तेहिं बहुगा सिद्धा संसारिणो जीवा।।३२।।

छंद दिगपाल

होते हैं जो अव्यापी बहु जीव हैं संसारी।
मिथ्यात्व योग युत है उनको कषाय प्यारी।।
मिथ्यात्व योग विरहित कषाय से रहित हैं।
वे सिद्ध हैं अनंतों है वन्दना हमारी।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।३२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

(३३)

यह देह प्रमाणपने के दृष्टान्त का कथन है (अर्थात यहां जीव का देह प्रमाणपना समझाने के लिए दृष्टान्त कहा है)।

जह पउमरायरयणं खित्तं खीरे पभासयदि खीरं।
तह देही देहत्थो सदेहमेत्तं पभासयदि।।३३।।

छंद-दिगपाल

ज्यों पदमरागमणि दुग्ध मध्य मे गिरता है।
तो दुग्ध को प्रकाशित करता है स्वप्रभा से।।
उस भांति देही रहता है देह जड़ के भीतर।
स्वदेह के बराबर होता प्रकाशित निज से।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।३३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

(३४)

यहा जीवका देह से देहान्तर में (एक शरीर से अन्य शरीर में) अस्तित्व, देह से पृथक्त्व तथा देहान्तर में गमन का कारण कहा है।।

सव्वत्थ अत्थि जीवो ण य एक्को एक्ककाय एक्कट्ठो।
अज्झवसाणविसिट्ठो चिट्ठदि मलिणो रजमलेहिं।।३४।।

वह जीव सब देहों में कमवर्त्ती ही रहता है।
हो नीर क्षीर वत ही वह एक रूप रहता है।।
तो भी न एक है वह ना एक कभी होता।
कर्मो की मलिनता से ससार उदधि बहता।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।३४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(३५)

यह सिद्धों के (सिद्ध भगवन्तों के) जीवत्व और देह प्रमाणत्व की व्यवस्था है।

जेसिं जीवसहावो णत्थि अभावो य सव्वहा तस्स।
ते होंति भिण्णदेहा सिद्धा वचिगोयरमदीदा।।३५।।

दिगपाल

जो द्रव्य प्राण विरहित हैं भाव प्राणयुत हैं।
वे हैं वचन अगोचर वे शुद्ध ही होते हैं।।
वे देह रहित होते भगवंत सिद्ध होते।
निरुपाधिरूप द्वारा वे सतत प्रतपते हैं।।
पंचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।३५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(३६)

यह सिद्धों को कार्य कारण भाव होने का निराम है।अर्थात सिद्ध भगवान को कार्यपना और कारणपना होने का निराकरण खडन है।

ण कुदोचि वि उप्पण्णो जम्हा कज्जं ण तेण सो सिद्धो।
उप्पादेदि ण किंचि वि कारणमवि तेण ण स होदि।। ३६।।

छंद - दिगपाल

वे सिद्ध किसी से भी उत्पन्न नहीं होते।
उत्पन्न नहीं करते कोई न कार्य उनको।।
ना कार्य ना कारण है निष्कर्म अवस्था है।
कर्मों से रहित हैं वे वन्दन है सदा उनको।।
पचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।। ३६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(३७)

यहा , 'जीव का अभाव सो मुक्ति है' इस बात का खडन किया है।

सस्सदमध उच्छेदं भव्वमभव्व च सुण्णमिदरं च।
विण्णाणमविण्णाण ण वि जुज्जदि असदि सब्भावे।। ३७।।

छंद - दिगपाल

है मोक्ष में तो जीव का सद्भाव सदा ही।
होता नहीं अभाव मोक्ष मध्य जीव का।।
नश्वर व शाश्वत अभव्य भव्य शून्य अशून्य।
अज्ञान ज्ञान घटित नहीं होगा जीव का।।
पंचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो ।। ३७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(३८)

यह 'चेतयितृत्वगुण की व्याख्या है।

कम्माणं फलमेक्को एक्को कज्जं तु णाणमध एक्को।
चेदयदि जीवरासी चेदगभावेण तिविहेण।।३८।।

छन्द-दिग्पाल

हे त्रिविध भाव चेतक के ज्ञान की सुनिधि।
एक जीव राशि कर्म फलों को ही कर रही।।
एक जीव राशि मात्र सुदृढ ज्ञान चेतती।
एक जीव राशि सर्वदा कार्य कर रही।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।३८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(३९)

यहाँ, कौन क्या चेतता है (अर्थात् किस जीव को कौनसी चेतना होती है) वह कहा है।

सव्वे खलु कम्मफलं थावरकाया तसा हि कज्जजुदं।
पाणित्तमदिक्कंता णाणं विंदंति ते जीवा।।३९।।

ये कर्म फल को वेदते हैं सर्व ही थावर
जो त्रस हैं कार्य सहित कर्म फल को वेदते।
जो इनसे रहित हो गए वे ज्ञान वेदते।
प्राणत्व सर्व कर गए अतिक्रम स्व चेतते।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।३९।।

ॐ ह्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(४०)

आत्मा का चैतन्य अनुविधायी (अर्थात चैतन्य का अनुसरण करने वाला) परिणाम सो उपयोग है। वह भी दो प्रकार का है - ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग। वहाँ विशेष को ग्रहण करने वाला ज्ञान है और सामान्य को ग्रहण करने वाला दर्शन है (अर्थात विशेष जिसमें प्रतिभासित हो वह ज्ञान है और सामान्य जिसमें प्रतिभासित हो वह दर्शन है)।और उपयोग सर्वदा जीव से अपृथग्भूत ही है क्योंकि एक अस्तित्व से रचित है।

उवओगो खलु दुविहो णाणेण य दंसणेण संजुत्तो।
जीवस्स सव्वकालं अणण्णभूदं वियाणीहि।।४०।।

छंद-दिग्पाल

चैतन्य अनुविधायी परिणाम है उपयोग।
ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोग से सयुक्त।।
यह अन्य भूत है सदैवकाल जीव को।
है अपृथग्भूत इक अस्तित्व से रचित।।
पचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।४०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि।

(४१)

यह, ज्ञानोपयोग के भेदों के नाम और स्वरूप का कथन है।

आभिणिसुदोधिमणकेवलाणि णाणाणि पंचभेयाणि।
कुमदिसुदविभंगाणि य तिण्णि वि णाणेहिं संजुत्ते।।४१।।

छन्द-दिग्पाल

ज्ञानोपयोग भेद आठ आगमानुसार।
मति श्रुत अवधि मनःपर्यय कैवल्य सहित पांच।।

कुमति कुश्रुत विभंग भेद तीन जोड़िये।
ये आठ भेद ज्ञान के हैं इन्हें जानिये।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।४१।।

ॐ ह्रीं शअरी सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(४२)

यह, दर्शनोपयोग के भेदों के नाम और स्वरूप का कथन है।

दंसणमवि चक्खुजुदं अचक्खुजुदमवि य ओहिणा सहियं।
अणिधणमणंतविसयं केवलियं चावि पण्णत्तं ।।४२।।

छद-दिगपाल

हे दर्शनोपयोग भेद चार कहे हैं।
चक्षु अचक्षुदर्शन है अवधि और केवल।।
केवल तो है अविनाशी अनत भी यही।
क्षायोपशमिक तीनों चौथा है क्षायिक निर्मल।।
पंचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(४३)

एक आत्मा अनेक ज्ञानात्मक होने का यह समर्थन है।

ण वियप्पदि णाणादो णाणी णाणाणि होंति णेगाणि।
तम्हा दु विस्सरूवं भणियं दवियंत्ति णाणीहिं।।४३।।

छद-दिगपाल

है ज्ञान से तो ज्ञानी का भेद नहीं कुछ भी।
दोनों स्वचतुष्टय से है एक सा स्वभाव।।

ये ज्ञान तो अनेक हैं विरोध नहीं है।
द्रव्य विश्वरूप है ऐसा ही है स्वभाव।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।४३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(४४)

द्रव्य का गुणों से भिन्नत्व हो और गुणों का द्रव्य से भिन्नत्व हो तो दोष आता है, उसका यह कथन है।।

जदि हवदि दव्वमण्णं गुणदो य गुणा य दव्वदो अण्णे।
दव्वाणंतियमधवा दव्वाभाव पकुव्वति।।४४।।

छन्द-दिगपाल

यदि द्रव्य गुण से अन्य हों तो द्रव्य का अभाव।
गुण द्रव्य से हों अन्य तो अनतता बने।।
सो द्रव्य का गुणों से भिन्नत्व नहीं है।
समुदाय गुणों का है अनन्य सही है।।
पचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।४४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(४५)

यह, द्रव्य और गुणों के स्वोचित अनन्यपने का कथन है (अर्थात् द्रव्य और गुणों को कैसा अनन्यपना घटित होता है वह यहाँ कहा है।)

अविभत्तमणण्णत्तं दव्वगुणाणं विभत्तमण्णत्तं।
णेच्छंति णिच्छयण्हू तव्विवरीदं हि वा तेसिं।।४५।।

छन्द-दिगपाल

द्रव्य अरु गुणों में अविभक्तपना है।
दोनों में ही निश्चय से अन्यपना है।।

निश्चय के जो ज्ञाता है अविभक्तपने रूप।
अन्यपना इनमें वे नहीं मानते हैं।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।४५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(४६)

यहाँ व्यपदेश आदि एकान्त से द्रव्य गुणों के अन्यपने का कारण होने का खंडन किया है

ववदेसा संठाणा संखा विसया य होंति ते बहुगा ।
ते तेसिमणण्णत्ते अण्णत्ते चावि विज्जते।।४६।।

छंद - दिगपाल

व्यपदेश संस्थान तो देखो अनेक हैं।
संख्याएँ अरु विषय भी जानो अनेक हैं।।
हो अन्यपने या अनन्यपने मे घटित।
इन द्रव्य गुण का तो अनन्यपना एक है।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।४६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(४७)

यह , वस्तु रूप मे भेद और (वस्तु रूप से) अभेद का उदाहरण है ।

णाणं धणं कुव्वदि धणिणं जह णाणिण च दुविधेहिं ।
भण्णंति तह पुधत्तं एयत्तं एयत्तं चावि तच्चण्हू।।४७।।

छंद - दिगपाल

जिस प्रकार धनी से तो धनी ही होता है।
उस भांति ज्ञान हो तो वह ज्ञानी ही होता है।।

पृथक्त्व अरु एकत्व को तत्त्वज्ञ कहते हैं।
वे भेद अरु अभेद का व्यपदेश कहते हैं।।
पंचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।४७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(४८)

द्रव्य और गुणों को अर्थांतरपना हो तो यह (निम्नानुसार) दोष आयेगा ।

णाणी णाणं च सदा अत्थंतरिदा दु अण्णमण्णस्स ।
दोण्हं अचेदणत्त पसजदि सम्मं जिणावमदं ।।४८।।

छंद दिगपाल

ज्ञान और ज्ञानी तो परस्पर चेतन है।
अर्थान्तर भूत हो तो होंय अचेतन हैं।।
ऐसा न कभी होता हों द्रव्य से प्रथक गुण।
द्रव्य निर्विशेष और शून्य निराश्रय गुण।।
पंचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।४८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(४९)

यह, ज्ञान और ज्ञानी को समवाय सम्बन्ध होने का निराकरण (खडन) है।

णा हि सो समवायादो अत्थंतरिदो दु णाणदो णाणी।
अण्णाणीत्ति य वयणं एगत्तपसाधगं होदि ।।४९।।

छंद-दिगपाल

ज्ञान से अर्थान्तर समवाय से न ज्ञानी।
अज्ञान के समवाय से तो है नहीं अज्ञानी।।

ज्ञानी को ज्ञान का ही एकत्व है त्रिकाल।
गुणगुणी में एकत्व सिद्ध है सदा त्रिकाल।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।४९।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(५०)

यह, समवाय में पदार्थांतरपना होने का निराकरण (खंडन) है ।

समवत्ती समवाओ अपुधब्भूदो य अजुदसिद्धो य ।
तम्हा दव्वगुणाणं अजुदा सिद्धि त्ति णिद्दिट्ठा ।।५०।।

छंद - दिगपाल

समवर्तीपना वह ही समवाय कहा है ।
अपृथकपना वह ही अयुत सिद्धपना है।।
द्रव्य अरु गुणों की अयुत सिद्धि कही है।
द्रव्य अरु गुणों में न पृथक्त्वपना है।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(५१)

दृष्टान्तरूप और दार्ष्टान्तरूप पदार्थ पूर्वक द्रव्य तथा गुणों के अभिन्न पदार्थपने के व्याख्यान का यह उपसंहार है ।

वण्णरसगंधफासा परमाणुपरूविदा विसेसेहिं ।
दव्वादो य अणण्णा अण्णत्तपगासगा होंति ।।५१।।

छंद - दिगपाल

परमाणु में प्ररूपित हैं वर्ण रस व गंध।
स्पर्श भी प्ररूपित है नहीं वह अगंध।।

द्रव्य से अनन्य है विशेष से है अन्य।
स्वभाव से न अन्य वह धन्य धन्य धन्य।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।५१।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

(५२)

दृष्टान्तरूप और दार्ष्टान्तरूप पदार्थ पूर्वक द्रव्य तथा गुणों के अभिन्न पदार्थपने के व्याक्यान का यह उपसंहार है।

दंसणणाणाणि तहा जीवणिबद्धाणि णण्णभूदाणि।
ववदेसदो पुधत्तं कुव्वंति हि णो सभावादो ।। ५२।।

छंद-दिगपाल

दर्शन व ज्ञान गुण तो जीव में ही वर्तते।
ये आत्म द्रव्य से अभिन्न जीव में रहते।।
व्यपदेश से प्रथक स्वभाव में ही वर्तते।
सदैव अप्रथकपने को ये ही धारते।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।५२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि।

(५३)

इस प्रकार उपयोगगुण का व्याख्यान समाप्त हुआ। अब कर्तृत्वगुण का व्याख्यान है। उसमें प्रारम्भ की तीन गाथाओं से उनका उपोद्घात किया जाता है।

निश्चय से पर भावों का कर्तृत्व न होने से जीव स्व-भावों के कर्ता होते है, और उन्हें (-अपने भावों को) करते हुए, क्या वे अनादि अनन्त है ? क्या

सादि सान्त है ? क्या सादि-अनन्त है ? क्या तदाकाररूप (उस- रूप) परिणत है ? क्या (तदाकाररूप) अपरिणत है ? - ऐसी आशंका करके यह कहा गया है (अर्थात उन आशंकाओं के समाधान रूप मे यह गाथा कही गई है) ।

जीवा अणाइणिहणा संता णंता य जीवभावादो ।
सब्भावदो अणंता पंचग्गगुणप्पधाणा य ।।५३।।

छंद-दिग्पाल

जीव तो अनादि निधन है अनाद्यनंत।
तीनभाव से ही है ये सादि और सांत।।
क्षायिक के भाव से है सादि अरु अनंत।
पारिणामिक भाव से तो अनादि है अनंत।।
है औदयिक भाव से सादि और सांत।
उपशम व क्षयोपशम से भी सादि और सांत।।
इन प्रधान पांच गुणो से है महिमावंत।
है ज्ञानादर्शनमयी प्रभाव से महंत।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।५३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(५४)

यह, जीव को भाववशात् (औदयिक आदि भावों के कारण) सादि-सांतपना और अनादि अनंतपना होने में विरोध का परिहार है ।

एवं सदो विणासो असदो जीवस्स हाइ उप्पादो ।
इदि जिणवरेहिं भणिदं अण्णोण्णविरूद्धमविरूद्धं।।५४।।

छंद-दिग्पाल

सत् का विनाश असत् का उत्पाद भी कहा।
अन्योन्य विरुद्ध तथापि अविरुद्ध ही कहा।।
अब तक न मरा हू कभी आगे न मरूंगा।
मैं हूँ अमर अमरत्व ही मै प्राप्त करूंगा।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।५४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(५५)

जीव का सत भाव के उच्छेद और असत भाव के उत्पाद में निमित्तभूत उपाधिका यह प्रतिपादन है ।

णेरइतिरियमणुया देवा इदि णामसजुदा पयडी ।
कुव्वंति सदो णासं असदो भावस्स उप्पाद ।।५५।।

छंद-दिग्पाल

नारक त्रियंच देव मनुज चार नाम की।
नाम कर्म की प्रकृति जानिये सभी।।
सत भाव का विनाश असत् भाव का उत्पाद।
होती निमित्त नामकर्म की प्रकृति तभी।।
पचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।५५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(५६)

जीव को भावों के उदय का (-पाँचों भावों की प्रगटता का) यह वर्णन है।

उदयेण उवसमेण य खएण दुहिं मिस्सिदेहिं परिणामे ।
जुत्ता ते जीवगुणा बहुसु य अत्थेसु विच्छिण्णा ।।५६।।

छंद-दिग्पाल

उदय से है युक्त ये उपशम से भी है युक्त।
क्षयोपशम से युक्त है क्षय से भी है ये युक्त।।
परिणाम से है युक्त जीव पाच गुण सहित।
उपाधि भेद औ स्वरूपभेद से विस्तृत।।
उदय और उपशम क्षयोपशम व क्षय।
इनके निमित्त चारभाव उन्हें जानिये।
है द्रव्य का स्वभाव तो त्रिकाल शाश्वत।
इसका विचार करके निज मध्य आनिये।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।५६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सगहे अर्घ्यं नि ।

(५७)

यह जीव के औदयिकादि भावों के कर्तृत्व प्रकार का कथन है ।

कम्मं वेदयमाणो जीवो भावं करेदि जारिसयं।
सो तस्स तेण कत्ता हवदि त्ति य सासणे पढिद।।५७।।

छंद-दिग्पाल

कर्म बिना जीव को होता न औदयिक।
उपशम न क्षायिक होता न हो क्षयोपशमिक।।
अतएव ये है भाव जीव को तो कर्मकृत।
यह भाव है निमित्त मात्र द्रव्य कर्मवत।
पचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।५७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सगहे अर्घ्यं नि ।

(५८)

यहा, (औदयिकादि भावों के) निमित्तमात्र रूप मे द्रव्यकर्मो को औदयिकादि भावों का कर्तापना कहा है।

कम्मेण बिणा उदयं जीवस्स ण विज्जदे उवसमं वा।
खइयं खओवसमियं तम्हा भावं तु कम्मकदं।।५८।।

छद-दिगपाल

कर्मो को वेदता हुआ जो भाव करता है।
उस भाव का उस भांति से ही जीव कर्त्ता है।।
व्यवहार नय से द्रव्य कर्म अनुभव में आता।
वह जीव भाव का निमित्त मात्र कहाता।।
पंचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।५८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सगहे अर्घ्यं नि ।

(५९)

कर्म को जीव भाव का कर्तृत्व होने के संबध में यह पूर्व पक्ष है।

भावो जदि कम्मकदो अत्ता कम्मस्स होदि किध कत्ता।
ण कुणदि अत्ता किंचि वि मुत्ता अण्णं सगं भावं।।५९।।

छद-दिगपाल

यदि भाव कर्म कृत हो तो आत्मा कर्त्ता।
ऐसा न कभी होता, है जीव अकर्त्ता।।
आत्मा स्वभाव छोड़ कभी कुछ नहीं करता।
यह पूर्व पक्ष प्रस्तुत है जीव अकर्त्ता।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।५९।।

ह्रीं सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम ...

(६०)

यह पूर्व सूत्र में (५९ वीं गाथा में) कहे हुए पूर्वपक्ष के समाधान रूप सिद्धान्त है।

भावो कम्मणिमित्तो कम्मं पुण भावकारणं हवदि ।
णदु तेसिं खलु कत्ता ण विणा भूदा दु कत्तारं ।।६०।।

ताटंक-दिग्पाल

जीवभाव का निमित्त कर्म है जानो।
जीवभाव कर्म का निमित्त है मानो।।
वास्तव मे एक दूसरे के कर्त्ता नहीं है।
कर्त्ता के बिना होते ऐसा भी नहीं है।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।६०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(६१)

निश्चय से जीव को अपने भावो का कर्तृत्व है और पुद्गल कर्मों का अकर्तृत्व है ऐसा यहा आगम द्वारा दर्शाया गया है।

कुव्वं सग सहाव अत्ता कत्ता सगस्स भावस्स ।
णा हि पोग्गलकम्माणं इदि जिणवयण मुणेदव्वं ।।६१।।

ताटंक-दिग्पाल

अपने स्वभाव को ही करता है आत्मा यह।
अपने स्वभाव का ही कर्त्ता है आत्मा यह।।
इन कर्म पुद्गलो का कर्त्ता नहीं है चेतन।
ऐसा ही तो प्रसिद्ध है जिनराज का वचन।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।६१।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(६२)

निश्चयनय मे अभिन्न कारक होने से और कर्म और जीव स्वय स्वरूप के (अपने -अपने रूप के) कर्ता है ऐसा यहाँ कहा है।

कम्म पि सग कुव्वदि सेण सहावेण सम्ममप्पाणं।
जीवो वि य तारिसओ कम्मसहावेण भावेण॥६२॥

छंद दिगपाल

कर्म भी स्वभाव से ही अपने को करता है।
जीव औदयिक से ही अपने को करता है॥
निश्चय से है अभिन्न कारक इनका सदैव।
अपने स्वरूप के ही कर्त्ता है कर्म जीव॥
स्वयमेव ही षटकारक अपने से वर्तते।
अपने स्वभाव से ही अपने मे वर्तते॥
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो॥६२॥

ॐ ह्री श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(६३)

यदि कर्म और जीव को अन्योन्य अकर्तापना हो, तो अन्य का दिया हुआ फल अन्य भोगे ऐसा प्रसग आयेगा ,— ऐसा दोष बतलाकर यहाँ पूर्व पक्ष उपस्थित किया गया है।

कम्म कम्मं कुव्वदि जदि सो अप्पा करेदि अप्पाण।
किध तस्स फलं भुञ्जदि अप्पा कम्म च देदि फलं॥६३॥

छन्द-दिगपाल

ज्यों कर्म कर्म का ही कर्त्ता है तो सुनो।
त्यों आत्मा आत्मा का कर्त्ता है तो सुनो॥

तो आत्मा उस फल को भोगेगा कहो क्यों।।
यह पूर्व पक्ष प्रस्तुत है ज्ञान कहों क्यों।।
हैं आगे की गाथाएँ समाधान के लिए।।
जिज्ञासुओं को मात्र सत्य ज्ञान के लिए।
पचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित्त हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।६३।।

ॐ ह्री श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(६४)

यहाँ ऐसा कहा है कि- कर्मयोग पुद्गल (कार्माणवर्गणारूप पुद्गलस्कन्ध अजन चुर्ण से (जन के बारीक चूर्ण से) भरी हुई डिब्बी के न्याय से समस्त लोक में व्याप्त है ; इसलिये जहाँ आत्मा है वहाँ बिना लाये ही (कहीं से लाये बिना ही) वे स्थित है ।

ओगाढगाढणिचिदो पोग्गलकाएहिं सव्वदो लोगो ।
सुममेहि बादरेहि य णताणंतेहि विविधेहिं ।।६४।।

ॐ ह्री

ये कर्म योग्य पुद्गल त्रैलोक्य में हैं व्याप्त।
हैं आत्मा जहाँ पर बिनलाए ये हैं प्राप्त।।
पंचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।६४।।

ॐ ह्री श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(६५)

अन्य द्वारा किये गये बिना कर्म की उत्पत्ति किस प्रकार होती है उसका कथन है ।

अत्ता कुणादि सभावं तत्थ गदा पोग्गला सभावेंहि ।
गच्छंति कम्मभावं अण्णोण्णागाहमवगाढा ।।६५।।

छन्द - दिगपाल

ये आत्मा मोहादि रूप भाव जब करता है।
पुद्गल भी अपने भाव से कर्म को पाता है।।
कर्म भाव परिणमा अवगाह होता है।
दोनों का परस्पर मे प्रविष्ट होता है।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।६५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(६६)

कर्मों की विचित्रता (बहुप्रकारता) अन्य द्वारा नहीं की जाती ऐसा यहाँ कहा है।

जह पोग्गलदव्वाणं बहुप्पयारेहि खधणिव्वत्ती ।
अकदा परेहि दिट्ठा तह कम्माण वियाणाहि ।।६६।।

छन्द - दिगपाल

पुद्गल स्कध रचना परके बिना ही होती।
कर्मों की विविधताएँ पर से कभी न होती।।
प्रकृति प्रदेश स्थिति अनुभाग रूप होती।
ये जीवकृत नहीं है पुद्गल जु कृत ही होती।।
पचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।६६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(६७)

निश्चय से जीव और कर्म को एकका (निज-निजरूप का ही) कर्तृत्व होने पर भी, व्यवहार से जीवका कर्मद्वारा दिये गये फलका उपभोग विरोध को प्राप्त नहीं होता (अर्थात 'कर्म जीव को फल देता है और जीव उसे भोगता है' यह बात भी व्यवहार से घटित होती है) ऐसा यहाँ कहा है।

जीवा पोग्गलकाया अण्णोण्णागाढगहणपडिबद्धा।
काले विजुज्जमाणा सुहदुक्खं दिंति भुञ्जन्ति।।६७।।

पद दिगपाल

जीव पुद्गल काय अन्योन्य अवगाह कर।
ग्रहण द्वारा आपस मे बद्ध हैं क्षणिकवर।।
काल से पृथक हो देते हैं ये सुखदुख फल।
जीव इन्हे भोगते व्यवहार है ये उज्ज्वल।।
पंचास्तिकाय सग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।६७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कन्ध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(६८)

यह कर्तृत्व और भोक्तृत्व की व्याख्या का उपसहार है।

तम्हा कम्म कत्ता भावेण हि सजुदोध जीवस्स।
भोत्ता दु हवदि जीवो चेदगभावेण कम्मफलं।।६८।।

पद-दिगपाल

अत:जीव भाव से सयुक्त कर्म करता है।
जीव भी भाव से कर्म फल भोक्ता है।।
निश्चय से कर्म तो ये अपना ही कर्त्ता है।
व्यवहार से ही जीव भाव का ही कर्त्ता है।।

जिस प्रकार द्रव्य नयों से ये कर्म कर्त्ता हैं।
उस भांति किसी नय से कर्त्ता न भोक्ता है।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।६८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि.।

(६९)

यह, कर्मसंयुक्तपन की मुख्यता से प्रभुत्वगुण का व्याख्यान है।

एवं कत्ता भोत्ता होज्जं अप्पा सगेहिं कम्मेहिं।
हिंडदि पारमपारं संसारं मोहसंछण्णो।।६९।।

छन्द - हरिगीतिका

इस भांति अपने कर्मों से कर्ता भोक्ता है।
होता हुआ ये आत्मा मोहरूप होता है ।।
इस प्रकार जीव सदा परिभ्रमण करता।
यह सादि अथवा अनंत संसार में भ्रमता।।
पंचास्तिकाय संग्रह का स्वाध्याय नित हो।
प्रगटें अनन्तगुण सब शिवसौख्य ध्रुव अमित हो।।६९।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि.।

(७०)

यह, कर्मवियुक्तपन की मुख्यता से प्रभुत्वगुण का व्याख्यान है।

उवसंतखीणमोहो मग्गं जिणभासिदेण समुवगदो।
णाणाणुमग्गचारी णिव्वाणपुरं वजदि धीरो।।७०।।

छन्द - गीतिका

जिनवचन से मार्ग पा उपशान्त हो हो क्षीण मोह।
उपशम व क्षय अरु क्षयोपशम होता है ये ही दर्श मोह।।

ज्ञानमय अनुमार्ग में जो विचरता है धीर वीर।
वही तो निर्वाणपुर पाता भवोदधि शीघ्र तीर।।
ज्ञानकर पंचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का भान कर।।७०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(७१)

अब जीव के भेद कहे जाते हैं।

एक्को चेव महप्पा सो दुवियप्पो तिलक्खणो होदि।
चदुचंकमणो भणिदो पंचग्गगुणप्पधाणो य।।७१।।

छन्द चामर

जीव एक नित्य चैतन्य उपयोग है।
ज्ञान दर्शन दो भेद उपयोग है।।
कर्म फल कार्य ज्ञान चेतना से तीन भेद।
ध्रौव्य उत्पाद अरु व्यय के भी तीन भेद।।
चार गति में भ्रमण कर रहा है चार भेद।
पारिणामिक आदि मुख्य गुण पांच भेद।।
ज्ञान पंचास्तिकाय पूर्णतया ज्ञान कर ।
मुक्ति का ये मार्ग है मात्र आत्म ध्यान धर।।७१।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(७२)

वही कहते हैं।

छक्कापक्कमजुत्तो उववुत्तो सत्तभङ्गसब्भावो।।
अट्ठासओ णवट्ठो जीवो दसट्ठाणगो भणिदो।।७२।।

छन्द - चामर

चार दिशा, ऊर्ध्व अधो दिशा छह में गमन।
षडविध अपक्रम से ही युक्त है चेतन।।
अस्तिनास्ति आदि स्याद्वाद से है सद्भाव।
सप्तभंग पूर्वक सद्भाव सप्तभाव।।
ज्ञानावरणादि आठकर्म युक्त है यही।
आठगुण आश्रय भूत जीव है यही।।
नव पदार्थ रूप से नव अर्थ रूप है।
दस स्थान गत हैं ये ज्ञानभूप है।।
ज्ञान पञ्चास्तिकाय पूर्णतया ज्ञान पद।
मुक्ति का ये मार्ग है मात्र आत्म ध्यान धर।।७२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

(७३)

बद्ध जीव को कर्मनिमित्तक षडविध गमन (अर्थात् कर्म जिसमें निमित्तभूत है ऐसा छह दिशाओं में गमन) होता है, मुक्त जीव को भी स्वाभाविक ऐसा एक ऊर्ध्वगमन होता है। -ऐसा यहाँ कहा है।

पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसबंधेहि सव्वदो मुक्को।
उड्ढ गच्छदि सेसा विदिसावज्जं गदिं जंति।।७३।।

छन्द - दिगपाल

प्रकृति स्थिति बंध अनुभाग प्रदेश बंध।
हो मुक्तजीव उर्ध्व गमन करता अबंध।।
संसारी मरणान्त विदिशाएँ छोड़कर।
अनुश्रेणी गमन कर कर्म निमित्त जोडकर।।
ज्ञान पंचास्ति का पूर्णतया ज्ञानमय।
मुक्ति का मार्ग है मात्र आत्म ध्यानमय।।७३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

इस प्रकार जीव द्रव्यास्तिकाय का व्याख्यान समाप्त हुआ।

यह पुद्गल द्रव्यास्तिकाय का व्याख्यान है।

(७४)

यह पुद्गल द्रव्य के भेदों का कथन है।

खधा य खधदेसा खधपदेसा य होंति परमाणु।
इदि ते चदुव्वियप्पा पोग्गलकाया मुणेयव्वा।।७४।।

गीत।।

द्रव्य पुद्गल काय चारों भेद भी अब जानिये।
स्कध देश प्रदेश अरु परमाणु हैं यह मानिये।।
बध की जो प्रक्रिया ह वह नहीं हित रूप है।
बध विरहित आत्मा ही शुद्ध ज्ञान स्वरूप हैं।
ज्ञान कर पञ्चास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का भान कर।।७४।।

ॐ ह्रीं श्री गनज पर्लपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि।

(७५)

यह पुद्गल द्रव्य क भेदों का वर्णन है।

खध सयलसमत्थ तस्स दु अद्ध भणंति देसो त्ति।
अद्धद्धं च पदेसो परमाणु चेव अविभागी।।७५।।

गीत।।

सकल पुद्गल पूर्ण पिडात्मक वही स्कध है।
स्कध देश उसे कहते हैं जो अर्ध स्कध है।।
अर्ध का जो अर्ध हैं वह प्रदेश स्कध हैं।
एक है अविभागि परमाणु सदैव अबध है।।
जानिये इस भाति भेदों से हुई स्कध पर्याय।
सर्वदा सघात से होती अनत स्कंध पर्याय।।

ज्ञान कर पंचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का भान कर।।७५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(७६)

स्कन्धों में "पुद्गल" ऐसा जो व्यवहार है उसका यह समर्थन है।

बादरसुहुमगदाण खंधाण पोग्गलो त्ति ववहारो।
ते होंति छप्पयारा तेलोक्कं जेहिं णिप्पण्णं।।७६।।

छंद-गीतिका

बादर व सूक्ष्म परिणत स्कंध है पुद्गल।
षट प्रकार जिनसे त्रय लोक है निष्पन्न।।
परमाणु धर्म पूरण व गलन जानिये।
षटस्थानपतित वृद्धि हानि मानिये।।
बादर बादर व बादर और बादर सूक्ष्म।
सूक्ष्म बादर और सूक्ष्म तथा सूक्ष्मसूक्ष्म।।
इनका स्वरूप आप अब आगम से जानिये।
अनुभव से कर प्रमाण इन्हें आप मानिये।
ज्ञान पंचास्तिकाय पूर्णतया ज्ञानमय।
मुक्ति का मार्ग है मात्र आत्म ध्यानमय।।७६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(७७)

यह, परमाणु की व्याख्या है।

सव्वेसिं खंधाणं जो अंतो तं वियाण परमाणू।
सो सस्सदो असद्दो एक्को अविभागी मुत्तिभवो।।७७।।

छंद सागर

सर्व स्कंधों का जो अंतिम ही भाग है।
वही तो परमाणु है जो अविभाग है।।

छद गीतिका

परमाणु में तो एक रस है वर्ण इक है गध एक।
पर्श दो हैं शब्द का कारण सदैव अशब्द एक।।
स्कध भीतर तदपि पूर्ण स्वतत्र इसको जानिये।
पर सहाय रहित स्वगुण पर्याय में थित मानिये।।
परमाणु है परिपूर्ण और स्वतत्र है यह जानिये।
गुण सभी सहभावि क्रमवर्त्ती पर्यायें मानिये।।
ज्ञान कर पचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर।।८१।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सगाह अर्घ्य नि ।

(८२)

यह, सर्व पुद्गल भेदों का उपसहार है।

उवभोज्जमिदिएहिं य इदियकाया मणो य कम्माणि।
ज हवदि मुत्तमण्ण त सव्वं पोग्गल जाणे।।८२।।

छद गीतिका

इन्द्रियों द्वारा विषय उपभोग्य पुद्गल जानिये।
इन्द्रिया तन कर्म मन सब मूर्त्त पुद्गल मानिये।।
ज्ञान कर पचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर।।८२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सगाह अर्घ्य नि ।

इस प्रकार पुद्गल द्रव्यास्तिकाय का व्याख्यान समाप्त हुआ।

अब धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय का व्याख्यान है।

(८३)

यह, धर्म के (धर्मास्तिकाय के) स्वरूप का कथन है।

धम्मत्थिकायमरसं अवण्णगंधं असद्दमप्फासं।
लोगागाढं पुट्ठं पिहुलमसखादियपदेस।।८३।।

छन्द गीतिका

धर्मास्तिकाय अरस अरूपी अगधी व अशब्द है।
लोक व्यापक है अखड विशाल असंख्य प्रदेश है।।
ज्ञान कर पंचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कन्ध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(८४)

यह धर्म के ही शेष स्वरूप का कथन है।

अगुरुगलघुगेहिं सया तेहि अणतेहिं परिणदं णिच्च।
गदिकिरियाजुत्ताण कारणभूदं सयमकज्ज।।८४।।

छन्द गीतिका

धर्मास्तिकाय अनत ऐसे अगुरुलघु उस रूप है।
परिणमित होता सदा ही नित्य है निजरूप है।।
गति क्रिया युत निमित्तरूपी और स्वय अकार्य है।
उदासीन अकार्य कारणभूत अन्य न कार्य है।।
ज्ञान कर पञ्चास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर।।८४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कन्ध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि

(८५)

यह धर्म के गति हेतुत्व का दृष्टान्त है।

उदयं जह मच्छाण गमणाणुग्गहकर हवदि लोए।
तह जीवपोग्गलाणं धम्मं दव्व वियाणाहि॥८५॥

छद-गीतिका

जिस भाति पानी गमन में इन मछलियों को निमित्त है।
जीव पुद्गल निमित्त में यह धर्म द्रव्य निमित्त हैं॥
ज्ञान कर पचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर॥८५॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(८६)

यह, अधर्म के स्वरूप का कथन है।

जह हवदि धम्मदव्व तह त जाणेह दव्वमधमक्ख।
ठिदिकिरियाजुत्ताण कारणभूद तु पुढवीव॥८६॥

छद-गीतिका

जिस भाति से यह धर्म है उस भाति द्रव्य अधर्म है।
जीव पुद्गल को सुथिति में यही कारण भूत है॥
ज्ञान कर पचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर॥८७॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(८७)

यह, धर्म और अधर्म के सद्भाव की सिद्धि के लिए हेतु दर्शाया गया।

जादो अलोगलोगो जेसिं सब्भावदो य गमणठिदी।
दो वि य मया विभत्ता अविभत्ता लोयमेत्ता य॥८७॥

छंद-गीतिका

जीव पुद्गल की गतिस्थिति लोक और अलोक भाग।
द्रव्य धर्म अधर्म के सद्भाव से होता विभाग॥
अविभक्त और विभक्त दोनों हैं सदा लोक प्रमाण।
गतिस्थिति में अनुग्रह निष्क्रिय निमित्त है तत्प्रमाण॥
ज्ञान कर पञ्चास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर॥८७॥

ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि।

(८८)

धर्म और अधर्म गति और स्थिति के हेतु होने पर भी वे अत्यन्त उदासीन हैं ऐसा यहाँ कथन है।

ण य गच्छदि धम्मत्थी गमण ण करेदि अण्णदवियस्स।
हवदि गदिस्स य पसरो जीवाण पोग्गलाणं च॥८८॥

छंद-गीतिका

धर्मास्ति करता गमन नाही कराता ना अन्य को।
जीव पुद्गल गति प्रसारक उदासीन निमित्त जो॥
ज्ञान कर पचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर॥८८॥

ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि।

(८९)

यह, धर्म और अधर्म की उदासीनता के सम्बन्ध में हेतु कहा गया है।

विज्जदि जेसि गमणं ठाणं पुण तेसिमेव संभवदि।
ते सगपरिणामेहिं दु गमण ठाणं च कुव्वति॥८९॥

छंद-गीतिका

गति स्थिति के हेतु मुख्य न कभी धर्म अधर्म द्रव्य।
जिन्हों की गति उन्हीं की थिति परिणाम से होती सभव्य॥

ज्ञान कर पचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह द्रोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर॥८९॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

इस प्रकार धर्म द्रव्यास्तिकाय और अधर्म द्रव्यास्तिकाय का व्याख्यान स हुआ।

अब आकाश द्रव्यास्तिकाय का व्याख्यान है।

(९०)

यह, आकाश के स्वरूप का कथन है।

सव्वेसिं जीवाण सेसाण तह य पोग्गलाण च।
ज देदि विवरमखिल तं लोगे हवदि आगास ॥९०॥

हरिगीतिका

जीव पुद्गल आदि सबको दे रहा अवकाश जो।
सभी को यह निमित्त होता नाम है आकाश वो॥
ज्ञान कर पचास्ति का निज आत्मा का ध्यान कर।
मोह दोष विनष्ट करके आत्मा का ध्यान कर॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(९१)

यह, लोक के बाहर (भी) आकाश होने की सूचना है।

जीवा पोग्गलकाया धम्माधम्मा य लोगदोणण्णा।
तत्तो अणण्णमण्ण आयास अन्तवदिरित्त॥९१॥

हरिगीतिका

जीव पुद्गल काल धर्म अधर्म लोक से हैं अनन्य।
नभ अंत विरहित लोक से तो अनन्य है तथा अन्य॥

मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परम कर्त्तव्य है॥९१॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि।

(९२)

जो मात्र अवकाश का ही हेतु है ऐसा जो आकाश उसमें गतिस्थितिहेतुत्व (भी) होने की शंका की जाये तो दोष आता है।

आगास अवगासं गमणट्ठिदिकारणेहि देदि जदि।
उड्ढगदिप्पधाणा सिद्धा चिट्ठन्ति किध तत्थ॥९२॥

छंद गीतिका

गति स्थिति कारण अगर अवकाश देता है आकाश।
ऊर्ध्व गति को प्राप्त सिद्धों को गमन हो क्यों न पास॥
वे रहे लोकान्त में वे गमन क्यों ना करें आगे।
गति स्थिति में क्यों निमित्त हों जबकि नभ अवगाह ठौर॥
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मंतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परप कर्त्तव्य है॥९२॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि।

(९३)

(गतिपक्ष सम्बन्धी कथन करने के पश्चात्) यह, स्थितिपक्ष संबंधी कथन है।

जम्हा उवरिट्ठाण सिद्धाणं जिणवरेहिं पण्णत्त।
तम्हा गमणट्ठाणं आयासे जाण णत्थि त्ति॥९३॥

छंद-गीतिका

सिद्ध सुस्थित लोक ऊपर जिनवरों ने यह कहा।
गति स्थिति के बिना है आकाश मुनियों ने कहा॥

मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परप कर्त्तव्य है।।९३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि।

(९४)

यहाँ, आकाश का गतिस्थितिहेतुत्व का अभाव होने सम्बन्धी हेतु उपस्थित किया गया है।

जदि हवदि गमणहेदू आगासं ठाणकारणं तेसिं।
पसजदि अलोगहाणी लोगस्स य अन्तपरिवड्ढी।।९४।।

हरिगीतिका

जीव पुद्‌गल गतिस्थिति का हेतु यदि आकाश हो।
हानि होय अलोक की लोकान्त की फिर वृद्धि हो।।
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परप कर्त्तव्य है।।९४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि।

(९५)

यह, आकाश का गतिस्थितिहेतुत्व होने के खंडन सम्बन्धी कथन का उपसंहार है।

तम्हा धम्माधम्मा गमणट्ठिदिकारणाणि णागासं।
इदि जिणवरेहिं भणिदं लोगसहावं सुणंताणं।।९५।।

हरिगीतिका

अतः गति थिति मूल कारण धर्म और अधर्म है।
नही यह आकाश गति थिति निमित्त है यह मर्म है।।
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परप कर्त्तव्य है।।९५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि।

(९६)

यहाँ धर्म, अधर्म और लोकाकाश का अवगाह की अपेक्षा से एकत्व होने पर भी वस्तुरूप से अन्यत्व कहा गया है।

धम्माधम्मागासा अपुधब्भूवा समाणपरिमाणा।
पुधगुवलद्धिविसेसा करेंति एगत्तमण्णत्तं।।९६।।

३८-गीतिका

धर्म अधर्म आकाश सम परिमाण युत अपृथग्भूत।
भिन्न भिन्न विशेष युत अन्यत्व अरु एकत्वरूप।।
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परम कर्त्तव्य है।।९६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि. ।

इस प्रकार आकाश द्रव्यास्तिकाय का व्याख्यान समाप्त हुआ।

अब चूलिका है।

(९७)

यहा द्रव्यों का मूर्तामूर्तपना (मूर्तपना अथवा अमूर्तपना) और चेतना चेतनपना (-चेतनपना अथवा अचेतनपना) कहा गया है।

आगासकालजीवा धम्माधम्मा य मुत्तिपरिहीणा।
मुत्त पुग्गलदव्वं जीवो खलु चेदणो तेसु।।९७।।

३८ गीतिका

जीव धर्म अधर्म नभ अरु काल द्रव्य अमूर्त है।
मूर्त पुदगल द्रव्य ही है जीव चेतना रूप है।।
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परम कर्त्तव्य है।।९७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि. ।

(९८)

यहाँ (द्रव्यों का) सक्रिय-निष्क्रियपना कहा गया है।

जीवा पोग्गलकाया सह सक्किरिया हवंति ण य सेसा।
पोग्गलकरणा जीवा खंधा खलु कालकरणा दु॥९८॥

(गीतिका)

बाह्य कारण सहित सुस्थित जीव पुद्गल सक्रिय हैं।
शेष चारों द्रव्य निष्क्रिय मात्र दो ही सक्रिय हैं॥
जीव पुद्गल करणवाले हैं सदा ही जानिये।
स्कंध पुद्गल सर्वकाल करण वाले मानिये॥
कर्मादिकों की भांति होता काल का न कभी अभाव।
सिद्ध को निष्क्रियपना पुद्गल को है निष्क्रिय अभाव॥
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मंतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परम कर्त्तव्य है॥९८॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

(९९)

यह, मूर्त और अमूर्त के लक्षण का कथन है।

जे खलु इंदियगेज्झा विसया जीवेहि होंति ते मुत्ता।
सेसं हवदि अमुत्तं चित्तं उभयं समादियदि॥९९॥

(गीतिका)

सर्व इन्द्रिय ग्राह्य जो भी विषय हैं वे मूर्त हैं।
शेष सर्व पदार्थ तो पूरे सदैव अमूर्त हैं॥
मूर्त और अमूर्त द्रव्य को ग्रहण करता चित्त यह।
जानने की योग्यता का है सदा सद्भाव वह॥
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मंतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परम कर्त्तव्य है॥९९॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

इस प्रकार चूलिका समाप्त हुई।

अब काल द्रव्य का व्याख्यान है।

(१००)

यह, व्यवहारकाल तथा निश्चयकाल के स्वरूप का कथन है।

कालो परिणामभवो परिणामो दव्वकालसंभूदो।
दोण्हं एस सहावो कालो खणभंगुरो णियदो॥१००॥

हरि गीतिका

परिणाम जन्य को काल है नश्वर तथा है नित्य काल।
समय नामक क्रमिक जो पर्याय वह व्यवहार काल॥
उत्पन्न द्रव्य काल से परिणाम होता स्वकाल है।
आधारभूत जो द्रव्य है सो वही निश्चय काल है॥
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मंतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परम कर्त्तव्य है॥१००॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

(१०१)

काल के 'नित्य' और 'क्षणिक' ऐसे दो विभागों का यह कथन है।

कालो त्ति य ववदेसो सब्भावपरूवगो हवदि णिच्चो।
उप्पण्णप्पद्धंसी अवरो दीहंतरट्ठाई॥१०१॥

हरि गीतिका

काल यह व्यपदेश है सद्भाव का है प्ररूपक।
नित्य है उत्पन्न ध्वंसी दीर्घ है अरु है क्षणिक॥
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मंतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परम कर्त्तव्य है॥१०१॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

(१०२)

यह, काल को द्रव्यपने के विधान का और अस्तिकायपने के निषेध का कथन है (अर्थात् काल को द्रव्यपना है किन्तु अस्तिकायपना नहीं है ऐसा यहाँ कहा है)।

एदे कालागासा धम्माधम्मा य पोग्गला जीवा।
लब्भंति दव्वसण्ण कालस्स दु णत्थि कायत्तं।।१०२।।

छंद गीतिका

काल अरु आकाश धर्म अधर्म पुदगल जीव ही।
द्रव्य सज्ञा सभी की पर काल अस्तिकाय नहीं।।
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परप कर्त्तव्य है।।१०२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

इस प्रकार काल द्रव्य का व्याख्यान समाप्त हुआ।

(१०३)

यहा पचास्तिकाय के अवबोध का फल कहकर पचास्तिकाय के व्याख्यान का उपसहार किया गया है।

एव पवयणसारं पचत्थियसगह वियाणित्ता।
जो मुयदि रागदोसे सो गाहदि दुक्खपरिमोक्खं।।१०३।।

छंद-गीतिका

इस भाति प्रवचनसार भूत पंचास्तिकाय को जान कर।
छोड राग द्वेष हो परिमुक्त सार दुक्खहर।।
मुक्तिपद की प्राप्ति का यदि आद्य भी मतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परम कर्त्तव्य है।
धन्य स्वामी कुन्दकुन्दाचार्य मुनिवर धन्य है।
धन्य तुव पचास्तिकाय महान आगम धन्य है।।१०३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१०४)

यह, दुःख से विमुक्त होने के क्रम का कथन है।

मुणिऊण एतदट्ठ तदणुगमणुज्जदो णिहद मोहो।
पसमियरागद्दोसो हवदि हदपरापरो जीवो।।१०४।।

छंद गीतिका

इस अर्थ को जो जानकर शुद्धात्मा को ही वरे।
अनुसरण कर हत मोह हो क्षय पूर्व बंधों को करे।।
स्व परिचय से ज्ञान ज्योति प्रगट होती हृदय में।
राग द्वेष निवृत्त होते वर्तता ध्रुव निलय में।
मुक्ति पद की प्राप्ति का यदि अल्प भी मंतव्य है।
ध्यान कर शुद्धात्मा का यह परम कर्त्तव्य है।।
धन्य हैं श्री कुन्दकुन्दाचार्य ऋषिवर धन्य है।
ज्ञान सागर आत्मा में नहीं कुछ भी अन्य है।।१०४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

यहाँ षट्द्रव्य पञ्चास्तिकाय वर्णन नाम का प्रथम श्रुतस्कंध समाप्त हुआ।

महार्घ्य

छंद-स्निग्ध

पञ्चास्तिकाय संग्रह का भाव समझ लूं मैं।
अंतर्मुहूर्त्त में ही निजभाव सहज लूं मैं।।
निजभाव पारिणामिक असहाय पूर्ण बलमय।
सापेक्ष स्वयं से है पर से निरपेक्ष अभय।।
इसके ही आश्रय से शिव पथ होता आरंभ।
संयमाचरण होता परका न शेष कुछ दंभ।।
फिर यथाख्यात आकर सविनय प्रणाम करता।
अरहंत दशा प्रगटा निज में विराम करता।।

फिर तो स्वयमेव स्वत. निज मुक्तिद्वार खुलता।
चारो अघाति रज कण सपूर्णतया घुलता।।
सिंहासन सिद्धशिला पर शोभित ये हो जाता।
चेतन स्वभाव परिणति के संग सौख्य पाता।।
सुखसादि अनतानंत अब इसने पाया है।
यह जान मुझे भी प्रभु उत्साह समाया है।।
आया हू चरणो में कुछ ज्ञान मुझे दे दो।
मैं कौन कहाँ का हूं यह भान मुझे दे दो।।
बस इतना बहुत मुझे मैं और न कुछ चाहू।
मिल गयी ज्ञानगगा इसमे ही अवगाहू।।
ये बहिर्भाव मेरे कोई न सगे लगते।
निर्मल स्वभाव मेरा ये देख स्वय भगते।।
निर्मलता पाने का सुन्दर उपाय पाया।
मैं महा भाग्यशाली जो आप निकट आया।।
चिन्ता परकी तज दी निज घर अब पाया है।
मेरा स्वकाल स्वामी जाग्रत हो आया है।।

[८]

महाअर्घ्य अर्पण करू यही परम श्रुतस्कध।
भाव भासना प्राप्त कर बनू नाथ निर्ग्रन्थ।।
पचास्तिकाय षड्द्रव्य का है यह उपसहार।
रागद्वेष परिणाम तज पाऊँ सौख्य अपार।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रवाद पूर्वान्तर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृत अन्तर्गत श्री पंचास्तिकाय संग्रह परमागम महाअर्घ्यं नि ।

जयमाला

[illegible]

ज्ञानी को तो चाहिये मात्र ज्ञान पाथेय।
सकल जगत को जानता जो है पूरा ज्ञेय॥
जो है पूरा ज्ञेय जानने मे वह आता।
एक मात्र निज को ही ज्ञेय बनाता ज्ञाता॥
पर द्रव्यो मे सदा उलझता है अज्ञानी।
निज स्वरूप की ओर दृष्टि देता है ज्ञानी॥

[illegible]

पाचों अस्तिकाय को जान।
अपना अस्तिकाय पहचान॥
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
जीतू कालदोष को नाथ
पर स्वकाल मैं बनू सनाथ॥
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
अमल अखड अनत विशाल।
मै जीवास्तिकाय त्रयकाल॥
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
ध्रुव अस्तित्व स्वय सम्पूर्ण।
ज्ञान भाव से हू आपूर्ण॥
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
बहिर्तत्त्व के सारे दोष।
नष्ट करू होऊं निर्दोष॥
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

हुआ जाग्रत शुद्ध स्वभाव।
करता सर्व विभाव अभाव।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
गुण अनंत घृत भरे प्रदीप।
ज्यों दीपावलि नन्हें दीप।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
मैं हूं शक्तिवान सर्वांग।
मैं अखड वर्जित अर्धांग।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
ज्ञान ज्योति का नवल प्रकाश।
मुझमें इसका सदा निवास।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
समकित कितयुत चारित्र प्रधान।
कारण मोक्ष प्राप्ति का ज्ञान।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
इन त्रय का आश्रय बलवान।
परम सौख्यदाता निर्वाण।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
अनुपमेय निजतत्त्व महान।
सकल तत्त्व में श्रेष्ठ प्रधान।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
दोष अठारह करू विनष्ट।
निज स्वरूप ही हो सपुष्ट।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो ।।

निज स्वभाव कर लू निरधार।
अष्टकर्म कर दू सहार।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो।।
चारकषाय भाव को जीत।
विषयभोग से जाऊं रीत।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो।।
निज षटकारक को पहचान।
मैं भी बन जाउं भगवान।।
परम गुरु हो। जय जय नाथ परम गुरु हो।।

।गया।

हरू जग धारणाए
चारगति तारणाए,
ज्ञानभाव भावनाएं
करू अब धारण।
माह को विदारू अभी
आत्म तेज धारू अभी,
भावना सुधारू अभी
यही मोक्ष कारण।।
राग-रागिनी को जीतू
आत्म भावना को चीतूं।
भोग वासना से रीतू
राग करू जारण।
ज्ञान मदाकिनी से
मिलू शिव वासिनी से

भावना उदासिनी से

बनूं निज तारण।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रवाद पूर्वान्तर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृत अन्तर्गत पंचास्तिकाय संग्रह परमागमाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि ।

आशीर्वाद :

छंद ताटंक

आत्म ज्ञान करने का मेरा हो प्रयत्न परिपूर्ण सफल।
मोह स्वयं भूरमण उदधि को जीतूं पाऊं पद अविकल।।
भव बाधाएं पास में आए मोह क्षोभ हर रहूं अचल।।
साम्यभाव की महा शक्ति से पाऊं केवल ज्ञान विमल।।

इत्याशीर्वाद

लघु पीठिका

(नव पदार्थ पूर्वक मोक्ष मार्ग प्रपञ्च पूजन)

छंद वीर

नव पदार्थ पूर्वक तुम जानो मोक्ष मार्ग का सर्व प्रपंच।
मोक्ष मार्ग पर चलो शीघ्र ही अब तुम करना देर न रंच ।।
मोक्षमार्ग पाने को तुम अब दूर कहीं पर मत जाना ।
मोक्ष मार्ग हैं निजात्मा में उसके ही भीतर जाना ।।
मोक्ष मार्ग क्या तुम तो चेतन हो सदैव से मोक्ष स्वरूप ।
सिद्ध समान सदा उज्ज्वल हो देखो तो निज आत्म स्वरूप।।
निज आत्मा ही सम्यक् दर्शन निज आत्मा ही सम्यक् ज्ञान।
निज आत्मा ही सम्यकचारित निज आत्मा रत्नत्रय यान।।
नहीं किसी का जाप करो तुम नहीं किसी का भजन करो ।
केवल निज शुद्धात्मतत्व ग्रह परभावों का त्यजन करो।।
बस इतना ही काम करो तुम कृत कृत्य हो जाओगे ।
एक मात्र अन्तर्मुहूर्त्त में केवल रवि प्रगटाओगे ।।
कुन्दकुन्द की अनुकंपा से मोक्ष मार्ग तुमने पाया ।
निज स्वरूप के दर्शन पाए अब अपूर्व अवसर आया ।।

दोहा

निज स्वभाव को जानकर करो स्वयं से प्रीत ।
आस्रव बंध स्वरूप से अब तुम जाओ रीत ।।

पुष्पांजलि

पूजन क्रमांक - ३

नव पदार्थ पूर्वक मोक्षमार्ग प्रपंच पूजन

स्थापना

दोहा

नमन द्वितीय श्रुतस्कंध को मुक्ति मार्ग दर्शाय।
निज पुरुषार्थ सफल करूं त्रय विध शीष नवाय।।

[illegible]

सप्त तत्त्व में पाप पुण्य मिल नौ पदार्थ हो जाते हैं।
मोक्षमार्ग पर चलने वाले ज्ञानी यह बतलाते हैं।
जीव अजीव आस्रव संवर बंध निर्जरा मोक्ष प्रसिद्ध।
ये ही सात तत्त्व कहलाते जिन आगम अनुसार सुसिद्ध।।
इन को प्रथक प्रथक पिह्चान कर मैं अपना स्वरूप जानूं।
अपने ज्ञान भाव में रहकर निज अशरीरी को मानूं।।
छह द्रव्यों से मैं सर्वोत्तम द्रव्य त्रिकाली पूर्ण अनंत।
सप्ततत्त्व से मैं परमोत्तम आत्मतत्त्व हूं महिमावंत।।
नव पदार्थ से भी परमोत्तम आत्म पदार्थ अपूर्व महान।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरितमय आत्म बोधि पाऊं अमलान।।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधूं निज पुरुषार्थ जगाऊं नाथ।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति करूं प्रभु आश्रय लूं निश्चय भूतार्थ।।
इसीलिए पूजन करता हूं कुन्द कुन्द परमागम की।
जिन आगम को हृदयंगम कर द्युति पाऊं निज आगम की।।
आध्यात्मिक जीवन हो मेरा हो अध्यात्म भावना पूर्ण।
ध्राव्य त्रिकाली के आश्रय से अष्टकर्म अरि कर दूं चूर्ण।।

दोहा

नव पदार्थ को जानकर छहों द्रव्य को जान।
सात तत्त्व श्रद्धान कर पाऊँ सम्यक् ज्ञान।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित ज्ञान प्रवाद पर्वान्तर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृत अन्तर्गत श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रहे अत्र अवतर अवतर सवौषट आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित ज्ञान प्रमाद पर्वान्तर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृत अन्तर्गत श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रहे अत्र तिष्ट तिष्ट ठ ठ स्थापन नि ।

अष्टक

छद-हरिगीता

रुचकवर के उदधिसम नयनीर लाना चाहिये।
ज्ञान कर निज आत्मा का दुख मिटाना चाहिये।।
मोक्षमार्ग प्रपच का अब ज्ञान करना चाहिये।
नव पदार्थ सुजान कर निज भान करना चाहिये।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

द्वीप कुन्डलवर सुचदन मलय लाना चाहिये।
भव ताप ज्वर यह सदा को ही मिटाना चाहिये।।
मोक्षमार्ग प्रपच का अब ज्ञान करना चाहिये।
नव पदार्थ सुजान कर निज भार करना चाहिये।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

पुष्प पुष्कर द्वीप के ही विविध लाना चाहिये।
कामव्याधि विनष्ट कर गुणशील पाना चाहिये।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का अब ज्ञान करना चाहिये।
नव पदार्थ सुजान कर निज भान करना चाहिये।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

मानुषोत्तर सुगिरि के ही सुचरु रसमय चाहिये।
वेदनीय प्रकोप की पीड़ा मिटाना चाहिये।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का अब ज्ञान करना चाहिये।
नव पदार्थ सुजान कर निज भान करना चाहिये।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

षटकुलाचल जिनालय से दीप लाना चाहिये।
मोह भ्रम संपूर्ण क्षयकर ज्ञान पाना चाहिये।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का अब ज्ञान करना चाहिये।
नव पदार्थ सुजान कर निज भान करना चाहिये।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

द्वीप धातकिखंड वाली धूप लाना चाहिये।
कर्म क्षय करके अभी ध्रुव सौख्य पाना चाहिये।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का अब ज्ञान करना चाहिये।
नव पदार्थ सुजान कर निज भान करना चाहिये।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

किसी भी विजयार्ध गिरि के सुतरु फल ही चाहिये।
मोक्षफल की महामहिमा हमें पाना चाहिये।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का अब ज्ञान करना चाहिये।
नव पदार्थ सुजान कर निज भान करना चाहिये।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

इन्द्रपद की बाछा भी नष्ट करना चाहिये।
पद अनर्घ्य अपूर्व शिवमय प्रगट करना चाहिये।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का अब ज्ञान करना चाहिये।
नव पदार्थ सुजान कर निज भान करना चाहिये।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

अर्घ्यावलि

(नव पदार्थ पूर्वक मोक्ष मार्ग प्रपंच वर्णन)

अब इस द्वितीय श्रुत स्कंध में श्री मद्भगवत्कुन्दकुन्दाचार्य देव विरचित गाथा सूत्र प्रारम्भ किए जाते हैं।

(१०५)

यह आप्त की स्तुति पूर्वक प्रतिज्ञा है।

अभिवंदिऊण सिरसा अपुणब्भवकारणं महावीरं।
तेसिं पयत्थभंगं मग्गं मोक्खस्स वोच्छामि ॥१०५॥

छंद-हरिगीता

अपुनर्भव कारण श्री महावीर को वन्दन करूं।
नव पदार्थ स्वरूप कह शुद्धात्म का दर्शन करूं॥
मोक्षमार्गप्रपच का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ सुपूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है॥
धन्य स्वामी कुन्द कुन्दाचार्य तुम को धन्य है।
धन्य तुव पचास्तिकाय महान आगम धन्य है॥१०५॥

ॐ ह्रीं द्वितीय श्रुतस्कन्ध अन्तर्गत श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं।

(१०६)

प्रथम मोक्ष मार्ग की ही सूचना है।

सम्मत्तणाणजुत्तं चारित्तं रागदोसपरिहीणं।
मोक्खस्स हवदि मग्गो भव्वाणं लद्धबुद्धीणं ॥१०६॥

छन्द-गीतिका

सम्यक्त्व ज्ञानसंयुक्त चारित्र राग द्वेष विहीन है।
लब्ध बुद्धि सुभव्य को यह मोक्षमार्ग प्रवीण है॥

मोक्षमार्गप्रपंच का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ सुपूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।१०६।।

ॐ ह्रीं द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्री परमागम पञ्चास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं।

(१०७)

यह सम्यग्दर्शन -ज्ञान -चारित्र की सूचना है।

सम्मत्तं सद्दहणं भावाण तेसिमधिगमो णाणं ।
चारित्त समभावो विसएसु विरूढमग्गाणं ।।१०७।।

हरि गीतिका

भाव का श्रद्धान ही सम्यक्त्व है अवबोध ज्ञान।
समभाव ही चारित्र है जिनमार्ग रूढ महा प्रधान।।
निश्चय विलक्षण मोक्षमय व्यवहार से होता सु मन।
मिथ्यात्व के कारण यही शिवमार्ग होता अति गहन।।
मोक्षमार्ग प्रपञ्च का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।१०७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(१०८)

यह पदार्थों के नाम और स्वरूप का कथन है।

जीवाजीवा भावा पुण्णं पावं च आसव तेसिं ।
संवरणं णिज्जरण बंधो मोक्खो य ते अट्ठा ।।१०८।।

हरि गीतिका

जीव और अजीव उनके पुण्यपाप अरु आस्रव।
बंध संवर निर्जरा अरु मोक्षसर्व पदार्थ नव।।
चैतन्य लक्षण सहित है जो वही है जीवास्तिक।
चैतन्य लक्षण रहित है जो वही है अजीवास्तिक।।

परिणाम शुभ जिसमें निमित्त वह पुण्य कर्म पिछानिये।
परिणाम जिसमें अशुभ हो वह पाप कर्म ही मानिये।।
पुण्य पाप विभाव जो है वही तो हे आस्रव।
यही तो बंध कर्त्ता बध है यह दुष्प्रभव।।
आस्रव का रोकना संवर कहाता है सुनो।
निर्जरा शुद्धोपयोग प्रताप से होती सुनो।।
मोक्ष, कर्म रहित अवस्था युक्त है द्रष्टव्य है।
इसी का श्रद्धान जो करता वही प्रिय भव्य है।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।१०८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१०९)

अब जीव पदार्थ का व्याख्यान विस्तार पूर्वक किया जाता है।

यह जीव के स्वरूप का कथन है।

जीवा संसारत्था णिव्वादा चेदणप्पगा दुविहा।
उवओगलक्खणा वि य देहादेहप्पवीचारा ।।१०९।।

छंद-गीतिका

जीव के दो भेद ससारी तथा है मुक्त सिद्ध।
ये सभी उपयोगमय है तीन लोकों में प्रसिद्ध।।
देह मे जो वर्तते हैं वही सासारिक कहे।
देह से जो रहित हैं वे जीव सिद्ध प्रभो कहे।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।१०९।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(११०)

यह (संसारी जीवों के भेदों में से) पृथ्वी कायिकआद पाँच भेदों का कथन है।

पुढवीय उदयमगणी वाउ वणप्फदि जीवसंसिदाकाया।
देंति खलु मोहबहुलं फासं बहुगा वि ते तेसिं ।।११०।।

छंद - गीतिका

पृथ्वीकाय अपकाय अग्निकाय चौथी वायु काय।
अरु वनस्पतिकाय ये है जीव सहित समस्तकाय।।
मोह से संयुक्त यह स्पर्श देतीं जीव को।
पर्श में ये निमित्त होती, नहीं निमित्ति अजीव को।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।११०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रर्णपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१११)

यह पृथ्वीकायादिक एकेन्द्रिय जीवों का कथन है ।

ति त्थावतणुजोगा अणिलाणलकाइया य तेसु तसा ।
णपरिणामविरहिदा जीवा एइंदया णेया ।।१११।।

छंद गीतिका

पृथ्वी अपकायिक वनस्पति जीव थावर तन सयोग।
एक इन्द्रिय वायु अग्निकाय त्रस व्यवहार रोग।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।१११।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(११२)

यह पृथ्वी कायिक आदि पाँचों (-पंचवष) जीवों के एकेन्द्रिय पने का नियम है।

एदे जीवणिकाया पंचविधा पुढविकाइयादीया ।
मणपरिणामविरहिदा जीवा एगेंदिया भणिया ।।११२।।

छन्द गीतिका

रहितमन परिणाम से ये जीव एकेन्द्रिय सदा।
कर्मफल चेतना युत है जीव पांचों सर्वदा।।
मोक्षमार्ग प्रपच्च का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।११२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(११३)

यह, एकेन्द्रियों को चैतन्य का अस्तित्व होने सम्बन्धी दृष्टान्त का कथन है।

अंडेसु पवड्ढंता गब्भत्था माणुसा य मुच्छगया ।
जारिसया तारसया जीवा एगेंदिया णेया ।।११३।।

छन्द गीतिका

अंडस्थ अरु गर्भस्थ प्राणी मूर्छा पाये मनुज।
बुद्धि के व्यापार विरहित जीव एकेन्द्रिय सदृश।।
मोक्षमार्ग प्रपंच का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।११३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(११४)

यह द्वीन्द्रियजीवों के प्रकार की सूचना है।

संबुक्कमादुवाहा संखा सिप्पी अपादगा य किमी।
जाणंति रसं फासं जे ते बेइंदिया जीवा ।।११४।।

शबूक मातृवाह शंख अरु सीप कृमि पग हीन जो।
स्पर्श रस को जानते हैं द्रव्य इन्द्रिय जीव दो।।
मोक्षमार्ग प्रपच का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।११४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(११५)

यह त्री इन्द्रिय जीवों के प्रकार की सूचना है ।

जूगागुंभीमक्कणपिपीलिया विच्छुयादिया कीडा ।
जाणंति रसं फासं गध तेइदिया जीवा ।।११५।।

छंद गीतिका

जू कुम्भि खटमल चींटी बिच्छू आदि जन्तु पिछानिये।
रस पर्श गध को जानते वे तीन इन्द्रिय मानिये।।
मोक्षमार्ग प्रपच्च का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।११५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(११६)

यह चतुरिन्द्रिय जीवों के प्रकार की सूचना है ।

उद्दंसमसयक्खियमधुकरिभमरा पयंगमादीया।
रूवं रसं त गधं पास पुण ते विजाणंति ।।११६।।

छंद-गीतिका

डांस मच्छर भ्रमर मक्खी पतंगे अरु मधुकरी।
रूप रस गध पर्श को जाने चऊ इन्द्रियखरी।।
मोक्षमार्ग प्रपच्च का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।११६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(११७)

यह पचेन्द्रिय जीवों के प्रकार की सूचना है।

सुरणरणारयतिरिया वण्णरसप्फासगंधसद्दण्हू।
जलचरथलचरखचरा बलिया पंचेंदया जीवा।।११७।।

हरिगीतिका

वर्ण रस स्पर्श गध अरु शब्द को जो जानते।
देव नर नारक त्रियच स पाच इन्द्रिय मानते।।
तथा जलचर और थलचर तथा खेचर जीव वे।
मन रहित तो है असंज्ञी मन सहित सज्ञी हैं वे।।
मोक्षमार्ग प्रपच का वर्णन परम सुखरूप हैं।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।११७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कन्ध श्री परमागम पंचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(११८)

यह इन्द्रियों के भेद की अपेक्षा से कहे गये जीवों का चतुर्गति -सम्बन्ध दर्शाते हुए उपसंहार है (अर्थात् एकेन्द्रिय- दीन्द्रियादिरूप जीव भेदों का चार गति के साथ सम्बन्ध दर्शाकर उन जीव भेदों का उपसंहार किया गया है)।

देवा चउण्णिकाया मणुया पुण कम्मभोगभूमीया।
तिरिया बहुप्पयारा णेरइया पुढविभेयगदा।।११८।।

हरिगीतिका

देवचार निकाय के हैं मनुज के हैं दो प्रकार।
भवनवासी ज्योतिषी व्यतर व वैमानिक विचार।।
कर्म भूमिज मनुज हैं अरु भोग भूमिज हैं मनुज।
यही हैं दो भेद मनुजों के जिनागम से कथित।।

देव नारक मनुज तो हैं नियम से पंचेन्द्रिय।
त्रिर्यचों में एक से ले जीव हैं पंचेन्द्रिय।।
मोक्षमार्ग प्रपच का वर्णन परम सुखरूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।११८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्य नि ।

(११९)

यहाँ गतिनामकर्म और आयुषकर्म के उदय मे निष्पन्न होते है इसलिए देवत्वादि आनात्मस्भावभूत है (अर्थात् देवत्व मनुष्यत्व तिर्यचत्व और नारकत्व आत्मा का स्वभाव नहीं है) ऐसा दर्शाया गया है ।

खीणे पुव्वणिबद्धे गदिणामे आउसे य ते वि खलु ।
पाउण्णंति य अण्णं गदिमाउस्सं सलेस्सवसा ।।११९।।

गीतिका

पूर्व बद्ध गति नाम कर्म या आयु कर्म जब होता क्षीण।
जीव लेश्याओं क वश हो पाता है गति आयु नवीन।।
नर सुरनारक त्रियचत्व आदिक तो अनात्म स्वभाव स्वरूप।
कषाय अनुरंजित योगों की प्रवृत्ति है लेश्या अनुरूप।।
चेतन तो चेतन गुण धारी लेश्याओं का नाम नहीं।
इन कषाय अनुरजित परिणामों का कोई काम नहीं।।
कुन्दकुन्द के परमागम पचास्तिकाय का कथन महान।
जो भी हृदयंगत कर लेते वे ही पाते हैं निर्वाण।।११९।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्य नि.।

(१२०)

यह उक्त (पहले कहे गए) जीव विस्तार का उपसंहार है।

एदे जीवणिकाया देहप्पविचारमस्सिदा भणिदा।
देहविहूणासिद्धा भव्वा संसारिणो अभव्वा य।।१२०।।

वीरछन्द

जीव निकाय स्वदेह सहित है संसारी हैं भव्य अभव्य।
देह रहित तो सिद्ध प्रभो हैं जो सदैव ही हैं ज्ञातव्य।।
कुन्दकुन्द के परमागम पंचास्तिकाय का कथन महान।
जो भी हृदयंगत कर लेते वे ही पाते हैं निर्वाण।।१२०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि।

(१२१)

यह व्यवहार जीवत्व के एकांत की प्रतिपत्तिका खण्डन है (अर्थात जिसेमात्र व्यवहारनय से जीव कहा जाता है उसका वास्तव में जीव रूप से स्वीकार करना उचित नहीं है ऐसा समझाया है।

ण हि इंदियाणि जीवा काया पुण छप्पयार पण्णत्ता।
जं हवदि तेसु णाणं जीवो त्ति य तं परूवेंति।।१२१।।

छंद-ताटंक

पृथ्वी कायिक आदि इन्द्रिया जीव नहीं होती जानो।
छह प्रकार की कायें सब ही जीवनहीं होती मानो।।
जीव वही है जिसमें होता ज्ञान सर्वदा ही जीवंत।
इसी ज्ञान का आश्रय लेकर हो जाते हैं त्रिभुवन कंत।।
कुन्दकुन्द के परमागम पंचास्तिकाय का कथन महान।
जो भी हृदयंगत कर लेते वे ही पाते हैं निर्वाण।।१२१।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि।

(१२२)

यह अन्य से असाधारण ऐसे जीवकार्यों कथन है ।(अर्थात् अन्य द्रव्यों से असाधारण ऐसे जो जीव के कार्य वे यहाँ दर्शाये हैं)।

जाणदि पस्सदि सव्व इच्छति सुक्खं बिभेदि दुक्खादो ।
कुव्वदि हिदमहिदं वा भुंजदि जीवो फल तेसि ।।१२२।।

ताटंक

जीव जानता तथा देखता सुख की इच्छा करता है।
हित अनहित करता उसका फल भोक्ता दुख से डरता है।।
कुन्द कुन्द के परमागम पचास्तिकाय का कथन महान।
जो भी हृदयगत कर लेते वे ही पात हैं निर्वाण।।१२२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(१२३)

यह जीव व्याख्यान के उपसंहार की और अजीव-व्याख्यान के प्रारम्भ की सूचना है ।

एवमभिगम्म जीवं अण्णेहिं वि पज्जएहि बहुगेहिं ।
अभिगच्छदु अज्जीवं णाणतरिदेहि लिगेहि ।।१२३।।

वीर छं

विविध भांति की पर्यायों से युक्त जीव को जानो जीव।
स्वय ज्ञानसे जीव अचेतन जड़ को जानो सदा अजीव।।
कुन्दकुन्द के परमागम पचास्तिकाय का कथन महान।
जो भी हृदयंगत कर लेते वे ही पाते हैं निर्वाण।।१२३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

इस प्रकार जीव पदार्थ का व्याख्यान समाप्त हुआ ।

अब अजीव पदार्थ का व्याख्यान है ।

(१२४)

यह आकाशादिका ही अजीवपना दर्शाने के लिए हेतु का कथन है ।

आगासकालपोग्गलधम्माधम्मेसु णत्थि जीवगुणा ।
तेसिं अचेदणत्त भणिदं जीवस्स चेदणदा ।।१२४।।

छंद-गीतिका

धर्म अधर्म नभ काल पुद्गल में नहीं है जीव गुण।
ये अचेतन जहा चेतन भाव वह है जीव सुन।।
सभी में सामान्य गुण हैं पर विशेष प्रथक प्रथक।
तत्त्व निर्णय के बिना तो ज्ञान ही है असंम्यक।
मोक्षमार्ग प्रपच का वर्णन परम सुख रूप है।
नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है।।१२४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१२५)

यह पुनश्च, आकाशादिका अचेतनत्व सामान्य निश्चित करने के लिए अनुमान है ।

सुहदुक्खजाणमा वा हिदपरियम्मं च अहिदभीरुत्तं।
जस्स ण विज्जदि णिच्चं तं समणा बेंति अज्जीवं ।। १२५।।

छंद-गीतिका

सुक्खदुख का ज्ञान हित उद्यम रहित भय जिसे नहिं।
कहते अजीव उसे श्रमण वह कभी भी जीव नहिं।।
जिन श्रमण तो सत्य ही कहते वचन हित कर सदा।
जो नहीं श्रद्धान करते दुक्ख पाते सर्वदा।।

मोक्षमार्ग प्रपंच का वर्णन परम सुख रूप है।

नव पदार्थ पूर्वक यह शुद्ध आत्म स्वरूप है। १२५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१२६)

जीव पुद्गल के सयोग में भी, उनके भेद के कारणभूत स्वरूप का यह कथन है (अर्थात् जीव और पुद्गल के सयोग में भी, जिनके द्वारा उनका भेद जाना जा सकता है ऐसे उनके भिन्न -भिन्न स्वरूप का यह कथन है।

संठाणा संघादा वण्णरसप्फासगंधसद्दा य।

पोग्गलदव्वप्पभवा होंतिगुणा पज्जया य बहू।।१२६।।

वीरछंद

संस्थान संघात वर्ण रस गंध पर्श अरु शब्द प्रपन्न।

ये बहुगुण पर्यायें सब ही तो है पुदगल द्रव्य निष्पन्न।।

कुन्दकुन्द की वचना वलि ही परम शान्ति सुखदाता है।

परमागम ही ज्ञान प्रदाता शाश्वत मंगल दाता है।।१२६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१२७)

जीव-पुदगल के सयोग में भी, उनके भेद के कारणभूत स्वरूप का यह कथन है (अर्थात् जीव और पुद्गल के सयोग में भी, जिसके द्वरा उनका भेद जाना जा सकता है ऐसे उनके भिन्न-भिन्न स्वरूप का यह कथन है)।

अरसमरूवमगंधं अव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं।

जाण अलिंगग्गहणं जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं ।।१२७।।

वीरछंद

अरस अरूप अगंध अव्यक्त अशब्द अगति निर्दिष्ट संस्थान।

इन्द्रिय से अग्राह्य चेतना गुण वाला है जीव महान।।

जीव अजीव द्रव्य दोनों का भेद यथार्थ जानता ज्ञान।
वीतराग सर्वज्ञ कथित दोनों के लक्षण लो पहचान।।
कुन्दकुन्द की वचनावलि ही परम शान्ति सुखदाता है।
परमागम ही ज्ञान प्रदाता शाश्वत मंगल दाता है।।१२७।।

ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

इस प्रकार अजीव पदार्थ का व्याख्यान समाप्त हुआ।

दो मूल पदार्थ कहे गए। अब (उनके) सयोगपरिणामसे निष्पन्न होने वाले अन्य सातपदार्थों के उपोद्घात के हेतु जीव कर्म और पुद्गल कर्म के चक्र का वर्णन किया जाता है।

(१२८)

इस लोक में ससारी जीव से अनादि बंधनरूप उपाधि के वश स्निग्ध परिणाम होता है परिणाम से पुद्गल परिणामात्मक कर्म, कर्म से नरकादि गतियों में गमन, गति की प्राप्ति से देह, देह से इंद्रिया, इन्द्रियों से विषयग्रहण, विषयग्रहण से रागद्वेष, रागद्वेष से फिर स्निग्ध परिणाम, परिणाम से फिर पुद्गल परिणामात्मक कर्म, कर्म से फिर नरकादि गतियों मे गमन, गति की प्राप्ति से फिर देह, देह से फिर इन्द्रियाँ, इन्द्रियों से फिर विषयग्रहण, विषयग्रहण से फिर रागद्वेष, रागद्वेष से फिर स्निग्ध परिणाम। इस प्रकार यह अन्योन्य कार्यकारण भूत जीव परिणामात्मक और पुद्गल परिणामात्मक कर्म जाल ससार चक्र में जीव को अनादि अनत रूप से अथवा अनादिसात रूप से चक्र की भांति पुन. पुन होते रहते हैं।

जो खलु संसारत्थो जीवो तत्तो दु होदि परिणामो।
परिणामादो कम्मं कम्मादो होदि गदिसु गदी।।१२८।।

वीरछंद

जो संसारी जीव उन्हें ही होते हैं चिकने परिणाम।
इन परिणामों से ही बनता अष्टकर्म बंधों का धाम।।

इन कर्मों के कारण ही गतियों में होता भ्रमन विचित्र।
राग द्वेष मोहादि भाव के बन जाते दुखदायी चित्र।।
कुन्दकुन्द की वचनावलि ही परम शान्ति सुखदाता है।
परमागम ही ज्ञान प्रदाता शाश्वत मगल दाता है।।१२८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहाय अर्घ्यं नि ।

(१२९)

वही कहते है

गदिमधिगदस्स देहो देहादो इदियाणि जायंते।
तेहि दु विसयग्गहणं तत्तो रागो व दोसो वा।।१२९।।

[illegible]

गति होते ही तन होता है तन से होती है इन्द्रिय।
इन्द्रिय से ही विषय ग्रहण है विषय ग्रहण से विभाव क्रिय।।
कुन्द कुन्द की वचनावलि ही परम शान्ति सुखदाता है।
परमागम ही ज्ञान प्रदाता शाश्वत मगल दाता है।।१२९।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१३०)

वही कहते है

जायदि जीवस्सेवं भावो ससारचक्कवालम्मि।
इदि जिणवरेहिं भणिदो अणादिणिधणो सणिधणो वा।।१३०।।

[illegible]

जीवों को ससार चक्र में होते रहते ऐसे भाव।
अनादि अनंत अनादि सांत होते हैं पुन: पुन: परभाव।।
कुन्दकुन्द की वचनावलि ही परम शान्ति सुखदाता है।
परमागम ही ज्ञान प्रदाता शाश्वत मगल दाता है।।१३०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहाय अर्घ्यं नि ।

अब पुण्य पाप पदार्थ का व्याख्यान है।

(१३१)

यह पुण्य-पाप के योग्य भाव के स्वभाव का (स्वरूप का) कथन है।

मोहो रागो दोसो चित्तपसादो य जस्स भावम्मि।
विज्जदि तस सुहो वा असुहो वा होदि परिणामो ।।१३१।।

वीरछंद

जिसके उर में मोह राग द्वेषादि विद्य है चित्त प्रसाद।
उसको ही परिणाम शुभाशुभ होता है जिसमें अवसाद।।
मोहराग द्वेषादि भाव हैं अप्रशस्त भव भव दुखरूप।
चित प्रसाद शुभ परिणामों मय राग प्रशस्त सुसाता रूप।।
कुन्द कुन्द की वचनावलि ही परम शान्ति सुखदाता है।
परमागम ही ज्ञान प्रदाता शाश्वत मगल दाता है।।१३१।।

ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित पथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१३२)

यह, पुण्य-पाप के स्वरूप का कथन है।

सुहपरिणामो पुण्णं असुहो पाव त्ति हवदि जीवस्स।
दोण्हं पोग्गलमेत्तो भावो कम्मत्तणं पत्तो।।१३२।।

वीरछंद

जीवों का परिणाम पुण्य शुभ अरु परिणाम अशुभ है पाप।
इस निमित्त से पुद्गल मात्र भाव कर्म को होते प्राप्त।।
कुन्द कुन्द की वचनावलि ही परम शान्ति सुखदाता है।
परमागम ही ज्ञान प्रदाता शाश्वत मगल दाता है।।१३२।।

ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित पथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१३३)

यह, मूर्त कर्मका समर्थन है

जम्हा कम्मस्स फलं विसयं फासेहिं भुंजदे णियदं।
जीवेण सुहं दुक्खं तम्हा कम्माणि मुत्ताणि।।१३३।।

वीरछंद

कर्मो का फल विषम नियम से इन्द्रिय द्वारा होता भोग्य।
सुखरूपी यह दुखरूपी है दोनों कर्म मूर्त्त हैं योग्य।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१३३।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परुपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१३४)

यह, मूर्तकर्म का मूर्तकर्म के साथ जो बंधप्रकार तथा अमूर्त जीव का मूर्तकर्म के साथ जो बंध प्रकार उसकी सूचना है।

मुत्तो फासदि मुत्त मुत्तो मुत्तेण बंधमणहवदि।
जीवो मुत्तिविरहिदो गाहदि ते तेहिं उग्गहदि।।१३४।।

वीरछंद

मूर्त्त मूर्त्त को स्पर्शन करता मूर्त्त मूर्त्त से होता बंध।
जीव अमूर्त्त मूर्त्त कर्म दोनों अवगाहन देते अंध।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१३४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परुपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

इस प्रकार पुण्य पाप पदार्थ का व्याख्यान समाप्त हुआ ।

(१३५)

अब आस्रव पदार्थ का व्याख्यान है।

यह, पुण्यास्रव के स्वरूप का कथन है।

रागो जस्स पसत्थो अणुकंपासंसिदो य परिणामो।
चित्तम्हि णत्थि कलुसं पुण्णं जीवस्स आसवदि।। १३५।।

वीरछंद

जिसे प्रशस्त राग उर में अनुकंपा युक्त जीव परिणाम।
जिसके मन में नहीं कलुषता उसको पुण्यास्रव परिणाम।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।। १३५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि।

(१३६)

यह, प्रशस्त राग के स्वरूप का कथन है।

अरहन्तसिद्धसाहुसु भत्ती धम्मम्मि जाय खलु चेट्ठा।
अणुगमणं पि गुरूणं पसत्थरागो त्ति वुच्चंति।। १३६।।

वीरछंद

अर्हंत सिद्ध साधुओं के प्रति भक्ति प्रशस्त रागमय पुण्य।
गुरुओं का अनुगमन धर्म में चेष्टा ही यथार्थ है पुण्य।।
वास्तव में तो अज्ञानी को भक्ति प्रधान राग होता।
तीव्र राग क्षय हित ज्ञानी को उच्च भूमिक में होता।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।। १३६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि।

(१३७)

यह, अनुकम्पा के स्वरूप का कथन है।

तिसिदं व भुक्खिदं वा दुहिदं दट्ठूण जो दु दुहिदमणो।
पडिवज्जदि तं किवया तस्सेसा होदि अणुकंपा।।१३७।।

वीरछंद

देख क्षुधातुर तथा तृषातुर भव दुख पाता है जो जीव।
दुखी देख करुणा करता है अनुकपा के भाव सदीव।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो सयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१३७।।

ॐ ह्री श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(१३८)

यह, चित्त की कलुषता के स्वरूप कथन है।

कोधो व जदा माणो माया लोभो व चित्तमासेज्ज।
जीवस्स कुणदि खोहं कलुसो त्ति य तं बुधा बेंति।।१३८।।

वीरछंद

कोध मान माया लोभादिक चित आश्रय पा करते क्षोभ।
ज्ञानी उसे कलुषता कहते अज्ञानी को इन का लोभ।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो सयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१३८।।

ॐ ह्री श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रह अर्घ्यं नि ।

(१३९)

यह, पापास्रव के स्वरूप का कथन है।

चरिया पमादबहुला कालुस्सं लोलदा य विसएसु।
परपरिदावपवादो पावस्स य आसवं कुणदि।।१३९।।

गीतछंद

बहु प्रमाद चर्या कालुषता विषयों के प्रति लोलुप भाव।
पर का ही परिताप तथा अपवाद पाप आस्रव दुर्भाव।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१३९।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(१४०)

यह, पापास्रवभूत भावों के विस्तार का कथन है।

सण्णाओ य तिलेस्सा इंदियवसदा य अट्टरुद्दाणि।
णाणं च दुप्पउत्त मोहो पावप्पदा होंति।।१४०।।

छंद ताटंक

चारों संज्ञा त्रय कुलेश्या इन्द्रिय वश हैं पाप मयी।
आर्त्तरौद्र दुर्ध्यान रती हैं पाप आस्रव मोहमयी।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१४०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

इस प्रकार आस्रव पदार्थ का व्याख्यान समाप्त हुआ।

(१४१)

अब संवर पदार्थ का व्याख्यान है

पाप के अनन्तर होनेसे, पाप के ही संवर का यह कथन है (अर्थात् पाप के कथन के पश्चात् तुरन्त होने से, यहाँ पाप के ही संवर का कथन किया है)।

इंदियकसायसण्णा णिग्गहिदा जेहिं सुट्ठु मग्गम्हि।
जावत्तावत्तेसिं पिहिदं पावासवच्छिद्दं।।१४१।।

गीतछंद

संज्ञा इन्द्रिय कषाय निग्रह कर सत्पथ में होना लीन।
उतना पापास्रव का होता छिद्र बंद यह सुनो प्रवीण।।

संवर द्वारा आस्रव जयकर बंधभाव का करो अभाव।
फल पंचास्तिकाय पढ़ने का पाओ अपना शुद्ध स्वभाव।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१४१।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१४२)

यह, सामान्यरूप से संवर के स्वरूप का कथन है।

जस्स ण विज्जदि रागो दोसो मोहो व सव्वदव्वेसु।
णासवदि सुहं असुहं समसुहदुक्खस्स भिक्खुस्स।।१४२।।

वीरछंद

सब द्रव्यों के प्रति न राग हो द्वेष मोह भी तनिक न लेश।
सुख दुख में सम अशुभ तथा शुभ आस्रव रहित साधु मुनिवेश।।
निर्विकार चैतन्यपने के कारण है संवर सपुष्ट।
भाव द्रव्य संवर के अधिपति है आचरण महान विशिष्ट।।
संवर द्वारा आस्रव जयकर बंधभाव का का करो अभाव।
फल पंचास्तिकाय पढ़ने का पाओ अपना शुद्ध स्वभाव।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१४२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१४३)

यह, विशेषरूप से संवर के स्वरूप का कथन है।

जस्स जदा खलु पुण्णं जोगे पावं च णत्थि विरदस्स।
संवरणं तस्स तदा सुहासुहकदस्स कम्मस्स।।१४३।।

छंद-ताटंक

पुण्यपाप से रहित सुमुनि को होता भाव द्रव्य संवर।
शुभ या अशुभ भाव कृत कर्मों का आगमन व रुका सत्वर।।

संवर द्वारा आस्रव जयकर बंधभाव का का करो अभाव।
फल पंचास्तिकाय पढ़ने का पाओ अपना शुद्ध स्वभाव॥
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान॥१४३॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि. ।

इस प्रकार संवर पदार्थ का व्याख्यान समाप्त हुआ।

(१४४)

अब निर्जरा पदार्थ का व्याख्यान है।

यह, निर्जरा के स्वरूप का कथन है।

संवरजोगेहिं जुदो तवेहिं जो चिट्ठदे बहुविहेहिं।
कम्माणं णिज्जरणं बहुगाणं कुणदि सो णियदं॥१४४॥

छंद ताटंक

संवरमय शुद्धोपयोग से बहु विध तप करता ज्ञानी।
नियत अनेक कर्म निर्जरा करता है सम्यक् ध्यानी॥
संवर द्वारा आस्रव जयकर बंधभाव का का करो अभाव।
फल पंचास्तिकाय पढ़ने का पाओ अपना शुद्ध स्वभाव॥
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान॥१४४॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि. ।

(१४५)

यह, निर्जरा के मुख्य कारण का कथन है।

जो संवरेण जुत्तो अप्पट्ठपसाधगो हि अप्पाणं।
मुणिऊण झादि णियदं णाणं सो संधुणोदि कम्मरयं॥१४५॥

छन्द-ताटंक

सवर युक्त जीव वास्तव में आत्मार्थ का साधक है।
निश्चल ज्ञान भाव अनुभव कर कर्मक्षयी आराधक है।।
पूर्वोपार्जित कर्म दोष क्षय करता ध्यान प्रसाधक है।
स्नेह लेप का सग क्षीण करता उत्तम आराधक है।।
सवर पूर्वक करो निर्जरित कर्म पुन्ज ससारमयी।
मुक्त स्वरूप तुम्हारा निर्मल तुम ही तो ससारजयी।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो सयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१४५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

(१४६)

यह, ध्यान के स्वरूप का कथन है।

जस्स ण विज्जदि रागो दोसो मोहो व जोगपरिकम्मो।
तस्स सुहासुहडहणो झाणमओ जायदे अगणी।।१४६।।

गीत

मोह राग द्वेषादि योग का जिसको सेवन कहीं न लेश।
शुभ अरु अशुभ जलाने वाली ध्यान अग्नि हो प्रगट विशेष।।
सवर पूर्वक करो निर्जरित कर्म पुन्ज ससारमयी।
मुक्त स्वरूप तुम्हारा निर्मल तुम ही तो ससारजयी।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१४६।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पञ्चास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि ।

इस प्रकार निर्जरापदार्थ का व्याख्यान समाप्त हुआ।

(१४७)

अब बध पदार्थ का व्याख्यान है।

यह, बध के स्वरूप का कथन है।

ज सुहमसुहमुदिण्णं भावं रत्तो करेदि जदि अप्पा।
सो तेण हवदि बद्धो पोग्गलकम्मेण विविहेण।।१४७।।

छंद-ताटक

रागों में रत शुभ या अशुभ भाव करता है जो आत्मा।
पुद्गल कर्मों से बधता है वही कहाता बहिरात्मा।।
सवर पूर्वक करो निर्जरित कर्म पुन्ज ससारमयी।
मुक्त स्वरूप तुम्हारा निर्मल तुम ही तो संसारजयी।।
श्रुतियों का तो अंत नहीं है काल अल्प है हम दुर्मेध।
मात्र सीखने योग्य वही हैं जिससे जरा मरण हो छेद।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१४७।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि।

(१४८)

यह, बध के बहिरग कारण और अन्तरग कारण का कथन है।

जोगणिमित्तं गहण जोगो मणवयकायसंभूदो।
भावणिमित्तो बंधो भावो रदिरागदोसमोहजुदो।।१४८।।

वीरछद

मन वच काय जनित योगों का भाव बध में सदा निमित्त।
आत्मा का परिणाम राग रंजित है तो है दुख से युक्त।।
संवर पूर्वक करो निर्जरित कर्म पुन्ज ससारमयी।
मुक्त स्वरूप तुम्हारा निर्मल तुम ही तो संसारजयी।।

कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१४८।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१४९)

यह, मिथ्यात्वादि द्रव्यपर्यायों को (द्रव्यमिथ्यात्वादि पुद्गलपर्यायों को) भी (बंध के) बहिरंग-कारणपने का प्रकाशन है।

हेदू चदुव्वियप्पो अट्ठवियप्पस्स कारणं भणिदं।
तेसिं पि य रागादी तेसिमभावे ण बज्झंति।।१४९।।

वीरछंद

योग कषाय असंयम अरु मिथ्यात्व चार बंधन के हेतु।
आठ प्रकार कर्म के कारण यह बहिरंग बंध के हेतु।।
प्रथम करो मिथ्यात्व विसर्जन फिर तुम करो असंयम दूर।।
सम्यक्‌दर्शन की महिमा ले हो जाओ चेतन भरपूर।।
संवर पूर्वक करो निर्जरित कर्म पुन्ज संसारमयी।
मुक्त स्वरूप तुम्हारा निर्मल तुम ही तो संसारजयी।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१४९।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि ।

इस प्रकार बंध पदार्थ का व्याख्यान समाप्त हुआ।

(१५०)

अब मोक्ष पदार्थ का व्याख्यान है।

यह, द्रव्यकर्ममोक्ष के हेतुभूत परम-सवररूप मे भावमोक्षके स्वरूप का कथन है।

हेदुमभावे णियमा जायदि णाणिस्स आसवणिरोधो।
आसवभावेण विणा जायदि कम्मस्स दु णिरोधो।।१५०।।

छंद-ताटक

हेतु अभाव हुआ तो आस्रव का निरोध है ज्ञानी को ।
आस्रव के अभाव में कर्मों का निरोध है ध्यानी को ।।
प्रथम करो मिथ्यात्व विसर्जन फिर तुम करो असयम दूर ।
सम्यक्‌दर्शन की महिमा ले हो जाओ सुख से भरपूर ।।
संवर पूर्वक करो निर्जरित कर्म पुन्ज संसारमयी ।
मुक्तस्वरूप तुम्हारा निर्मल तुम ही तो ससारजयी ।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान ।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१५०।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ परूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

(१५१)

यह, द्रव्यकर्ममोक्ष के हेतुभूत परम-सवररूप मे भावमोक्षके स्वरूप का कथन है।

कम्मस्साभावेण य सव्वण्हू सव्वलोगदरिसी य।
पावदि इंदियरहिदं अव्वाबाहं सुहमणंतं।।१५१।।

छंद ताटक

कर्मों का अभाव होना पावनता सर्व लोक दर्शी।
इन्द्रिय रहित अनंत सौख्य अव्याबाधी ही निज स्पर्शी।।

आस्रवभाव अभाव हुआ तो कर्मो का अभाव होगा।
इन्द्रिय व्यापार अतीत पूर्ण सुख वाला सदा जीव होगा।।
प्रथम करो मिथ्यात्व विसर्जन फिर तुम करो असंयम दूर।।
सम्यक्‌दर्शन की महिमा ले हो जाओ सुख से भरपूर।।
संवर पूर्वक करो निर्जरित कर्म पुन्ज संसारमयी।
मुक्तस्वरूप तुम्हारा निर्मल तुम ही तो संसारजयी।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१५१।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रह अर्घ्यं नि.।

(१५२)

यह, द्रव्यकर्म मोक्ष के हेतुभूत ऐसी परम निर्जरा के कारणभूत ध्यान का कथन है।

दंसणणाणसमग्गं झाणं णो अण्णदव्वसंजुत्तं।
जायदि णिज्जरहेदू सभावसहिदस्स साधुस्स।।१५२।।

वीरछंद

अन्य द्रव्य से असंयुक्त ही ध्यान निर्जरा का है हेतु।
है स्वभाव परिणत सम्पूर्ण ज्ञान दर्शन कैवल्य सुकेतु।।
प्रथम करो मिथ्यात्व विसर्जन फिर तुम करो असंयम दूर।।
सम्यक् दर्शन की महिमा ले हो जाओ सुख से भरपूर।।
संवर पूर्वक करो निर्जरित कर्म पुन्ज संसारमयी।
मुक्त स्वरूप तुम्हारा निर्मल तुम ही तो संसारजयी।।
कुन्दकुन्द की वाणी सुनकर उनके पथ पर चलो सुजान।
अपना जीवन करो संयमित आत्म तत्त्व का ले श्रद्धान।।१५२।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम श्रुतस्कंध श्रीपरमागम पंचास्तिकाय संग्रहे अर्घ्यं नि.।

(१५३)

यह, द्रव्यमोक्ष के स्वरूप का कथन है।

जो सवरेण जुत्तो णिज्जरमाणोध सव्वकम्माणि।
ववगदवेदाउस्सो मुयदि भवं तेण सो मोक्खो।।१५३।।

छद ताम्क

दृढ सवर से युक्त सर्व कर्मो की जो निर्जरा करे।
वेदनीय अरु आयु रहित है। भव को तज शिव सौख्य वरे।।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित्रमयी रत्नत्रय शिव सुखदाय।
यह पचास्तिकाय का है उद्देश परम पावन हितदाय।
कुन्दकुन्द की परम कृपा से षड् द्रव्यों का ज्ञान हुआ।
आत्म द्रव्य की महिमा जानी शुद्धातम का भान हुआ।।
धन्य धन्य हैं कुन्दकुन्द ऋषि धन्य धन्य है परमागम।
मोक्षमार्ग के दर्शन पाए नाश हुआ मिथ्या भ्रम तप।।१५३।।

ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित द्वितीय श्रुतस्कध श्री परमागम पचास्तिकाय सग्रहे अर्घ्यं नि ।

इस प्रकार मोक्ष पदार्थ का व्याख्यान समाप्त हुआ ।
और मोक्ष मार्ग के अवयव रूप सम्यग्दर्शन तथा सम्यकज्ञान के विषय भूत नव पदार्थों का व्याख्यान समाप्त हुआ ।

महाअर्घ्य

छद

सयम की वेला का स्वागत करो।
अविरति के दोष सकल पल में हरो।।
सग्रह पचास्तिकाय मोक्ष हेतु है,
निर्वाण सुन्दरी भवन का केतु है।।

इसका ही सर्वदा आदर करो।
सयम की बेला का स्वागत करो।।
कर्मों की कालुषता अभी करो दूर ।
अनुभव से ज्ञान का लाओ तुम पूर।।
परमामृत रस से ही उसको भरो ।
सयम की बेला का स्वागत करो ।।
दीक्षा लो अभी तुम पारमेश्वरी।
रत्नत्रय मडित ही लाओ तुम तरी।।
ससार सागर से अब तो तरो।
सयम की बेला का स्वागत करो।।
महार्घ्य अर्पित करो प्रेम से,
निज स्वभाव अनर्घ्य लो नित्य नेम से।
कर्मों के सारे ही बधन हरो।
सयम की बेला का स्वागत करो।।

छद-कुन्डलिया

ज्ञान सूर्य कर तेजहो जगमें विषद अपार।
ज्ञान चद्र की ज्योति से मिल जाता भव पार।।
मिल जाता भव पार सर्व दुख मिट जाते है।
पथ में जो आते विभाव वे पिट जाते हैं।।
दुन्दुभिनाद सुनाई देता भव्य तूर्य का।
उज्जवलतम प्रकाश होता है ज्ञान सूर्य का।।

दोहा

महाअर्घ्य अर्पित करू मोक्ष पदार्थ पिछान।
भाव कर्म सतति जयी हो जाऊँ भगवान।।

नव पदार्थ व्याख्यान सुन करूं आत्म कल्याण।

मुक्ति प्राप्ति की कला का पाऊं सम्यक ज्ञान।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्रणीत ज्ञान प्रवाद पूर्वान्तर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृत अन्तर्गत श्री पञ्चास्तिकाय परमागमाय महार्घ्यं नि ।

जयमाला

वीर छंद

आत्म तत्त्व सौदागर बनकर करो ज्ञान का ही व्यापार।

इसमें सदा लाभ ही होगा यह निश्चय कर लो स्वीकार।।

सप्त तत्त्व नव पदार्थ जानो छह द्रव्यों का करलो ज्ञान।

इन सबमें निज आत्म तत्त्व ही सर्वोत्तम है परम महान।।

कर्मों की धज्जियां उड़ा दो आत्म ज्ञान उर ले सुन्दर।

राग द्वेष मोहादि विकारों को गाडो भूतल भीतर।।

अनेकान्त ध्वज दंड लगाओ स्याद्वाद ध्वज से संयुक्त।

मोक्षमार्ग सम्पूर्ण पारकर हो जाओ सिद्धत्व सुयुक्त।।

भव वेदना हरो पूरी ही नाम न उसका शेष रहे।

अशरीरी शरीर है अपना जो स्वभाव रस उदधि बहे।।

गुण अनंत की महिमावाला मुकुट सजा लो मस्तक पर।

शक्ति अनंतानंत हार को हृदय सजा लो जीभर कर।।

दिव्य ध्वनि के कुन्डल पहिनो हो भुजबंद चेतनामय।

दर्शन भावी पायल पग में शोभित हो हर कषाय भय।।

अष्टादश सहस्रशील हों उत्तर गुण चौरासी लक्ष।

अनुभव रस सागर लहराए आत्मानंद नचे प्रत्यक्ष।।

स्वानुभूति महिमा से मंडित हो जाऊंगा अब निर्मल।

नव वंशी बाजेगी निज की निज स्वरूप होगा उज्ज्वल।।

उज्ज्वल मुक्ति वधू तेरे चरणों को धोएगी सादर।

शिवसिद्धत्व शक्ति प्रगटेगी तेरे ही भीतर सत्वर।।

सम्यक् दर्शन के सम्मुख हो सिन्दूरी सध्या पाता।
ज्ञान चद्रिका के प्रकाश में रत्नत्रय की निधि लाता॥
मुक्ति मार्ग सम्पूर्ण जयी बन मुक्तिभवन में पग धरता।
सकल कर्म मल का अभाव कर भव दुख सागर को हरता॥
शिव सुख शैय्या से सज्जित हो सदा सदा को मुसकाता।
प्राप्त मुक्ति रमणी की सेवा करके परम शान्ति पाता॥
पुष्प वृष्टि कर मुक्ति वधू परिणय करती है भली प्रकार।
ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प का भी हो जाता है परिहार॥
उच्च गगन मडल में बजती शहनाई आनदमयी।
सिद्ध हुए चतन्य राज अव त्रिभुवनपति भवद्वद जयी॥

सवैया

वेदनीय वेदना का अब तो अभाव करू ।
मोहनीय वेदना को पूरा क्षय करके ॥
ज्ञानावरणीय कर्म जीतू अभी पूरा पूरा ।
दर्शनआवरणीय पूरा पूरा हर के ॥
अन्तराय दुष्ट धराशायी अभी आज करूँ ।
आयु नाम गोत्र कर्म तीनों जय करके ॥
अष्टकर्म नष्ट कर ज्ञान को सपूर्ण करूँ ।
मुक्ति के भवन चलू भव विजय करके ॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रवाद पूर्वान्तर्गत दशम वस्तु [illegible] तृतीय प्राभृत अन्तर्गत पंचास्तिकाय परमागमाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि ।

छद-ताटक

नव पदार्थ का ज्ञान प्राप्त कर निज पदार्थ का ज्ञान करूं।
सप्त तत्त्व श्रद्धान पूर्वक आत्मतत्त्व श्रद्धान करूं॥
सम्यक् ज्ञान शक्ति को पाकर उर सम्यक् चारित्र धरूं
अनुभव रस का समुद्र पाऊ अन्तर्घट सम्पूर्ण भरूं॥

इत्याशीर्वाद

लघु पीठिका

(मोक्षमार्ग प्रपंच सूचिका चूलिका पूजन)

छंद गीतिका

मोक्षमार्ग प्रपंच सूचक चूलिका का ज्ञान कर।
मोक्ष के पथ पर चलूँ मैं आत्म निज का भान कर।।
भव दुखों से छूटने का यही एक उपाय है।
मुक्ति पथ की पूर्णता परिपूर्ण शिवसुखदाय है।।
मुक्तिपथ पर चले बिन कल्याण हो सकता नहीं।
रत्न त्रय के आचरण बिन ध्यान हो सकता नहीं।।
शुक्ल ध्यान अपूर्व की विधि आत्म ध्यान स्वरूप है।
पूर्ण केवलज्ञान पाने मे यही अनुरूप है।।
ज्ञान दर्शन रूप मेरा ध्रुव त्रिकाली है परम।
इसीका आश्रय करूँगा मुक्ति पाऊँगा स्वयम्।।
जिय स्वयम् अस्तित्व गुणमय ध्यान ध्रुव का पात्र है।
ध्यान बिन निर्वाण की आशा दुराशा मात्र है।।
अतः अपने ध्यान का ही सुनिश्चय कर लूँ अभी।
मोक्षसिद्धि महान होगी स्वनिधि पाऊँगा सभी ।।

दोहा

मोक्षमार्ग की चूलिका परम पवित्र महान
निजबल से ही प्राप्त हो शाश्वत पद निर्वाण

पुष्पांजलि क्षिपामि

पूजन क्रमांक-४

मोक्षमार्ग प्रपंच सूचिका चूलिका पूजन

स्थापना

दोहा

मोक्षमार्ग की प्राप्ति का तीरक श्रेष्ठ उपाय।
समकित का सौन्दर्य हो शाश्वत शिव सुखदाय।।

छंद-गीतिका

मोक्षमार्ग प्रपच सूचक चूलिका पूजन करूं।
मोक्षपति सिद्धत्व अधिपति सभी को वन्दन करूं।।
कर्म रस मे विरत होकर शुद्ध अनुभव रस पिऊं।
आत्मा की छवि लख कर मैं सदा निज में जिऊं।।
मोह के फोडूं नगाडे राग की वशी तजूं।
धार दृढ वैराग्य उर में स्वात्मा को ही भजूं।।
कार्माण वर्गणाए निकट भी आए नहीं।
सकल परिणतिया विभावों की मुझे भायें नहीं।।
कर्म विरहित अवस्था में सदा ही प्रभु मैं जिऊ।
सादिनतानत कालों तक स्वरस ही मैं पिऊ।।
पचवर्णी तीर्थंकर प्रभु मुझे अब यह ज्ञान दो।
आपके दर्शन करूं मैं त्वरित निज का भान हो।।
भेदज्ञान कला सिखा दो दो स्वरूपाचरण निधि।
मोक्ष पाने की सिखा दो नाथ मुझको सरल विधि।।

दोहा

ज्ञान भाव की भावना मैं भाऊ दिन रात।
भव प्रपच को नष्ट कर पाऊ मोक्ष प्रभात।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कन्ध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पञ्चास्तिकायसंग्रह अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कन्ध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पञ्चास्तिकायसंग्रह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं नि ।
ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कन्ध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पञ्चास्तिकायसंग्रह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरणं।

अष्टक

वीरछंद

परम श्रेष्ठ रस आत्मामृतरस महास्वाद निर्भेर भरपूर।
इसका आस्वादन है अनुभव गम्य नहीं ज्ञानी से दूर।।
मोक्ष प्राप्ति की कला प्राप्ति हित समकित जल धारा लाऊं।
द्रव्यभाव नो कर्म रहित हो शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कन्ध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पञ्चास्तिकायसंग्रहायजन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि ।

नहीं व्यवस्थित मति जब तक तब तक तर्कों का पार नहीं।
चित्त सरल वैराग्यमयी हो फिर कोई भव धार नहीं।।
मोक्ष प्राप्ति की कला प्राप्ति हित समकित जल धारा लाऊं।
द्रव्यभाव नो कर्म रहित हो शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कन्ध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पञ्चास्तिकायसंग्रहायसंसारताप विनाशनाय चंदनं नि ।

राग ज्ञान की सूक्ष्म संधि को प्रज्ञा छैनी से दूं छेद।
भेदज्ञान की महाशक्ति से निरख स्वयं को पूर्ण अभेद।।
मोक्ष प्राप्ति की कला प्राप्ति हित शुद्धभाव अक्षत लाऊं।
द्रव्यभाव नो कर्म रहित हो शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कन्ध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पञ्चास्तिकायसंग्रहायअक्षयपद प्राप्ताय अक्षतं नि ।

राग प्रशस्त पराश्रित ही है अप्रशस्त की भांति विभाव।
महिमावंत आत्मा में तो इन दोनों का पूर्ण अभाव।।
मोक्ष प्राप्ति की कला प्राप्ति हित निर्मल ज्ञान पुष्प लाऊं।
द्रव्यभाव नो कर्म रहित हो शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पंचास्तिकायसंग्रहाय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि ।

राग पक्ष तज हो स्वभाव सन्मुख निज श्रेयस को कर लक्ष।
वर्त्तमान में ही परिपूर्ण चिदानंदी अनुभव प्रत्यक्ष।।
मोक्ष प्राप्ति की कला प्राप्ति हित चरु चारित्रमयी लाऊं।
द्रव्यभाव नो कर्म रहित हो शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पंचास्तिकायसंग्रहायक्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य नि ।

दर्शन मोह दोष ही सबसे बड़ा दोष है दुखदायी।
अल्प दोष चारित्र मोह का कभी नहीं विष फलदायी।।
मोक्ष प्राप्ति की कला प्राप्ति हित स्वानुभूति दीपक लाऊं।
द्रव्यभाव नो कर्म रहित हो शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पंचास्तिकायसंग्रहाय मोहान्धकार विनाशनाय दीप नि ।

सांसारिक प्रपंच में पडकर व्यर्थ बसाया है संसार।
भव प्रपंच तज निज भूतार्थ आश्रय से होजा भव पार।।
मोक्ष प्राप्ति की करना प्राप्ति हित ध्यान धूप उर में लाऊँ।
द्रव्यभाव नो कर्म रहित हो शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पंचास्तिकायसंग्रहायअष्टकर्म दहनाय धूप नि ।

अगर अकर्त्ता बनना है तो अभी जान क्रमबद्ध स्वरूप।
भव का संकट टल जाएगा देखेगा जब निज चिद्रूप।।

मोक्ष प्राप्ति की कला प्राप्ति हित आत्म ज्ञान सत्य फल लाऊं।

द्रव्यभाव नो कर्म रहित हो शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पंचास्तिकायसंग्रहायमहा मोक्षफल प्राप्ताय फल नि ।

परम पारिणामिक स्वभाव तो वीतराग है शुद्ध त्रिकाल।

निरावरण निर्दोष निरामय पूर्ण अखंड महान विशाल।।

रात्रि स्वप्न जैसे झूठा है, त्यों संसार स्वप्न भी झूठ।

पर्यायों का खेल मात्र है द्रव्य सदा ही सत्य अटूट।।

मोक्ष प्राप्ति की कला प्राप्ति हित अद्भुत दिव्य अर्घ्य लाऊं।

द्रव्यभाव नो कर्म रहित हो शाश्वत सिद्ध स्वपद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रथम द्वितीय श्रुतस्कंध स्वरूप प्रवादपूर्वान्तर्गत दशमवस्तु तृतीय प्राभृतअन्तर्गत श्रीपरमागम पंचास्तिकायसंग्रहायअनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घ्य नि ।

अर्घ्यावलि

(मोक्षमार्ग प्रपंच सूचिका चूलिका)

(१५४)

यह, मोक्षमार्ग के स्वरूप कथन है।

जीवसहावं णाणं अप्पडिहददंसणं अणण्णमयं।

चरियं च तेसु णियदं अत्थित्तमणिंदियं भणियं।।१५४।।

पद-तारंक

जीव स्वभाव ज्ञान दर्शन युत अप्रतिहत युत अनन्यमय।

दर्शन ज्ञान नियत अस्तित्व अनिंदित है यह चरित्रमय।।

कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।

परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।

धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।।

मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण।।१५४।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्य नि ।

(१५५)

स्वसमय के ग्रहण और परसमय के त्यागपूर्वक कर्मक्षय होताहै-

जीवो सहावणियदो अणियदगुणपज्जओध परसमओ।
जदि कुणदि सगं समयं पब्भस्सदि कम्मबधादो।।१५५।।

छंद-ताटंक

जीव स्वभाव नियत यदि गुण पर्यायें अनियत परसमयी।
नियत परिणमित गुण पर्यायें कर्म बध तजता स्वजयी।।
पर चारित्र पर समय ही है स्व समय ही है निज चारित्र।
निज स्वभाव में सदा अवस्थित है अस्तित्व स्वरूप चारित्र।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।।
मोक्षमार्ग का प्रपच साधन करके पाऊ पद निर्वाण।।१५५।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रह परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१५६)

यह, परचारित्र में प्रवर्तन करने वाले के स्वरूप का कथन है।

जो परदव्वम्हि सुह असुह रागेण कुणदि जदि भावं।
सो सगचरित्तभट्ठो परचरियचरो हवदि जीवो।।१५६।।

छंद-ताटंक

जो रागों से पर द्रव्यों से शुभ या अशुभभाव करता।
जीव स्वय चारित्र भ्रष्ट हो पर चारित्र हृदय धरता।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊ पद निर्वाण।।१५६।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रह परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१५७)

यहाँ, परचारित्रवृत्ति बंध हेतुभूत होने से उसे मोक्षमार्गपने का निषेध किया गया है (अर्थात् परचारित्र में प्रवर्तन बंध का हेतु होने से वह मोक्षमार्ग नहीं है ऐसा इस गाथा में दर्शाया है)।

आसवदि जेण पुण्णं पावं वा अप्पणोध भावेण।
सो तेण परचरित्तो हवदि त्ति जिणा परूवेंति।।१५७।।

जिन भावों से पुण्य पाप आस्रवित हुआ करते प्रतिपल।
उन भावों से पर चरित्र है आत्मा को, जिन कथन प्रबल।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण।।१५७।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अंतर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रह परमागमाय अर्घ्यं नि.।

(१५८)

यह, स्वचारित्र में प्रवर्तन करनेवाले के स्वरूप का कथन है।

जो सव्वसंगमुक्को णण्णमणो अप्पणं सहावेण।
जाणदि पस्सदि णियद सो सगचरियं चरदि जीवो।।१५८।।

[illegible]

आत्मा सर्वसंग मुक्तहो अनन्यमय निज पग धरता।
दर्शन ज्ञान स्वभाव नियत हो स्वचारित्र को आचरता।।
होता है दृशि ज्ञप्ति स्वरूपी वृत्ति स्वरूपी नहीं विकल्प।
जल्प विजल्प विकल्प रहित हो हो जाता है यह अविकल्प।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।

धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण॥१५८॥

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय सग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१५९)

यह, शुद्ध स्वचारित्रप्रवृत्ति के मार्ग का कथन है।

चरियं चरदि सगं सो जो परदव्वप्पभावरहिदप्पा।
दंसणणाणवियप्पं अवियप्पं चरदि अप्पादो॥१५९॥

छंद-ताटंक

पर द्रव्यात्मक भावों से जो रहित स्वरूपवान होता।
दर्शन ज्ञान स्वरूप भेद से हो अभेद गुणमय होता॥
उसका तीर्थ उपाय सफल है तथा सुफल निजमय चारित्र।
आत्म स्वभाव भूत ही रहता हो जाता है परम पवित्र॥
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण॥
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपच साधन करके पाऊ पद निर्वाण॥१५९॥

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय सग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१६०)

निश्चयमोक्षमार्ग के साधनरूपमे, पूर्वोद्दिष्ट (१०७ वीं गाथा में उल्लिखित) व्यवहारमोक्षमार्ग का यह निर्देश है।

धम्मादीसद्दहण सम्मत्त णाणमगपव्वगदं।
चेट्ठा तवम्हि चरिया ववहारो मोक्खमग्गो त्ति॥१६०॥

वीरछंद

धर्म अस्तिकायादिक श्रद्धा लो सम्यक्त्व परम बलवान।
अंग पूर्व संबधी जितना ज्ञान वही है सम्यक् ज्ञान॥

सम्यक् तप में प्रवृत्ति चेष्टा ये ही हैं सम्यक् चारित्र।
मोक्षमार्ग व्यवहार यही है साधन शिवपथ का सुपवित्र।।
निज स्वभाव में जीव समाहित पाता निरुपराग आनंद।
पर से व्यावृत मोह व्यूह हर पाता है ध्रुव परमानंद।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपच साधन करके पाऊ पद निर्वाण।।१६०।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१६१)

व्यवहारमोक्षमार्ग के साध्यरूपसे, निश्चयमोक्षमार्ग का यह कथन है।

णिच्छयणएण भणिदो तिहि तेहि समाहिदो हु जो अप्पा।
ण कुणदि किंचि वि अण्णं ण मुयदि सो मोक्खमग्गो त्ति।।१६१।।

वीरछंद

दर्शन ज्ञान चरित्र त्रिलक्षण में एकाग्र अभेद स्वरूप।
करता नहीं छोड़ता ना कुछ मोक्षमार्ग यह निश्चय रूप।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण।।१६१

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि.।

(१६२)

यह, आत्मा के चारित्र-ज्ञान दर्शनपने का प्रकाशन है (अर्थात् आत्मा ही चारित्र, ज्ञान और दर्शन है ऐसा यहाँ समझाया है।)

जो चरदि णादि पेच्छदि अप्पाणं अप्पणा अणण्णमयं।
सो चारित्तं णाणं दंसणमिदि णिच्छिदो होदि॥१६२॥

वीरछंद

[६३] **प्रति विधान से विशिष्ट है भावना सौष्ठव से संयुक्त।**
आत्म स्वभावभूत रत्नत्रय अंगी निश्चय शिवपथ युक्त॥
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण॥
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण॥१६२॥

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१६३)

यह, सर्व संसारी आत्मा मोक्षमार्ग के योग्य होने का निराकरण (निषेध) है।

जेण विजाणदि सव्वं पेच्छदि सो तेण सोक्खमणुहवदि॥
इदि तं जाणदि भविओ अभव्यसत्तो ण सद्दहदि॥१६३॥

वीरछंद

ज्ञाता दृष्टा जीव मुक्त हो परम सौख्य अनुभव करता।
भव्य जानता किन्तु अभव्य जीव श्रद्धान नहीं करता॥
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण॥
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण॥१६३॥

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१६४)

यहा, दर्शन-ज्ञान-चारित्र का कथचित् बधहेतुपना दर्शाया है और इस प्रकार जीवस्वभाव में नियत चारित्र का साक्षात् मोक्षहेतुपना प्रकाशित किया है।

दंसणणाणचरित्ताणि मोक्खमग्गो त्ति सेविदव्वाणि।
साधूहि इदं भणिदं तेहिं दु बंधो व मोक्खो वा।।१६४।।

वीरछद

दर्शन ज्ञान चरित्र मुक्तिपथ ही सेवन करने के योग्य।
अगर पर समय प्रवृत्ति है तो यह भी होते बधन योग्य।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपच साधन करके पाऊ पद निर्वाण।।१६४।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय सग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१६५)

यह, सूक्ष्म परसमय के स्वरूप का वर्णन है।

अण्णाणादो णाणी जदि मण्णदि सुद्धसंपओगादो।
हवदि त्ति दुक्खमोक्खं परसमयरदो हवदि जीवो।।१६५।।

छद-ताटक

अज्ञानी शुभ भक्ति भाव से दुख का मोक्ष मानता है।
सूक्ष्म निज समय में रत ज्ञानी ऐसा नहीं मानता है।।
जब विपरीत मान्यता होती तब ही होता है उत्पात।
जब अनुकूल पात्रता होती तब झरता है ज्ञान प्रपात।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।

धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण।।१६५।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि. ।

(१६६)

यहाँ, पूर्वोक्त शुद्धसम्प्रयोग को कथंचित् बंधहेतुपना होने से उसका मोक्षमार्गपना निरस्त किया है (अर्थात् ज्ञानी को वर्तता हुआ शुद्धसम्प्रयोग निश्चय से बंधहेतुभूत होने के कारण वह मोक्षमार्ग नहीं है ऐसा यहाँ दर्शाया है)।

अरहंतसिद्धचेदियपवयणगणणाणभत्तिसंपण्णो।
बंधदि पुण्णं बहुसो ण हु सो कम्मक्खयं कुणदि।।१६६।।

वीरछन्द

अर्हंत सिद्ध चैत्य प्रवचन मुनि गण व ज्ञान के प्रतिदृढ़ भक्ति।
बहुत पुण्य का कारण फिर भी नहीं कर्मक्षय की है शक्ति।।
सम्यक् वस्तु स्वरूप जानकर सम्यक् पथ पर धरूँ चरण।
निज शुद्धात्म तत्त्व की ही विश्रान्त रूप लूं परम शरण।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण।।१६६।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि. ।

(१६७)

यहाँ, स्वसमय की उपलब्धि के अभावका, राग एक हेतु है ऐसा प्रकाशित किया है (अर्थात् स्वसमय की प्राप्ति के अभाव का राग ही एक कारण है ऐसा यहाँ दर्शाया है)।

जस्स हिदएणुमेत्तं वा परदव्वम्हि विज्जदे रागो।
सो ण विजाणदि समयं सगस्स सव्वागमधरो वि।।१६७।।

वीरछन्द

पर द्रव्यों के प्रति अणु भर भी जिसका हृदय राग में लीन।
भले सर्व आगम धर हो वह स्वसमय से है अनुभवहीन।।
स्व समय की उपलब्धि अभाव यही है राग द्वेष कारण।
राग रेणु कणिका भी है तो वह है कभी न भव तारण।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊ पद निर्वाण।।१६७।।

ॐ ह्रीं द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय सग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१६८)

यह, रागलवमूलक दोषपरम्परा का निरूपण है (अर्थात् अल्प राग जिसका मूल है ऐसी दोषों की सतति का यहाँ कथन है।

धरिदुं जस्स ण सक्कं चित्तुब्भामं विणा दु अप्पाणं।
रोदो तस्स ण विज्जदि सुहासुहकदस्स कम्मस्स।।१६८।।

छन्द-ताटक

चित्तोद्भ्रम से रहित नहीं हो सकता है जो भी आत्मा।
कर्म शुभाशुभ के विरोध बिन वह तो है संसारात्मा।।
अल्पराग भी मूल दोष सतति का निर्विवाद जानो।
है अनर्थ संतति का राग विलास मूल यह पहचानो।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊ पद निर्वाण।।१६८।।

ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय सग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१६९)

यह, रागरूप क्लेश का नि शेष नाश करने योग्य होने का निरूपण है।

तम्हा णिव्वुदिकामो णिस्संगो णिम्ममो य हविय पुणो।
सिद्धेसु कुणदि भत्तिं णिव्वाणं तेण पप्पोदि।।१६९।।

वीरछद

मोक्षार्थी निःसंग हुआ निर्मम करता सिद्धों की भक्ति।
करता निज शुद्धात्म द्रव्य में पारमार्थिक थिर हो शिव भक्ति।।
निज में ही विश्वासरूप है अतः प्राप्त करता निर्वाण।
कर्म बध अवशेष नाशकर सिद्धि प्राप्त करता अमलान।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपच साधन करके पाऊ पद निर्वाण।।१६९।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय सग्रह परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१७०)

यहाँ, अर्हतादि की भक्तिरूप परसमयप्रवृत्ति में साक्षात् मोक्षहेतुपने का अभाव होने पर भी परम्परा से मोक्षहेतुपने का सद्भाव दर्शाया है।

सपयत्थं तित्थयरं अभिगदबुद्धिस्स सुत्तरोइस्स।
दूरतर णिव्वाणं संजमतवसंपउत्तस्स।।७०।।

वीरछद

सयम तप से युक्त किन्तु तीर्थकर नव पदार्थ बहुमान।
सूत्रों के प्रति जिसे सुरुचि है उसे दूरतर है निर्वाण।
प्रचुर शक्ति उत्पन्न नहीं की शुभभावों में रहता लीन।
देव लोक के क्लेश प्राप्त कर फिर होता शिवमार्ग प्रवीण।।

कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण।।१७०।।

ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१७१)

यह, मात्र अर्हन्तादिकी भक्ति जितने राग से उत्पन्न होने वाला जो साक्षात् मोक्ष का अन्तराय उसका प्रकाशन है।

अरहंतसिद्धचेदियपवयणभत्तो परेण णियमेण।
जो कुणदि तवोकम्मं सो सुरलोगं समादियदि।।१७१।।

ताटंक

जो अरहंत सिद्ध चैत्य प्रवचन के प्रति है भक्ति सहित।
परम संयमी तप करता वह पाता देवों की संपत्ति।।
अन्तराय साक्षात् मोक्ष का है अरहंत आदि की भक्ति।
अंतर में संतप्त राग से दह्यमान है अभी अशक्ति।।
मोह मल्ल को अभी उखाड़ो सर्व दाह बुझ जाएगी।
मुक्ति कामिनी भी चरणों में शीष नत किए आएगी।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण।।१७१।।

ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१७२)

यह साक्षात् मोक्षमार्ग के सार-सूचना द्वारा शास्त्र तात्पर्यरूप उपसहार है (अर्थात् यहाँ साक्षात् मोक्षमार्ग का सार क्या है उसके कथन द्वारा शास्त्र का तात्पर्य कहने रूप उपसहार किया है।

तम्हा णिव्वुदिकामो रागं सव्वत्थ कुणदु मा किंचि।
सो तेण वीदरागो भविओ भवसायरं तरदि।।१७२।।

[६६] छद-नाटक

यदि मुमुक्षु हो तो तुम किंचित कहीं न अणु भर राग करो।
निकट भव्य बन वीतराग हो यह भव सागर त्याग करो।।
चंदन वृक्ष काष्ठ अग्नि भी अग्नि समान स्वरूप ज्वलंत।
त्यों शुभ भी है अशुभ समान सतत दुख दायक हरो तुरत।।
पारमेश्वरी शास्त्र पाया है पारमेश्वरी दीक्षा लो।
वीतरागता जगा हृदय में मुक्ति प्राप्ति की शिक्षा लो।।
मंथर गति से अब न चलो तुम, वायुयान सम हो गतिवान।
दर्शन ज्ञान चारित्र वीर्य तप द्वारा करो कर्म अवसान।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपंच साधन करके पाऊं पद निर्वाण।।१७२।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय सग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

(१७३)

यह, कर्त्ता की प्रतिज्ञा की पूर्णता सूचित करनेवाला समाप्ति है (अर्थात यहाँ शास्त्रकर्ता श्रीमद्‌भगवत्कुन्दकुन्दाचार्यदेव अपनी प्रतिज्ञा की पूर्णता सूचित करते हुए शास्त्रसमाप्ति करते हैं)।

मग्गप्पभावणट्ठं पवयणभत्तिप्पचोदिदेण मया।
भणियं पवयणसार पंचत्थियसंगह सुत्तं।।१७३।।

६७]

छंद-ताटक

प्रवचन सारभूत यह प्रवचन है पचास्तिकाय सग्रह।
जिन प्रभावना का ही पावन हेतु पूर्णतः है निस्पृह।।
कृत्य कृत्य निष्कर्म रूप हो शुद्ध स्वरूप करो सत्यार्थ।
वस्तु तत्त्व प्रतिपादन कर्त्ता जिन आगम निश्चय भूतार्थ।।
कुन्दकुन्द के शब्द ब्रह्म का उत्तम फल है मोक्ष महान।
परम ध्यान वैराग्यमयी हो करो आत्मा का कल्याण।।
धन्य धन्य श्री कुन्दकुन्द मुनि धन्य धन्य परमागम ज्ञान।
मोक्षमार्ग का प्रपच साधन करके पाऊं पद निर्वाण।।१७३।।

ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कध अन्तर्गत श्रीपचास्तिकाय सग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

र प्रकार (श्रीमद भगवत्कुन्दकुन्दाचार्य देव) प्रारँभ किये हुये कार्य के अन्त को पाकर अत्यन्त कृत्य होकर परम नैष्कर्म रूप शुद्ध स्वरूप में विश्रात हुये (परम निष्कर्मपने रूप शुद्धस्वभाव स्थित हुये) ऐसे श्रद्धेय जाते है अर्थात हम ऐसी श्रद्धा करते है।

इस प्रकार श्री पचास्तिकाय सग्रह नामक परमागम समाप्त हुआ।

महार्घ्य

दोहा

मोक्षमार्ग के प्रपच से करु आत्म कल्याण।
मुक्ति प्राप्ति का लक्ष्य ले करु कर्म अवसान।।

वीरछंद

द्रव्य अशुद्ध नहीं होता है होती है पर्याय अशुद्ध।
यदि सम्यक् पुरुषार्थ करे तो यह भी हो जाती है शुद्ध।।
जल हल ज्योति स्वरूप आत्मा है त्रिकाल सत्यार्थ स्वरूप।
पर द्रव्यों से भिन्न सर्वथा पूर्ण अनादि अनत अनूप।।
ध्रुव चैतन्य विमल अविकारी चिदानद प्रभु महिमावान।
भावभासना हो जाते ही जिन शासन अनुभवन महान।।
आत्म ज्ञान बिन हुआ दिगबर साधु किन्तु दुख ही पाया।
नव ग्रैवक तक गया किन्तु निज भान नहीं उर में आया।।
पर द्रव्यों से दुर्गत पायी निज स्वद्रव्य बिन हे स्वामी।
सम्यक् ज्ञान दीपिका वाला ही प्रकाश दो प्रभुनामी।।
ज्ञान प्रकाश पुज का ही उत्कृष्ट तेज प्रभु करो प्रदान।
आत्म भान अक्षय अभेद दो ज्ञानानंदी शिवपुर भान।।
परम अखंडित तेज अनाकुल स्वपर प्रकाशक ज्योतिर्मय।
ज्ञान मेह घन उमड़े उर में निज परिणति से करूं प्रणय।।
प्राप्त स्वय शुद्धत्व करु मैं आत्म ज्योति जागे जगमग।
शुद्ध दृष्टि से निज को निरखूं जीतूं दुष्ट मोह अरि ठग।।
आस्वादन मैं करू ज्ञान रस हो तादात्म्य वृत्ति मेरी।
मुक्त स्वरूप त्रिकाली हूं मैं मुक्ति रमा मेरी चेरी।।
कुन्दकुन्द के कोषालय से बीन बीन कर लाया रत्न।
मोक्षमार्ग पर मैं भी आऊं सतत निरंतर करूं प्रयत्न।।

कुण्डलिया

ज्ञानी के तो पास है शुद्ध ज्ञान भंडार।
अज्ञानी अज्ञान से भ्रमता है संसार॥
भ्रमता है संसार चारगति पीड़ा पाता।
स्वर्गादिक से गिर नर हो नरकों में जाता॥
नर्कों में जा घोर वेदना पाता प्राणी।
मोहादिक यदि क्षीण नहीं तो कैसा ज्ञानी॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करू मोक्षमार्ग को जान।
भव समुद्र को पारकर पाऊ सुख निर्वाण॥
जिन प्रवचन की भक्ति से प्रेरित हू मैं आज।
निज स्वरूप में गुम हो बन जाऊ जिनराज॥

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय श्रुतस्कंध अन्तर्गत श्रीपंचास्तिकाय संग्रहे परमागमाय अर्घ्यं नि ।

जयमाला

छंद-नाटक

**अक्षरात्मक अनक्षरी भाषात्मक भावों के स्वामी।
अभाषात्मक प्रायोगिक वैश्रसिक नृपति अन्तर्यामी॥
शब्द वर्गणाए परिणमित हुआ करतीं दिव्य ध्वनि में।
भविजन हित में जिन उपदेश हुआ करता है जिन ध्वनि में॥
मुक्ति कामिनी कंत स्व चेतन चेतयिता लक्षण से पूर्ण।
अपनी महिमा से पाता है तत्क्षण शिव समुद्र आपूर्ण॥
रागद्वेष के झंझावात न इसको बाधक बनते हैं।
परिषह अरु उपसर्ग सभी ही इसको साधक बनते हैं॥
ऐसी महिमामयी अवस्था महासंयमी की होती।
मुक्तिवधू अपने वातायन से इसकी छवि को जोती॥**

नहीं राग रंजित परिणामों से ये विचलित होता है।
सर्वराग रश्मियां क्षीण कर नित्योद्योतित होता है।
[६८] पूर्णचंद्र सम सदा दमकता यथा ख्यात की महिमा पा।
स्वपर प्रकाशक सर्वज्ञत्व प्रगट करता निज गरिमा पा।।
महा मोह की महिमा अज्ञानी की दृढ़ थाती अज्ञान।
विपरीताभिनिवेश बुद्धि होने देती हैं कभी न ज्ञान।।
विविध भांति की कार्माण वर्गणा आस्रव से बंधती।
है निमित्त नैमित्तिक यह सबंध जीव में आ थमती।।
भेद बुद्धि की प्रसिद्धि पूर्वक जानो जड चेतन विज्ञान।
एक मात्र है मोक्ष प्रदाता वीतराग विज्ञान महान।।
असत् नहीं उत्पन्नित होता सत् का होता नहीं विनाश।
सदा द्रव्य द्रव्यत्व स्वगुण से करता अपना द्रव्य प्रकाश।।
पर परिणति की कजरारी बाकी चितवन तो है अति दुष्ट।
चेतन मन आकर्षित होकर मोह भाव करता है पुष्ट।।
निज परिणति की सीधी साधी छवि लखकर होता है रुष्ट।
निज स्वभाव परिणति बिन मैंने किया स्वयं को सदा निकृष्ट।।
है विरहित पच्चीस दोष से सम्यक् दर्शन जिसके पास।
वही जीव पुरुषार्थ शक्ति से मुक्ति भवन में करता वास।।
कुछ पुरुषार्थ हीन होते जो सम्यक् दर्शन देते छोड़।
पुद्गल अर्ध परावर्त्तन भ्रम फिर समकित लेते हैं जोड़।।
वेला मुक्ति प्राप्ति की आती जब होता निर्मल पुरुषार्थ।
निज पुरुषार्थ सफल होता है जब होता निश्चय भूतार्थ।।
निश्चय नय भूतार्थ आश्रय का है अनुपमेय विज्ञान।
परम पदार्थ आत्मा ही पाता परमार्थ रूप निर्वाण।।

सवैया

समकित बिना जप तप व्रत श्रम व्यर्थ।
भव वासना का सामान इन्हें जानिये।।
भाव भासना के बिना समकित नाही होय।
समकित का तो श्रम पूरा व्यर्थ मानिये।
तत्त्व अभ्यास बिना तत्त्व निर्णय नाहीं।
तत्त्व निर्णय कर निज में ही आनिये।।
तत्त्व ज्ञान बिना आत्म ज्ञान कहू होत नाहीं।
आत्म भान बिना मुक्ति मार्ग न पिछानिये।।

दोहा

मोक्षमार्ग को जानकर तत्क्षण करू प्रयाण।
निज अभेद रत्नत्रयी से पाऊ निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित द्वितीय श्रुतस्कधान्तर्गत श्री पचास्तिकाय परमागमाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि ।

छन्द-ताटक

कुन्द कुन्द के परमागम को हृदयगम कर हर्षाऊं।
शुद्ध ध्यान की शक्ति प्रगटकर केवल ज्ञानी बन जाऊ।।
शतशत सूर्य चंद्र लज्जित हों ऐसी दिव्य प्रभा पाऊ।
ऐसी कृपा करो प्रभु मुझ पर फिर न लौट भव में आऊ।।

इत्याशीर्वाद

समुच्चय महाअर्घ्य

छंद-गीतिका

रागरंजित भाव मेरे हृदय में ही जम गए।
भाव मेरे विभावों के जाल में ही थम गए।।
व्यर्थ बीता जा रहा है समय नर पर्याय का।
तिलाजलि परभाव को दे काम नर पर्याय का।।
विभावों की सचयी है मोह परिणति अति प्रसिद्ध।
विभावो की नष्टकर्त्ता शुद्ध परिणति सुप्रसिद्ध।।
मोह रागादिक विकारी भाव भव दुख स्रोत है।
आत्मभावी जीव दर्शन ज्ञान ओत प्रोत है।।
नही पर की अपेक्षा है सदा ही भावोत्पन्न।
शुद्ध सस्कृति प्राकृतिक है सहज है स्वयमोत्पन्न।।
एक रवि की रश्मियां है देखने मे ज्यो असख्य।
आत्मा के गुण अनंतानत हैं ये हैं न सख्य।।
पूर्णता का लक्ष्य बनता है त्रिकाली द्रव्य ध्रुव।
दृष्टि मे पर्याय है तो दृष्टि तेरी है अध्रुव।।
राग की ही रागिनी जब तक बजाएगा अरे।
गीत भी सम्यक्त्व के तू सुन न पाएगा अरे।।
ज्ञान नुपुर की मधुर ध्वनि गूंजती चहुं ओर है।
देख वह मिथ्यात्व भागा हुई समकित भोर है।।
चद्रमा की चांदनी आयी विमल संदेश ले।
दिव्य ध्वनि स्वर गूजते हैं ज्ञान का उपदेश ले।।
श्रुतस्कध प्रथम द्वितिय में है नहीं अतर तनिक।
देह जड़ पुद्गल हमारी विनश्वर है अति क्षणिक।।
मोह की धुंधली दशा में जीव होता अध ज्यों।
ज्ञान को यह भूल जाता जड़ समान अजीव त्यों।।
धर्म की अमराइयों का कहीं ओर न छोर है।
मात्र ज्ञाता दृष्टि हो तो प्राप्त होती भोर है।।

मुक्तिवधु की पायलों से रुनन झुन ध्वनि गूंजती।
परम पावन स्वचेतन के चरण सविनय पूजती।।
सिद्धपुर के द्वार पर है ज्ञान की ही पताका।
पूछती है नाम यह ध्रुव ज्ञान रूपी लता का।।
विरस रस बनता त्वरित ही आत्म अनुभव शक्ति से।
आज चेतन जुड़ गया है रत्नत्रय की भक्ति से।।
अस्तिकाय त्रिकाल व्यापी परिणमन करता सदा।
द्रव्य तो आधार है आधेय गुण पर्यय सदा।।
ऊर्ध्व हो या मध्य हो या अधो हो है सावयव।
कायत्वगुण इसमें प्रगट है तथा इसके स्व अवयव।।
प्रदेश प्रचयात्मकपने का काल में तो है अभाव।
अतएव काल कभी नहीं है अस्तिकाय यही स्वभाव।।
उत्पाद व्यय ध्रुव द्रव्य का लक्षण सदैव स्वभाव भूत।
द्रव्य ही पर्याय गुण का आश्रय है सत् स्वरूप।।
देखना मिथ्यात्व रूपी दृश्य को अब बंद कर।
देख ले सम्यक्त्व रूपी दृश्य को भव द्वंद हर।।
भाव अर्घ्य समर्पित पंचास्तिकाय महान को।
नष्ट कर चान्चल्य, पाऊँ द्रव्य के विज्ञान को।।

छंद-पंचचामर

छहों द्रव्य जानलिये अब स्वद्रव्य जान ले।
गुण अनंत का समुद्र आत्मा है मान ले।।
सर्व बहिर्भाव से यह त्रिकाल भिन्न है।
एक निजभाव से यह सदा अभिन्न है।।
भेद के विकल्प भी नाम को नहीं कहीं।
निर्विकल्प आत्मा में जल्प भी कहीं नहीं।।
कुन्द कुन्द का कथन प्रमाण कर प्रमाण कर।
महाअर्घ्य अब चढ़ा स्वज्ञान कर स्वज्ञान कर।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित ज्ञान प्रवाद पूर्वान्तर्गत दशम वस्तु तृतीय प्राभृत अन्तर्गत श्री पंचास्तिकाय परमागमाय महार्घ्यं नि ।

महा जयमाला

छंद-कुण्डलिया

[७०] आमंत्रण तो मिल गया अब चलना है शेष।
पूर्ण देश सयम लहू भाव द्रव्य मुनिवेश।।
भाव द्रव्य मुनिवेश मुक्ति पाने का साधन।
क्षपक श्रेणि पर चढ़ने का श्रम करू सुपावन।
निर्मल यथाख्यात चारित्र प्रकट हो क्षण क्षण।
बनू अयोगी सिद्धों ने भेजा आमंत्रण।।

वीरछंद

आत्मा का चैतन्य अनुविधायी परिणाम वही उपयोग।
चेतन का अनुसरण करे जो तथा करे अनुभव रसयोग।
जो विशेष का ग्रहण करे वह ज्ञान सदा ही ज्ञानुपयोग।
जो सामान्य ग्रहण करता है वह ही है दर्शन उपयोग।।
जो अभिन्न अपृथग्भूत है सदा सर्वदा ही शाश्वत।
निज अस्तित्व रचित है सम्यक् आत्मा से निष्पन्न स्वरत।।
चेतन का लक्षण जीवास्तिक पुद्गल का अजीवास्तिक।
गति में निमित्त धर्मास्तिक है अगति निमित्त अधर्मास्तिक।।
अवगाहन गुण आकाशास्तिक यही पाच तो है आस्तिक।
काल द्रव्य भी है त्रैकालिक किन्तु सदा ही तो नास्तिक।।
जरामरण क्षय करने को तो है दुर्बोध काल भी अल्प।
सरल उपाय यही है चेतन इस क्षण ही होजा अविकल्प।।
माना मैंने जल्प विजल्प तुझे घेरे हैं तीनों काल।
है स्वभाव तेरा अविकल्पी तीनों लोकों में सुविशाल।।
बना अनात्म स्वभाव सहित तू कर्मोदय से ही निष्पन्न।
आत्म स्वभावभूत होजा तू शुद्धभाव से हो सम्पन्न।।

पंचेन्द्रिय के विषयग्रहण से होती राग द्वेष उत्पत्ति।
मोहोदय में आगामी भव बन जाती है घोर विपत्ति।।
कर्मावृत से ढका हुआ तू यद्यपि स्वभावभाव से सिद्ध।
कर्मावृत को दूर हटा दे तो तू होगा परम विशुद्ध।।
अरे चतुर्विध भ्रमण नष्ट कर ज्ञान चेतना का बल ले।
कर्म चेतना पूरी क्षयकर त्रिविध रत्न का सबल ले।।
कर्म सर्व स्कध जन्य हैं तू स्कंध विहीन महान।
कर्मो को तो ज्ञान नहीं है तुझमें तो है पूरा ज्ञान।।
तू चाहे तो पल भर में कर सकता कर्मो का अवसान।
इस क्षण ही तू पा सकता है परम पवित्र महा निर्वाण।।
समय आवली निमेष काष्ठा विपल तथा पल कला घड़ी।
अहो रात्र अरु मास पक्ष ऋतु अयन वर्ष यह काल लड़ी।।
यह व्यवहार सुकाल पराश्रित ज्योतिष पर ही हे आश्रित।
निश्चय काल परावर्त्तन मे है निमित्त जब हो स्वाश्रित।।
काल द्रव्य की पर्यायें पर के द्वारा मापी जातीं।
पूर्व हो कि पल्योपम सागर सभी पराश्रित कहलातीं।।
पुद्‌गल से जो होता आप वही व्यवहार काल जानो।
पुद्‌गलाश्रित कहलाता है यह उपचार सदा मानो।।
चिदानदरूपी स्वकाल ही है जिसका स्वभाव वह जीव।
जो सम्यक् श्रद्धान न करता वह तो मानो मूढ़ अजीव।।
अज्ञानी संसार दशा वाला आत्मा ही है सोपाधि।
ज्ञानी संसारी आत्मा का तो स्वरूप ही है निरुपाधि।।
आत्म स्वरूप समझना होगा ज्यों का त्यों शाश्वत सम्यक्।
तभी सिद्ध पद की उपलब्धि सहज होगी जों आवश्यक।।

छंद-गीतिका

भव अनंत अभाव करने का उपाय महा प्रसिद्ध।
एक चेतन आत्मा का आश्रय हो सुप्रसिद्ध॥
शास्त्र का तात्पर्य क्या है सूत्र का तात्पर्य क्या।
मुक्तिपद तत्काल मिलता तो अरे आश्चर्य क्या॥
भव विषय विष वृक्ष के आमोद से यह अतरग।
हुआ द्रोहित निजतर से व्यथित है संतप्त अग॥
राग रूपी अग्नि से है दह्यमान अनादि से।
परम सयम प्राप्ति का उद्यम किया न अनादि से॥
दुखी अन्तर्दाह से है सुख नहीं जाना कभी।
वीतरागी तरंगो से दूर है चेतन अभी॥
भयंकर भव जलोदधि मे राग द्वेषो के मगर।
खा रहे हैं इसे प्रतिपल और यह है बेखबर॥
पारमेश्वर दीक्षा होती न क्षय मिथ्यात्व बिन।
संयमादिक व्यर्थ ही होते रहे सम्यक्त्व बिन॥
पारमेश्वर शास्त्र का स्वाध्याय ही हित रूप है।
सारभूत पदार्थ तेरा आत्मा चिद्रूप है॥

छद-कुन्डलिया

रागी अपने राग में प्रतिपल रहता चूर।
मोह भाव में नित्यरत रहता निज से दूर॥
रहता निज से दूर न जिनवाणी सुनता है।
अतकाल यह कर मलमल कर सिर धुनता है॥
कभी सुअवसर पाता तो बनता गृह-त्यागी।
मोह, द्वेष आदिक से पीड़ित रहता रागी॥

उद-मानव

शत सूर्य रश्मिया पूजें जिनवर के चरण मनोहर।
चद्रिका चद्र की जूझे जिनवर पद तलमें सादर।।
क्षीरोदधि चरण पखारे प्रभु तीर्थकर के अनुपम।
सावन भादों की वर्षा ऋतु बरसे रिमझिम रिमझिम।।
मैं क्रोधभाव से दूषित कब क्षमा स्वगुण लाऊंगा।
समभावी संयम द्वारा कब मुक्ति मार्ग पाऊंगा।।
म मान कषायी पूरा गुण विनय रहित हूं दभी।
ऐसा अवसर कब पाऊं बन जाऊं मानस्तभी।।
मैं मायाचारी पूरा ऋजुता से विरहित कपटी।
कैसे पाऊ ऋजुता को पर परिणति मुझ पर झपटी।
मैं लोभी हू भोगों का शुचिता को क्या पहचानू।
आत्मत्व भावना के बिन कसे स्वरूप निज जानू।।
जिनवाणी निज जननी मम मेरा पालन करती ह।
शिवसुख की सुरुचि जगाकर मेरा लालन करती ह।।
गभीर ज्ञान मुद्रा का धारी मैं भी बन जाऊ।
अपने स्वभाव के बल से मैं मुक्ति रमा को पाऊं।।
निर्दोष बनूगा अब तो ससार दोष को क्षयकर।
ससार विजेता होऊं सारे विभाव रिपु जयकर।।
चित्रावलि पूर्वभवो की अभिनव संदेश सुनाए।
यदि दृष्टि मुक्त हो प्राणी सुख एक समय में आए।।
सम्पूर्ण शक्ति का बल ले निश्चय का झूला झूले।
परमार्थ भावना जागे भूतार्थ भाव मे फूले।।
सुर बालाओं की पायल के नूपुर धूम मचाएं।

सुर पुष्प वृष्टि हो नभ से धरती का आगन नाचे।
नभ मंडल दिव्य प्रभा से भामंडल जैसा राचे।।
गांधार ऋषभ स्वर गूजे धैवत निषाद इठलाएं।
मेरी स्वभाव परिणति भी शिव प्रांगण में इतराए।।
[७२] समभावी अनुभव रसकी थोड़ी ठडाई पीलूं।
शक्तिया अनंत प्रगटकर अपने स्वभाव में जीलू।।
सविकार भाव के द्वारा भ्रमता हूं चारों गति में।
अविकार भाव द्वारा ही जाऊगा पचम गति में।।
गुण ग्राहकता का गुण भी मैं भूल गया हूं स्वामी।
दुर्गुण से दूषित हूं मैं गुण ग्राहकता दो नामी।।
षड आवश्यक से उत्तम पाया है इक आवश्यक।
परिपूर्ण दशा प्रगटाने वाला है निज आवश्यक।।
प्रतिक्रमण तथा प्रायश्चित की रही न अब आवश्यकता।
मैं मुक्ति मार्ग पर धीरे चुपचाप चरण निज धरता।।
दृढ नींव आज पायी है निज मुक्ति भवन की इसने।
सोया था भव निद्रा में फिर आज जगाया किसने।।
पूर्णिमा शरद की धवलोज्ज्वल आभा से नहलाती।
फागुन की मदमाती ऋतु बहुरंगी होली गाती।।
सिद्धों में चर्चा होती अब कौन यहां आएगा।
निज मुक्ति वधू से परिणय करके शिव सुख पाएगा।।
जो सिद्धों को ध्याएगा वह स्वर्ग सौख्य पाएगा।
जो निज को ही ध्याएगा वह मुक्ति सौख्य लाएगा।।
रागादिभाव को जीतूं अनुराग त्याग दूं परका।
विश्वास जगाऊं निज का पाऊँ स्वभाव निज घर का।।

बैशाख ज्येष्ठ की गरमी होती अषाढ़ में ज्यों कम।
मोहादिभाव की गरमी समकित सन्मुख होती कम।।
ज्यों सावन भादों का जल पल पल शीतलता लाता।
त्यों सम्यक् दर्शन पावन चेतन को शान्ति प्रदाता।।
चारित्र यथाख्याती के सागर की लहरें आती।
रत्नत्रय की महिमामय गरिमा ही उर को भाती।।
मोहादि शत्रु को क्षय कर चारित्र मोह जय करता।
कैवल्य ज्ञान रस पीकर ही जीवन मुक्त विचरता।।
इस समकित सावन का जल चेतयिता पीता जीभर।
फिर ज्ञान तरगों द्वारा करता है नव्हन हृदयभर।।
शिव शान्ति सहज ही उसके मस्तक को चमकाती है।
आनद चद्रिका आभा चेतन को दमकाती है।।
सद्गुरु सिरहाने बैठे मृदु आँज रहे ज्ञानांजन।
खुल गए पटल ज्ञानी के काटेगा भव के बधन।।
सिद्धों को वदन करके अरहत स्वछवि लखता है।
अनुभव सागर के तटपर रस स्वानुभूति चखता है।।
निज परिणति से ही करता यह प्रेमालाप सुहाना।
पर चर्चा मुक्त हुआ है इसको तो निज पद पाना।।
समकित की कोमल कलियां हैं वज्र समान निजतर।
चारित्र ज्ञान गंगाजल झर रहा हृदय से झर झर।।
आताप चतुर्गति का तो कर्पूर समान उड़ा है।
चेतन अनत गुण मडित परिणति से स्वयं जुड़ा है।।
दुन्दुभियां सिद्धपुरी की स्वयमेव बज रही झन झन।
मिल गई मुक्ति रमणी तो कट गए कर्म के बंधन।।

अब चेतन ही चेतन है चेतना ज्ञान है लक्षण।
त्रिभुवन से सदा निराला त्रिभुवन से श्रेष्ठ विलक्षण।।
आत्मोत्पन्न शिवसुख का सागर उर में लहराता।
आनंद अतीन्द्रिय धारा निज अंतरंग में लाता।।
इस रमण उदधि स्वयंभू सममोह उदधि को जीतूं।
हिमगिरि के उच्च शिखर सम रागों से पूरा रीतूं।।
वैशाखी अरुणावलियां जिन तेज प्रखर दर्शातीं।
मद भरी बसंती ऋतु भी सादर चरणों में आती।।
चेतन की चचलता ने ही चंचल इसे बनाया।
चारों गति में भ्रम आया पर चैन न पलभर पाया।।
आत्मानुभूति की वंशी ध्वनि इसको नहीं सुहाई।
बांसुरी बजी समकित की तो इसमें जाग्रति आई।।
अब ये ही त्रिभुवन पति है कुछ दिन में बनने वाला।
ज्ञायक स्वरूप पाया है महिमामय महा निराला।।

रोला

गुण रत्नों की रत्नावलिया दीपावलि सम।
चमक चमक कर मुक्ति प्राप्ति का करती उद्यम।।
भव वन का अंधियारा होता दूर निमिष में।
अब न रही है शक्ति शेष भीषण भव विष में।।
भव रस पी निष्प्राण हुआ था निमिष मात्र में।
मुक्तिवधू रस बरसाती अब योग्य पात्र में।।
स्वर्ण पात्र मे दुग्ध सिंहनी का ठहरे ज्यों।
आत्मतत्त्व में ज्ञान स्वभावी रस बहता त्यों।।

छंद - समान सवैया

समकित का यदि योगदान हो तो संयम तरु फलता ही है।
मोक्ष मार्ग निष्कंटक होता सिद्धत्व पद उर खिलता ही है।।
संयम धारी जीव मुक्तिसुख के अधिकारी होते ही हैं।
यथाख्यात चारित्र पूर्ण कर भव सागर दुख खोते ही हैं।।
मुक्तिमार्ग के दृश्य सदा नयनाभिराम तो होते ही हैं।
ज्ञानी अपनी ज्ञान शक्ति से सकल कर्म मल धोते ही हैं।।
निज परिणति भी निज स्वभाव का बल पाकर अति मुसकाती है।
पर परिणति तो अपने छवि को बचा कहीं भी उड़ जाती है।।
चेतन मन हर्षित होता है ज्ञानी बन होता है पुलकित।
ज्ञानामृत रस पान दिव्य कर होता है स्वभाव से भूषित।।

छंद

कभी किसी को न तुम सताओ कभी न बोलो असत्यवाणी।
बिना ही आज्ञा न कुछ भी लो तुम कुशील कामग्नि को बुझाओ।।
रहित परिग्रह बनो अनिच्छुक तो तुम बनोगे स्वतः अकिंचन।
हृदय में समकित सुदृढ़ करो तम निजात्मा की ही प्रीत पाओ।।
विभाव सारे ही जय करो तुम स्वभाव को ही हृदय सजालो।
निजात्मा का ही ध्यान करके स्ववाद्य समकित के ही बजाओ।।
विभाव परिणति नशे में धुत है यही समय है विनाश कर दो।
स्वभाव परिणति के संग नाचो सदा ही अनुभव के गीत गाओ।
ये चक्र कर्मों का नष्ट कर दो जो मोह मद से भरा हुआ है।
स्वरूप अपने को ही संवारो स्वभाव अपने को ही जगाओ।।
असंयमों की कुरुचि को जीतो प्रमाद जीतो कषाय जीतो।
त्रियोग को भी विजय करो तुम स्वयं के भीतर ही अब समाओ।।
सुरम्य हो तुम प्रणम्य हो तुम सकल जगत से हो वन्दनीयम।
स्वरूप को ही नमन करो तुम बिना रुके ही शिवत्व को पाओ।।

रोला

पर परिणति भामिनी विभावों से पलती है।
चेतन मन की दृढ़ता लखकर यह टलती है।।
निर्द्वंदी चेतन स्वभाव जब अपना पाता।
परपरा से धीरे धीरे शिव सुख लाता।।
मोहादिक भावों का सरगम दुखदायी है।
ज्ञानात्मक भावों का सरगम सुखदायी है।।
ऋषभ षड्ज सातोंस्वर में निज परिणति गाती।
ज्ञान सूर्य मे निज चेतन को अर्घ्य चढ़ाती।।

छद नाराच

समकित प्रभाव प्राप्त करके मोक्ष जाइये।
आनद अनीन्द्रिय का ही सिन्धु पाइये।।
सिद्धत्व शौर्य निज मे भव दुख मिटाइये।
ज्ञानाब्धि की तरगे प्रतिपल सजाइये।।

दोहा

पूर्ण अर्घ्य अर्पित करू कर विधान सम्पूर्ण।
मोक्षमार्ग को प्राप्तकर करू कर्म वसु चूर्ण।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञ प्ररूपित प्रथम द्वितीय श्रुतस्कध स्वरूप ज्ञान प्रवादस्य दशम वस्तु तृतीय गा अन्तर्गत श्री पचास्तिकाय परमागमाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि ।

आशीर्वाद

छद-ताटक

मेघमल्हार कौन गाता है जैसे आया हो सावन।
राग श्री बजाता कोई निज परिणति की मन भावन।।
पंचम स्वर में कोकिल कूकी निष्कंटक पथ आज मिला।
केवल ज्ञान दूज को पाकर बंद हृदय का कमल खिला।।
भव दुखक्षय हो कर्म नाश हों मुक्ति सौख्य पाऊं नामी।
इस विधान का यह फल पाऊं विनय सुनो अन्तर्यामी।।

शान्ति प्रार्थना

छन्द-हरि गीतिका

शान्ति की आकांक्षा ले विनय करता हूं प्रभो।
पूर्ण शान्त प्रदान कर दो प्रार्थना यह है विभो।।
आज तक भटका अनंतानंत भव कर दिये व्यर्थ।
ज्ञान सम्यक् झेलने में हो नहीं पाया समर्थ।।
महा भाग्य उदय हुआ तो आपकी पायी शरण।
भवोदधि से पार कर दो हे प्रभो तारण तरण।।
सकल जग में शान्ति हो प्रभु नहीं ईर्षा द्वेष हो।
शान्ति का साम्राज्य हो प्रभु शान्ति का परिवेश हो।।
प्राप्त सम्यक् बोधि हो प्रभु हो समाधि मरण परम।
सफल इस पर्याय में हो नाथ मेरा पराक्रम।।
प्राप्त जिनगुण करू स्वामी क्रान्ति ऐसी कीजिये।
कर्म क्षय हों दुक्ख क्षय हों शाश्वत सुख दीजिये।।

पुष्पांजलि क्षिपामि

छंद हरिगीतिका

भूलसारी क्षमा कर दो ज्ञान गुण धारी बनू।
राग द्वेष विनाश कर दो नाथ अविकारी बनू।।
सजग हो समभाव से शुद्धात्म का चिन्तन करू।
निज स्वरूप प्रकाश पाऊ कर्म के बंधन हरूं।।
अब न हो प्रभु भूल मुझसे कृपा ऐसी कीजिये।
मैं अनाथ दुखी सदा से शरण में ले लीजिये।।
आपके पथ पर चलूं मैं नाथ ऐसी शक्ति दो।
ज्ञान सागर में नहाऊं रत्न त्रय की भक्ति दो।।

पुष्पांजलि क्षिपामि

जाप्य मंत्र. ॐ ह्रीं श्री परमागम पचास्तिकायाय नम

जो तू आतम ध्यान चित्त धरतो

यह दुर्लभ मनुष्य भव रेती, छिन में अरे सुधरतो ॥
जो तू आतम ध्यान चित्त धरतो ॥
विषय कषाय कीच से बाहर, ले वैराग्य निकरतो ।
आपा पर को भेद जानती, सम्यक निर्णय करतो ॥
जो तू आतम ध्यान चित्त धरतो ॥
पच महाव्रत धारण करके, जो सयम आदरतो ।
रत्नत्रय की नाव पैठकर, जल्दी पार उतरतो ॥
जो तू आतम ध्यान चित्त धरतो ॥
ज्ञानपवन से अष्ट कर्म रज, नेक समय में हरतो ।
सादि अनत समाधि प्राप्त कर सुख अनत तू भरतो ॥
जो तू आतम ध्यान चित्त धरतो ॥

निज आतम सिंगार सबेरे

समकित मुकुट, ज्ञान को कुन्डल, कगन चारित केरे ॥
निज आतम सिंगार सबेरे ॥
सयम तिलक गार सामायिक, फिर निज रूप निहेर ।
निज दर्पण में निज को देखे, पर की ओर न हेरे ॥
निज आतम सिंगार सबेरे ॥
निज को दर्शन निज को पूजन, निज को जाप जपेरे ।
निज चिन्तन निज मनन मिटावत, जनम जनम के फेरे ॥
निज आतम सिंगार सबेरे ॥

प्रभु जी मैने लाखों यतन करे

सम्यक दर्शन के बिन मैने भव के भ्रमण करे ॥
प्रभु जी मैने लाखो यतन करे ॥
तत्त्व चिन्तवन कबहुं न कीनो, शास्त्र हु श्रवण करे ।
एक बार रुचि पूर्वक नाही, उर जिन वचन धरे ॥
प्रभु जी मैने लाखो यतन करे ॥
कोचिक वर्षों तक प्रभु मैंने तप भी गहन करे ।
बिन त्रिगुप्ति के स्वामी, मैंने कर्म न गनन करे ॥
प्रभु जी मैने लाखो यतन करे ॥
क्रिया काण्ड में धर्म मानकर, पर के भजन करे ।
निजस्वरूप को कियो न चिन्तन, भव दुख सहन करे ॥
प्रभु जी मैने लाखो यतन करे ॥

ज्ञान की निर्मल ज्योति जली

तत्त्व प्रतीति होत ही सगरी मिथ्या बुद्धि टली ॥
ज्ञान की निर्मल ज्योति जली ॥
अनतानुबधई की माया मे निज बुद्धि छली ।
दृष्टि बदलते ही प्रभु मेरी दिशा आज बदली ॥
ज्ञान की निर्मल ज्योति जली ॥
निज परिणति रसपान करत ही मन की खिली कली ।
मिथ्या भ्राति मिटी क्षण भर में जो थी सदा पली ॥
ज्ञान की निर्मल ज्योति जली ॥

भजन

(१)

भेद ज्ञान बिजली जब चमके तब तुम भेद ज्ञान कर लो।
सम्यक् श्रद्धा पवन चले जब तब तुम आत्म भान कर लो।।
जप तप व्रत का कुटुम्ब सारा गीत तुम्हारे गाएगा।
संयम के रथ पर सवार हो कर्मो की द्युति को हर लो।
यथाख्यात छवि तुम पाओगे सर्वकषाये होंगी क्षीण।
निमिष मात्र में निजबल द्वारा ध्रुव कैवल्य ज्ञान वर लो।।
मुक्ति वधू पुष्पों की माला गूथ गूंथ कर लायी है
लो सिद्धत्व सुगुण की महिमा अब तो आत्म ध्यान कर लो।।

***

(२)

संचिता भव वासना का अत करना चाहिये।
अब कषायी भाव को सम्पूर्ण हरना चाहिये।।
जानकर सामान्य छह गु[illegible] ध्यान अपना कीजिये।
चार जो कि अ[illegible] हैं उंनको हृदय में लीजिये।
शुद्ध षट[illegible]रक सदा ही प्राप्त करना चाहिये।।
[illegible] सामग्री यही शिवमार्ग पर लेकर चलो।
ज्ञान की ही भावना ले कर्म कालुषता दलो।
अब हमे सिद्धत्व की ही प्राप्ति करना चाहिये।।

***

(३)

रंच भी कषाय भाव मत करो जी।
पूर्ण अकषाय भाव उर धरो जी।।
क्रोधमान माया लोभ जीतो तुम अभी
राग द्वेष भावना से रीतो तुम अभी।
दृष्टि तो त्रिकाली ध्रुव पर धरो जी।।

***

(४)

सिद्ध है प्रसिद्ध है विशुद्ध है महान है।
किन्तु संसार में बना दुखों की खान है।।
क्षुधारोग काम रोग ही दुखों का मूल है।
मोक्षमार्ग में यही महान क्रूर शूल है।।
पूजन के अष्टकों में यही दो प्रधान हैं।
शेष छहों गुणमयी महान हैं महान हैं।।
जीव षटकाय इन दो से परेशान है।
कर्म फल चेतना दुख भरा वितान है।।
ये नहीं तो जगत में दुख कभी होगा नहीं।
चार गति दुखमयी भ्रमण होगा नहीं
जीत जो इन्हें चुके वे ही भगवान हैं।
ज्ञानवान ध्यान वान अनंत गुणवान हैं।।

***

(११)

बड़े उत्साह से रखा है मैंने पहिला चरण।
मुक्ति के मार्ग पै आया हूं ले जिनराज शरण।।
आज तक भटका था मिथ्यात्व के अंधेरे में।
यत्न करके भी न आया कभी उजेरे में।
कैसे निज को मैं जानता बिना स्वरूपाचरण।।
तत्त्व निर्णय किया तो ज्ञान हृदय में आया।
मेरा शुद्धात्म तत्त्व आज मुझे दर्शाया।
लेके संयम लिया है आज सम्यक्त्वाचरण।।
मुक्ति का मार्ग सरल मैंने आज पाया है
पूर्ण सिद्धत्वं प्राप्ति का ही लक्ष भाया है
मैं ही सिद्धात्मा हूं सर्वदा शिव सौख्य धरण।।

***

(१२)

मुनिपद अंगीकार किए बिन मुक्ति मार्ग है अति दुर्लभ।
निज परिचय बिन सम्यक् दर्शन महा कठिन है नहीं सुलभ।।
चिर अनादि से है व्यवहार किन्तु वह है व्यवहाराभास।
जो अनादि से बिन निश्चय चारित वह है निश्चय आभास
दोनों का सुमेल चाहिये तब कल्याण सहज होगा।
निश्चय पूर्वक ही व्यवहार सुसम्यक् हो तो सुख होगा।।

***

(१३)

स्वभाव में ही रहो मत कोई विभाव करो।
राग द्वेषादि का तुम पूर्णतः अभाव करो।।
मोह की छांव से तुम शीघ्र दूर हो जाओ।
सर्प मिथ्यात्व कुचल ज्ञान का ही भाव करो।।
शुद्ध सम्यक्त्व की पूंजी बहुत बड़ी जानो।
ज्ञान चारित्र से तुम आत्म का शृंगार करो ।।
मुक्ति का मार्ग यही शाश्वत चिरंतन है ।
सिद्ध पद प्राप्ति का तो शीघ्र पुरुषार्थ करो ।।

***

(१४)

फिर बजी मुरलिया समकित की।
समकित की सबके हित की।।
पहिले बजी नहीं सुन पायी।
आयु व्यर्थ में पूर्ण गंवायी।।
दृष्टि नहीं निज निश्चित की।
आज सुनी मृदु ध्वनि समकित की।।
सुधि आयी अपनी परिणति की।
है धन्य धन्य निज की मति की।।

***

(४१)

रीति अनुभव की न्यारी।

निज स्वरूप में जमने की जब होवे तैयारी।

पर से विमुख स्वभावोन्मुख हो जो शिव सुखकारी।

पाप पुण्य आश्रव विभावतज भव भव दुखकारी।

हो एकाग्र सकल चिंता तज ध्यान धरो धारी।

निज में ही रस निज में ही जय यही रीति सारी ॥

(४२)

गगन के ऊपर जाना है।

शाश्वत सिद्धि शिलासिहासन मुझको पाना है।

निज परिणति जो रूठ गई है उसे मनाना है।

पर परिणति कुलटा दासी को दूर भगाना है ॥

निज स्वरूप की ओर निरतर दृष्टि लगाना है।

शुद्ध धर्म सोपान प्राप्त कर शिव सुख पाना है ॥

(४३)

प्रभु जी मेरी खोटी बान पड़ी

काम क्रोध मद मोह लोभ में जावत घड़ी घड़ी।

निज से ही कर माया चोरी दौड़त तड़ी तड़ी।

याही से मेरी निजात्मा भवदधि बीच पड़ी।

नर भव में सयम तट पायी तो दूर ही खड़ी

या हत्यारी पर परिणति पे मेरी दृष्टि पड़ी।

कब निज परिणति मिलि मैं मोकू पाऊं ज्ञान घड़ी ॥

तुव दर्शन पाते ही पायी दर्शन ज्ञान झड़ी

आत्म तत्व निर्णय करते ही शिव सोपान चढ़ी ॥

(३८)

सम्यक ज्ञान दूज को चदा ।

एक बेर जब प्रकट भयो तो होत कभी नहि मंदा ।

ज्यों ज्यों ज्ञानी ध्यान करत हैं त्यों त्यों बढ़त अमंदा ।

केवल ज्ञान प्रकट जब होवे मिटे जगत को धदा ।।

परमसिद्धि पद जब दरसाये कटे कर्म को फदा ।

पूर्ण ज्ञान रवि उदय होत ही जीव बने सुख कदा ।।

(३९)

सम्यक चारित सुख को सागर ।

शाश्वत ध्रुव स्वरूप को साथी साम्यभाव रवि परम उजागर।

चिदानद चैतन्य ज्ञान मय सुख आपूर्ण शुद्ध निज गागर ।।

मोह क्षोभ विरहित ब्रतधारी वाह्यान्तर सयम गुण आगर ।।

पूर्ण शुद्ध शिवमय सुख पदलों पावन मुक्ति प्रिया नर नागर ।।

तेरह विधि चारित्र सवारो अनुपम अविकल सहज दिवाकर।

नित्य निरजन निज स्वभाव श्री परमानद पूर्ण रत्नाकर ।।

(४०)

निज शिवपुर देस दिखाव रसिया

निज शिवपुर में मोक्ष लक्ष्मी, जल्दी मोह मिलाव रसिया ।

निज अतर में सुख को सागर दो दो घूंट पियाव रसिया ।।

सिद्ध शिलासिंहासन पावन दो पल मोहे बिठाव रसिया ।

अब प्रभु शरण तुम्हारी आयो मोकू मोक्ष पठाव रसिया ।।

(३४)

जय शुद्धातम मंगल कारिणि।

ध्रुव चैतन्य पुंज शिव सुखमय अविनाशी अनुपम गुणधारिणि।

सम्यक् दर्शनज्ञान चरितमय रत्नत्रय तरणी भव तारिणि॥

परम धर्ममय परम शक्तिमय, आठों कर्मकलंक निवारिणि॥

दर्श ज्ञान बल सुख अनंतमय एक अबद्ध शुद्ध अवतारिणि।

निज स्वभाव मय भव अभावमय निज स्वरूप में सदा बिहारिणि॥

निज परिणति अनुभूति प्रभामय निज संगीत अमर गुंजारिणि।

नित्य निरंजन भय दुखभंजन शिव सुख कारणविपति विदारिणि॥

***

(३५)

सम्प्रति ज्ञान वार्ता करके निर्णय करो निजात्म का।

द्रव्य दृष्टि के द्वारा निरखो वैभव निज शुद्धात्म का॥

दर्शन ज्ञान स्वरूप अरूपी बहिर्भाव से रहित सदा।

एक शुद्ध परिपूर्ण सौख्यमय अनुभव सागर सहित सदा।

यही आश्रय योग्य त्रिकाली है भावी सिद्धात्मा॥

राग द्वेष मोहादि विकारी भावमयी कुविभाव नहीं,

शुद्ध शुद्ध है पूर्ण पूर्ण है ध्रुव का कभी अभाव नहीं,

महिमामयी अनंतगुणमयी ये ही है परमात्मा॥

***

(३६)

मोह के पास जो अंधेरा है वह अंधेरा विनाश का घर है।
ज्ञान के पास जो उजेरा है वह उजेरा प्रकाश का घर है।।
तूने आंचल अंधरे का पकड़ा इसलिए चारगति में भ्रमता है।
तूने आंचल न ज्ञान का पकड़ा इसलिए तुझमें नहीं समता है।।
तू अनादि से ही विकारी है किन्तु अविकार शुद्ध का घर है।
मोह के जाल में ही रहता है इसलिए दुख अनंत सहता है।
मूल में ही भूल है पगले सदा परभाव में ही बहता है।।
मूल की भूल निकल जाए तोफिर तो कैवल्य ज्ञान का घर है।।
शक्तियां भी अनंत हैं तुझमें गुण भी तो हैं अनंतानंत तुझमें।
द्रव्य अपने पै दृष्टि डाले तो कितने कैवल्य भरे हैं तुझमें
राग द्वेषों से दूर होजा तू वीतरागी स्वरूप भीतर है ।।

***

(३७)

सम्यक् दर्शन चिंतामणि सम।

जब प्रगटत है सुख उपजत है अनंतानुबंधी होवत कम।
स्वपर प्रकाशक भव भय नाशक नाश करत हैं सब मिथ्या तम।
विषय भोग आकांक्षा मेटत दूर करते हैं सगरो विभ्रम ।।
पर परिणति को महल गिरावे निज परिणति जब नाचत छम छम।
दुर्लभ नरतन जिन कुल जिन श्रुत उत्तरोत्तर है दुर्लभतम ।।
मोक्ष मार्ग पर चलत निरंतर चेतन निज स्वभाव में थम थम ।।

राजमल पवैया रचित कुछ पुस्तकें

१ चतुर्विंशति तीर्थंकर विधान
२ तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्र विधान
३ सम्मेद शिखर विधान
४ बृहद् इन्द्रध्वज मंडल विधान
५. शान्ति विधान
६ विद्यमान बीस तीर्थंकर विधान
७ चौसठ ऋद्धि विधान
८ पंचकल्याणक विधान
९ नंदीश्वर विधान
१० जिनगुण संपत्ति विधान
११ तीर्थंकर महिमा विधान
१२. याग मंडल विधान
१३ पंच परमेष्ठी विधान
१४ पंच कल्याण विधान
१५ कर्म दहन विधान
१६ जिनसहस्रनाम विधान
१७ कल्पद्रुम विधान
१८ गणधर वलय ऋषिमंडल विधान
१९ जैन पूजांजलि
२० तीर्थ क्षेत्र पूजांजलि
२१ श्रुत स्कंध विधान
२२ पूजन किरण
२३ पूजन पुष्प
२४ पूजन दीपिका
२५ पूजन ज्योति
२६ मंगल पुष्प प्रथम, द्वितीय
२७ मंगल पुष्प द्वितीय
२८ मंगल पुष्प तृतीय
२९ समकित तरंग
३० अपूर्व अवसर
३१ द्वादश भावना
३२ आदिनाथ भरत बाहुबलि पूजन
३३ आदिनाथ शान्तिनाथ
३४ शान्ति कुन्थु अरनाथ
३५ शान्ति पार्श्व महावीर
३६ नेमि पार्श्वनाथ महावीर
३७ गोम्मटेश्वर बाहुबलि
३८ भगवान महावीर
३९ जैन धर्म सार्व धर्म
४० वीरों का धर्म
४१ जन मंगल कलश
४२ जीवन दान
४३ सिद्धचक्र वंदना
४४ तीनलोक तीर्थ यात्रा गीत
४५ भक्तामर पद्यानुवाद
४६. चतुर्विंशति स्तोत्र
४७ जिनेन्द्र चालीसा संग्रह
४८ चतुर्दश भक्ति
४९ जिन सहस्रनाम हिन्दी
५० जिन वंदना
५१ मुनि वन्दना
५२ आत्म वन्दना
५३. समय
५४ अनुभव
५५ परमब्रह्म
५६ सैंतालीस शक्ति विधान आदि
५७ कुन्द कुन्द महिमा
५८ कुन्दकुन्द वाणी
५९ इन्द्रध्वज विधान
६० अर्हच्चिदास्मि
६१ कुन्दकुन्द वचनामृत
६२ श्री कल्पद्रुम मंडल विधान
६३ तत्त्वार्थ सूत्र विधान
६४. दश लक्षण विधान
६५ प्रवचन सार विधान
६६ नियम सार विधान
६७ अष्ट पाहुड़ विधान